मुद्रक—
बजरंगबली 'विशारद'
श्रीसीताराम प्रेस, जालपादेवी रोड, बनारस।

विषय-सूची

४— Food

५— आहार-शास्त्र

६— भोजन और स्वास्थ्य

इस पुस्तक में अनेक स्थानों पर कुछ नाम अंगरेज़ी के ज्यों के त्यों देने पड़े हैं। उनका हिन्दी रूपान्तर न हो सकने की अवस्था में ऐसा करना पड़ा है। मैं चाहती थी कि अँगरेज़ी नामों के स्थान पर हिन्दी नामों का ही उल्लेख किया जाय, इसीलिए खरीद कर ऊपर लिखी हुई दो हिन्दी की पुस्तकों से सहायता लेने का मैंने प्रयत्न किया। परन्तु जैसा चाहती थी, वैसा कर न सकी।

'आहार और आरोग्य' का विषय महत्त्वपूर्ण है। यदि इस विषय में, इस पुस्तक से पाठकों और पाठिकाओं को कुछ लाभ पहुँच सका तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूँगी।

कमलिनी कार्यालय,
कानपुर।
१५ जून, १९४८

ज्योतिर्मयी ठाकुर

बहिनों को भी उसी लाभ के उठाने का अवसर मिले, जिसे मैंने प्राप्त किया है। इस बात को मैं जानती हूँ कि मेरे पास इसकी जो कुछ जानकारी है, वह सब अधिकारी विद्वानों के लेखों से ही, कुछ प्राप्त हो सकी है। इसलिए वह मेरी सम्पत्ति के रूप में नहीं है। जीवन की इतनी मूल्यवान् वस्तु दूसरों से प्राप्त करके, मैं उसी अवस्था में उससे उऋण हो सकती हूँ, जब मैं उसे ज्यों-का-त्यों दूसरों के पास पहुँचाने की चेष्टा करूँ और उसमें सफल हो सकूँ। इसी अभिप्राय से इसके संबंध में कुछ लिखने की बात मै सोच रही थी।

इसी बीच में साहित्य सेवक-कार्यालय, बनारस के सचालक श्रीयुत बाबू बजरंगबली गुप्त से मुझसे बातें हुई और उन्होंने इस विषय पर एक अच्छी पुस्तक लिखने के लिए मुझसे अनुरोध किया। मैं तो चाहती ही थी, गुप्तजी के परामर्श को मैंने स्वीकार कर लिया। उन्हीं के अनुरोध और परामर्श के परिणामस्वरूप यह पुस्तक 'आहार और आरोग्य' लिखी गई है।

इस पुस्तक के लिखने में जिन कठिनाइयों का मुझे सामना करना पड़ा है, उनका पहले से मुझे कुछ अनुभव न था। जितनी सरलता के साथ इस विषय की पुस्तक लिख डालने की बात मैंने सोच डाली थी, उतनी आसानी से यह पुस्तक लिखी नहीं गयी। इसका कारण बहुत अंशों में, मेरी निर्बलता है। इसीलिए समय भी अधिक लगा और परिश्रम भी विशेष करना पड़ा। इतना होने पर भी मैंने 'आहार और आरोग्य' को उसके विषय में काम की पुस्तक बनाने की चेष्टा की है। इस चेष्टा में जिन पुस्तकों से मैंने सहायता ली है, उनके लेखकों के प्रति मैं कृतज्ञता प्रकट करती हूँ। वे पुस्तकें इस प्रकार हैं :—

१— Home Science

२— Health and Happiness

३— Food in Health and Disease

भूमिका

मनुष्य-जीवन के साथ उसके आहार का गहरा संबंध है। इसलिए कि उसका स्वास्थ्य और आरोग्य उसके भोजन पर निर्भर है। इस अवस्था में आहार संबंधी बातों की विवेचना को प्रत्येक मनुष्य के निकट आदर मिलना चाहिए।

भोजन-संबंधी बातों की ओर मेरा ध्यान बहुत दिनों से है। इसके संबंध में अधिकारी विद्वानों के लेखों और पुस्तकों को जितना ही मैंने पढ़ा है, मेरी आँखों में उतना ही सम्मान उनके लिए पैदा हुआ है। इस विषय की जानकारी से अनेक बातों में मैंने बहुत कुछ लाभ उठाया है। साथ ही यह स्वीकार किया है कि मनुष्य का स्वास्थ्य उस समय तक उसके हाथ में नहीं रहता, जबतक उसको अपने भोजन का स्वच्छ ज्ञान न हो।

एक शिक्षित मनुष्य इस विषय पर अध्ययन करके बहुत-कुछ लाभ उठा सकता है। वैद्यों और डाक्टरों के सहारे कोई भी मनुष्य शरीर और स्वास्थ्य के वास्तविक सुख का अनुभव नहीं कर सकता। इस विषय में मैंने जितना भी अनुभव किया है, उसके आधार पर मैं इतना ही कहना चाहती हूँ कि आहार-विषयक बातों की जानकारी से ही इच्छानुसार स्वास्थ्य बनाया जा सकता है, शरीर की रचना की जा सकती है, नीरोग जीवन बिताया जा सकता है और जीवन का सच्चा सुख प्राप्त किया जा सकता है।

इस विषय में अध्ययन करके मैंने जो कुछ लाभ उठाया है, उससे मेरा संतोष पूरा नहीं हुआ। कुछ दिनों से इस विषय पर लिखने की मेरी इच्छा थी, जिससे सर्वसाधारण को और विशेषकर पढ़ी-लिखी

बहिनों को भी उसी लाभ के उठाने का अवसर मिले, जिसे मैंने प्राप्त किया है। इस बात को मैं जानती हूँ कि मेरे पास इसकी जो कुछ जानकारी है, वह सब अधिकारी विद्वानों के लेखों से ही, कुछ प्राप्त हो सकी है। इसलिए वह मेरी सम्पत्ति के रूप में नहीं है। जीवन की इतनी मूल्यवान् वस्तु दूसरों से प्राप्त करके, मैं उसी अवस्था में उससे उऋण हो सकती हूँ, जब मैं उसे ज्यों-का-त्यों दूसरों के पास पहुँचाने की चेष्टा करूँ और उसमें सफल हो सकूँ। इसी अभिप्राय से इसके संबंध में कुछ लिखने की बात मैं सोच रही थी।

इसी बीच में साहित्य सेवक-कार्यालय, बनारस के संचालक श्रीयुत बाबू बजरंगबली गुप्त से मुझसे बातें हुई और उन्होंने इस विषय पर एक अच्छी पुस्तक लिखने के लिए मुझसे अनुरोध किया। मैं तो चाहती ही थी, गुप्तजी के परामर्श को मैंने स्वीकार कर लिया। उन्हीं के अनुरोध और परामर्श के परिणामस्वरूप यह पुस्तक 'आहार और आरोग्य' लिखी गई है।

इस पुस्तक के लिखने में जिन कठिनाइयों का मुझे सामना करना पड़ा है, उनका पहले से मुझे कुछ अनुभव न था। जितनी सरलता के साथ इस विषय की पुस्तक लिख डालने की बात मैंने सोच डाली थी, उतनी आसानी से यह पुस्तक लिखी नहीं गयी। इसका कारण बहुत अंशों में, मेरी निर्बलता है। इसीलिए समय भी अधिक लगा और परिश्रम भी विशेष करना पड़ा। इतना होने पर भी मैंने 'आहार और आरोग्य' को उसके विषय में काम की पुस्तक बनाने की चेष्टा की है। इस चेष्टा में जिन पुस्तकों से मैंने सहायता ली है, उनके लेखकों के प्रति मैं कृतज्ञता प्रकट करती हूँ। वे पुस्तकें इस प्रकार हैं:—

१– Home Science

२– Health and Happiness

३– Food in Health and Disease

आहार और आरोग्य

भोजन की आवश्यकता

भोजन से जीवन की रक्षा होती है। जो कुछ मनुष्य खाता और पीता है उसी से वह जीवित रहता है। पशु पक्षियों से लेकर, मनुष्यों तक समस्त जीवधारियों की यही अवस्था है। भोजन की आवश्यकता सभी को है। मनुष्य जो कुछ खाता और पीता है, वह सब उसका भोजन कहलाता है।

भोजन यदि न मिले तो हमारा जीवित रहना असम्भव हो जाय। जन्म से लेकर मृत्यु तक, प्रत्येक जीव खाता और पीता रहता है। और उसीसे जीवित रहता है। भोजन का सबसे पहला महत्व हमारे जीवन में यही है। हममें स भोजन सभी करते हैं, बिना खाये-पिये कोई रह नहीं सकता। परन्तु भोजन क्यों किया जाता है, इसको समझने और जाननेवालों की सख्या बहुत कम है। जो काम हमारे जीवन के लिए सबसे पहले आवश्यक है और यह निश्चित है कि जिसके बिना कोई भी स्त्री और पुरुष जीवित नहीं रह सकता। फिर भी उसके सबध में कुछ न समझना एक आश्चर्य की बात है। यह अनजान अवस्था हममें से लगभग सभी की है। जो अशिक्षित हैं और जिन्हें जीवन का कुछ भी ज्ञान नहीं हैं, यदि वे लोग नहीं जानते तब तो कोई बड़ी बात नहीं है किंतु विस्मय तो उस समय होता है जब शिक्षित स्त्री-पुरुषों में भी इस जानकारी का अभाव मिलता है।

भोजन हमारा जीवन है

भोजन और खाने-पीने की समस्त वस्तुएँ मनुष्य का आहार हैं। उनके द्वारा हमारे जीवन की रक्षा होती है। उनके अभाव में हमारी मृत्यु निश्चित है। जिसने हमको जन्म दिया है, उसी का यह नियम है और उसी का बनाया हुआ यह विधान है। उसे बदलने का हमें कोई अधिकार नहीं है। प्रकृति के

नियमों में परिवर्तन करके उसकी व्यवस्था को बिगाड़ा नहीं जा सकता। बिगाड़नेवालों की ही हानी होती है। इसलिए उनसे पहले हमें यह समझ लेना चाहिए कि जिस प्रकृति ने हमें उत्पन्न किया है और जिसने हमको जीवन दिया है, उसने हमारे जीवन के सम्बन्ध में कुछ व्यवस्था बना रखी है। उस व्यवस्था में जीवित रहने के लिए भोजन की आवश्यकता है जो भोजन हमारे लिए इतना आवश्यक और महत्पूर्ण है, उसके संबंध में जानना और समझना, हम सबका काम है।

भोजन के संबंध में ज्ञान न होने के कारण हमारी अनेक प्रकार की हानियाँ होती हैं। उसके द्वारा हमको जो लाभ पहुँच सकता है, उसके अधिकारी मनुष्य उस समय तक नहीं हो सकते, जब तक उसका अच्छा ज्ञान प्राप्त न कर लें। मैंने तो यह देखा है और भली प्रकार समझा है कि अधिकांश शिक्षित स्त्री-पुरुषों को खाने और पीने के संबंध की छोटी छोटी बातों का भी ज्ञान नहीं है। उनके और उनके परिवार के अनेक कष्टों का कारण यही हुआ है।

शरीर का विकास और निर्माण

भोजन से शरीर का विकास और निर्माण होता है। छोटे बच्चे जन्म के बाद शारीरिक वृद्धि पाते हैं। उनके शरीर का सम्पूर्ण विकास उनके भोजन पर निर्भर है। उनके शरीर का यह निर्माण कार्य न हो सके, यदि उनको उनका भोजन न दिया जाय। इस प्रकार, भोजन शरीर में विकास और निर्माण का कार्य करता है। हमारे जीवन में उसकी यह दूसरी उपयोगिता है।

खाने-पीने की वस्तुएँ बहुत हैं। सभी के गुण और स्वभाव अलग अलग हैं। हमारे शरीर में सभी के काम भी भिन्न भिन्न हैं। किन पदार्थों से हमारे शरीर को लाभ पहुँचता है और किस प्रकार का लाभ पहुँचता है, इसका ज्ञान जब तक हमको नहीं है, उस समय तक उसका यथोचित उपयोग नहीं किया जा सकता और किये जाने पर उसके वास्तविक लाभ से हमको वंचित रहना पड़ता है।

भोजन शरीर के निर्माण और विकास का काम करता है, इसको कभी न भूलना चाहिए। जन्म से लेकर पच्चीस वर्ष की अवस्था तक शरीर के विकास का समय है। इस बीच में भोजन की वस्तुएँ बार बार बदलती हैं। दूध पीनेवाले बच्चों का जो भोजन है, बड़े होने पर वह बदल जाता है। इस प्रकार पूर्ण

विकसित होने तक भोजन में कई बार परिवर्तन होते हैं। शरीर के निर्माण का कार्य हो चुकने पर उसकी आवश्यकताएँ हैं बदल जाती हैं और भोजन अपना नया कार्य भी आरम्भ कर देता है। इसलिए शरीर को किस अवस्था में कैसा भोजन आवश्यक है, इसका जानना और समझना अत्यावश्यक है। उसी हालत में उससे लाभ उठाया जा सकता है और निर्माण में उसी से लाभ पहुँचता है।

अभाव की पूर्ति

हमारे शरीर में भोजन का तीसरा कार्य भी है। परिश्रम करने के कारण शरीर को जो क्षति पहुँचती है, भोजन के द्वारा उसकी पूर्ति होती है शारीरिक शक्तियों का ह्रास भी निरन्तर होता रहता है। यदि उनकी पूर्ति न हो तो हमारा जीवन अधिक दिनों तक नहीं चल सकता। इसीलिए भोजन का तीसरा कार्य होता है अभावों की पूर्ति करना। शरीर में एक ओर विकास और निर्माण का कार्य होता है और दूसरी ओर जीवनी-शक्ति का क्षय भी होता रहता है। भोजन उसकी पूर्ति का कार्य बराबर करता रहता है। हमारे भोजन का यह तीसरा उपयोग है।

इन सभी बातों को लेकर हमारे शरीर में भोजन की कई आवश्यकताएँ हैं जिनकी पूर्ति हमें करनी पड़ती है। भोजन के सम्बन्ध में ज्ञान न होने के कारण उसके लाभ नहीं उठाए जा सकते। इतना ही नहीं, विरुद्ध परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं। अनेक प्रकार के कष्टों का सामना करना पड़ता है। शरीर-रचना का कार्य अनेक नियमों और उपनियमों के साथ हुआ है। उनका ज्ञान हमें होना चाहिए। शारीरिक बातों की यथोचित जानकारी होने पर शरीर का सुख और न होने पर अनेक प्रकार की विपदाएँ हैं। सुख और दुख दोनों शरीर के साथ हैं। दोनों का भोग करने के लिए प्रत्येक अवस्था में हम बन्दी हैं। किसी प्रकार, उनसे हमारा पिण्ड छूट नहीं सकता।

सभी लोग शरीर का सुख उठाना चाहते हैं। बच्चे-बूढ़े, स्त्री और पुरुष सभी के मन में सुखी बनने की अभिलाषा होती है। परन्तु यह सुख उसी अवस्था में सम्भव है, जब उसका हमको ठीक ठीक ज्ञान हो। अन्यथा कष्ट और विपदाएँ अनिवार्य हैं। उनका भोग हमें करना ही पड़ेगा। हमारे जीवन का सुख हमारे शरीर के स्वास्थ्य पर निर्भर है। रुपए-पैसे, धन-दौलत और बड़े से-बड़े व्यवसाय

से मनुष्य सुखी नहीं हो सकता। शरीर के स्वस्थ और सुखी होने से ही जीवन का सुख मिलता है। हमारा सुख शरीर के ऊपर निर्भर है और शरीर की उपयोगिता उसके भोजन के साथ है। इस बात का ज्ञान न होने के कारण मनुष्य को अनेक प्रकार की विपत्तियाँ सहन करनी पड़ती हैं।

मैं ऐसे बहुत से स्त्री पुरुषों को जानती हूँ जिनके जीवन में रुपये-पैसे का अभाव नहीं है, सभी प्रकार की सुविधाएँ हैं। अपनी संचित सम्पत्ति के द्वारा वे सब-कुछ कर सकते हैं। परन्तु वे शरीर से दुखी हैं। उनके शरीर को जो काम करना चाहिए, उससे वह नहीं होता। इसके लिए उन्हें वैद्यों और डाक्टरों का सहारा लेना पड़ता है। परन्तु यह झूठा सहारा है। जीवन भर उन स्त्री-पुरुषों को शारीरिक असुविधाओं के लिए दुखी रहना पड़ता है और जब कोई उपाय काम नहीं करता तो उन्हें बाध्य होकर भाग्य को दोष देना पड़ता है।

हमारे जीवन के झूठे विश्वासों ने हमें और भी दुखी एव विपद-पूर्ण बना रखा है। सही और सच्ची बातों का न तो हमें ज्ञान है और न उसके लिए प्रयत्न ही करते हैं। सीधी सी बात यह है कि शरीर का सुख उठाने के लिए शारीरिक ज्ञान होना चाहिए। उसके स्थान पर सहज ही लोग भाग्य को दोष देना सीख गये हैं। उनसे बातें करने पर ज्ञात होता है कि उनके जीवन में कितने ही झूठे विश्वास भी हैं और वे झूठे विश्वास ही उनके दुखों के कारण हैं।

शरीर की अच्छाइयाँ और बुराइयाँ सीधा हमारे भोजन से सम्बंध रखती हैं। भोजन हमारा जीवन है। उसीके द्वारा हमारे शरीर का स्वास्थ्य है और उसी से शारीरिक तथा मानसिक शक्ति मिलती है। इसके साथ साथ भोजन का एक दूसरा पहलू भी है। वह अधिक दुखदायी है। प्रत्येक मनुष्य को उसका ज्ञान होना चाहिए। स्त्रियों और पुरुषों को स्पष्ट रूप से यह समझ लेने की आवश्यकता है कि जो भोजन हमको जीवित रखने का कार्य करता है और सुखी तथा सौभाग्यपूर्ण बनाता है। उसी भोजन का दुरुपयोग हमारी अनेक प्रकार की विपदाओं का कारण है और प्रायः समय के पूर्व भोजन का दुरुपयोग ही हमारी मृत्यु का कारण होता है। स्पष्ट रूप से यह समझ लेने की आवश्यकता है कि भोजन का ठीक ठीक ज्ञान न होने से अथवा भूलता के कारण खाने-पीने की वस्तुओं का दुरुपयोग करने से वही दुख है, विपत्ति है और मृत्यु है।

भोजन से सम्बन्ध रखनेवाली प्रत्येक बात का विवेचन मैं आगामी पृष्ठों में, यथास्थान विस्तारपूर्वक करने की चेष्टा करूँगी। यहाँ पर इतना ही जान लेने की आवश्यकता है कि भोजन के साथ हमारे शरीर और जीवन का क्या सम्बन्ध है और भोजन क्यों किया जाता है। कुछ लोग ऐसे हैं जो भोजन करने के लिए जीवित रहना चाहते हैं। मैंने न जाने कितने स्त्री-पुरुषों के मुख से उनकी शारीरिक दुरवस्थाओं के समय सुना है, "अब जीवित रहना व्यर्थ है। न खाने का सुख और न पीने का।" यह मनुष्य जीवन की कितनी बड़ी भूल है। खाने के लिए जीवित रहना, जीवन का सत्य नहीं है। जीवित रहने के लिए भोजन करना जीवन का सत्य है। इस सत्य को जानने और समझने में ही हमारा कल्याण है।

भोजन के प्रयोग और परिणाम

हमारे शरीर का भोजन के साथ क्या सम्बध है, इसको समझ लेने के पश्चात् उसके प्रयोग और परिणाम का जानना आवश्यक है। एक मोटी सी बात यह है कि जो वस्तु हमारे लिए अधिक से अधिक उपयोगी हो सकती है, वही हानिकारक भी होती है। प्रकृति का यह नियम है। वर्षा खेती का प्राण है, परन्तु वही उसके विध्वस का कारण भी है। सूर्य की धूप हमारा जीवन है किंतु उसके द्वारा हमारा नाश भी होता है। जिस जल के बिना जीना कठिन है, उसी से प्राण भी जाते हैं। प्रकृति की सम्पूर्ण वस्तुओं के साथ हमारा यह संबध है।

मनुष्य के जीवन का हित और अहित सदुपयोग और दुरुपयोग पर निर्भर है। भोजन के संबंध में भलीभाँति इसको समझने की आवश्यकता है। मैं खूब जानती हूँ कि साधारण अवस्था में स्त्रियों और पुरुषों को इन बातों का ज्ञान नहीं होता। उनकी जानकारी के लिए प्रयत्न करना पड़ता है और प्रयत्न उसी अवस्था में संभव है, जब हमको उसकी आवश्यकता हो। जिसकी हमें आवश्यकता नहीं है, उसकी जानकारी अपने आप नहीं हुआ करती। जीवन का जो सुख उठाना चाहते हैं, उनको सत्य और सही बातों के जानने की आवश्यकता है।

मनुष्य प्रायः स्वादुप्रिय है। भोजन में उसे एक सुख मिलता है। यह सुख

स्वादिष्ट भोजनों से सम्बन्ध रखता है। परन्तु हमारा हित और कल्याण केवल स्वादिष्ट भोजनों पर ही नहीं है। आवश्यकता और भोजन की उपयोगिता हमारे लिए कल्याणकर है। परन्तु समाज में ऐसा नहीं होता। मनुष्य उसी प्रकार के भोजन चाहता है, जो उसे खाने में स्वादिष्ट मालूम हो सके। खोजने पर बहुत कम मनुष्य ऐसे मिलेंगे जो भोजन की उपयोगिता पर अधिक ध्यान देते हों। स्त्रियों की अवस्था तो और भी आपत्तिपूर्ण है। लड़के और लड़कियाँ तो क्षमा की अधिकारिणी होती ही हैं परन्तु प्रकृति क्षमा करना जानती ही नहीं।

माता और पिता की भूलें प्राय भयानक परिस्थिति उत्पन्न करती हैं। बाजार की जो चीजें बच्चों को हानि पहुँचाती और उनको बीमार बनाती हैं, उनका ज्ञान माता-पिता को नहीं होता। बच्चों के बीमार होने पर सबसे बड़े दु ख की बात तो यह है कि डाक्टर और वैद्य बीमारी का कारण नहीं बताते। वे दवाएँ देना आरम्भ करते हैं और अपने व्यवसाय से लाभ उठाते हैं। यह अवस्था अच्छी नहीं होती।

बीमारी से उठने के बाद खाने की जो वस्तुएँ बच्चों के लिए रोकी जाती हैं, वे उन्हीं को खाते हैं और माता-पिता उनको रोक नहीं पाते। चिकित्सकों अथवा जानकार व्यक्तियों के रोकने पर भी बच्चों के परहेज नहीं चलते। माता-पिता के कहने का कुछ प्रभाव नहीं होता। इस अवस्था में वे पुन बीमार हो जाते हैं। जीवन की ये कथाएँ बहुत दुखपूर्ण और कहीं कहीं आश्चर्यजनक हो जाती हैं।

भोजन का प्रभाव

पिछले पृष्ठों में भोजन की आवश्यकता बतायी जा चुकी है, उसकी पूर्ति के लिए भोजन किया जाता है। शरीर की रचना इस ढंग से हुई है कि उसे समझने में हमें अधिक कष्ट नहीं होता। केवल जानकारी होनी चाहिए। नियम और व्यवस्था को जानकर उसके अनुसार काम करने की आवश्यकता होती है। भोजन की आवश्यकता कब होती है, इसका ज्ञान शरीर से ही होता है। भूख लगने पर ही भोजन करना चाहिए। भूख अपने आप हमें सूचना देती है। उसी के हिसाब से भोजन करना चाहिए।

बिना आवश्यकता के जो भोजन किया जाता है, उससे लाभ की अपेक्षा हानि अधिक होती है। साथ ही भोजन उतना ही करना चाहिए, जितने से भूख

मिटती हो। अच्छा भोजन मिल जाने से और आवश्यकता से अधिक भोजन कर लेने से हानि होती है। एक बात और है। खाने के पदार्थ अनेक प्रकार के हैं। सभी परिस्थितियों में वे समान रूप से उपयोगी नहीं होते। शरीर की अवस्था का भी प्रभाव पड़ता है। इन सभी बातों को सामने रखकर भोजन का प्रयोग होना चाहिए, तभी उसका लाभ उठाया जा सकता है।

ऊपर लिखा जा चुका हैं कि भोजन जीवन भी देता है और मृत्यु का कारण भी होता है। चिकित्सा-विज्ञान के अधिकारियों का कहना है कि जो मृत्युएँ होती हैं, उनमें नव्वे प्रतिशत भोजन-संबंधी भूलों के कारण होती हैं। बच्चों की मृत्यु तो शत् प्रति शत् इसीलिए होती है कि माता-पिता को उनको भोजन देने का ज्ञान नहीं होता। कितने दुख की बात है। यह नहीं कहा जा सकता कि माता और पिता जान-बूझकर अपने बच्चों को मार डालते हैं। फिर भी उनकी मृत्यु का जो कारण होता है, वह केवल उनकी भूल है।

बच्चों की मृत्यु न होनी चाहिए। वे मरने के लिए नहीं पैदा होते। वे मरेंगे परन्तु छोटी अवस्था में नहीं। मरने का समय होता है और उसी समय किसी की भी मृत्यु होनी चाहिए। उसके पहले जो मृत्यु होती है, वह किसी कारण से होती है। यदि कारण न होते तो मृत्यु न होती। मनुष्य बहुत अज्ञान है, वह मृत्यु के बाद, मृत व्यक्ति के लिए रोता है और अपना सिर पीटता है। इस बात को समझने का प्रयत्न वह नहीं करता कि इसका कारण क्या है।

जिसने हमको जन्म दिया है, उसका अभिप्राय यह है कि हम अधिक से अधिक दिनों तक जीवित रहें। शरीर को स्वस्थ बनावें। शारीरिक और मानसिक शक्तियों का लाभ उठावें। हमको इन बातों का ज्ञान नहीं होता। होता यह है कि अपनी भूलों को न समझकर हम भाग्य और ईश्वर को दोष देने में ही संतोष मान लेते हैं। इससे बढ़कर और क्या आश्चर्य हो सकता है।

भोजन का उद्देश्य

जो मनुष्य जिस वृक्ष को लगाता है, उसको वह काटना नहीं चाहता। हमने यदि एक मकान बनाया हैं तो हमारा अभिप्राय यह कभी नहीं हो सकता कि वह मकान गिर जाय। हमारा जन्म ईश्वर की रचना है। वह सदा हमको सुखी देखना चाहता है। उसका यह अभिप्राय नहीं है कि हम दुख और दुर्भाग्य का

भोग करें। फिर भी यदि विरुद्ध परिस्थितियाँ हमारे सामने आती हैं तो उनके कारण हैं, मनुष्य को इस बात के समझने की आवश्यकता है।

भोजन-सम्बंधी बातों का यदि मनुष्य को ठीक ठीक ज्ञान हो तो वह सदा सुखी रह सकता है। सुख और स्वास्थ्य पाने के लिए हमने जन्म लिया है। भोजन से हमें जीवन मिलता है। स्वास्थ्य और शक्ति प्राप्त होती है। शरीर नीरोग होने पर बड़े-से-बड़े काम किये जा सकते हैं। प्रकृति ने मनुष्य को स्वस्थ, सुंदर और नीरोग बनाने का प्रयत्न किया है। मनुष्य के शरीर में कुछ नियम हैं। जिनके द्वारा प्रकृति स्वयं हमको नीरोग रखने का कार्य करती है। परन्तु मनुष्य उसके नियमों का उल्लंघन स्वयं करता है। प्रकृति के नियमों के विरुद्ध चलकर कोई कभी सुखी नहीं रह सकता। यह निश्चित है। इस अवस्था में, मनुष्य के सामने एक ही मार्ग रह जाता है कि वह शरीर की व्यवस्था को समझने का प्रयत्न करे। प्रकृति के नियमों का पालन करने से मनुष्य जिस सुख और सौभाग्य का अधिकारी हो सकता है, उसके विरुद्ध चलने पर, उसकी कल्पना कभी नहीं की जा सकती।

शरीर के सुख और स्वास्थ्य में सबसे पहला महत्त्व मनुष्य के भोजन का है। उसके संबंध में एक दो बातें नहीं हैं। बहुत-सी बातें हैं। उन सभी का जानना आवश्यक है। मनुष्य जान-बूझकर भूल नहीं करता और न मनुष्य का यही उद्देश्य हो सकता है कि वह बीमार और रोगी होकर रहे। फिर भी यदि किसी का शरीर नीरोग नहीं है तो यह निश्चित है कि उसके जीवन में, प्रकृति के नियमों का पालन नहीं हो रहा है। कुछ भूलें अवश्य हैं, जिनके कारण शरीर के स्वास्थ्य से वह वंचित हो रहा है। इस अवस्था में मैं कभी किसी को यह राय नहीं दे सकती कि वह औषधियों के प्रयोग से नीरोग होने की चेष्टा करे। उसके सामने एक ही मार्ग है, वह यह कि वह अपने शरीर को समझने का प्रयत्न करे।

केवल साधारण श्रेणी के मनुष्यों को ही नहीं। समझदार और शिक्षित स्त्री-पुरुषों को भी मैंने शारीरिक कष्टों में देखा है। वे कभी इस बात को समझ नहीं पाते कि इन कष्टों का कारण क्या है। मैंने कितने ही ऐसे मनुष्यों को देखा है, जो बहुत परहेज से काम लेते हैं और उसके बाद भी उनका शरीर स्वस्थ नहीं हो पाता। जीवन भर परहेज नहीं किया जा सकता और न प्रकृति का ऐसा

सिद्धान्त ही है। इस प्रकार के स्त्री-पुरुषों को शरीर का गम्भीर अध्ययन करने की आवश्यकता अधिक है।

कभी कभी मनुष्य अपने ही प्रयत्नों से किसी दुष्परिणाम तक पहुँचता है। मैं एक शिक्षित और समझदार वकील को जानती हूँ। उनका शरीर अत्यन्त स्वस्थ और शक्तिशाली था। सयोग से किसी बीमारी में पड़ने के कारण पहले कुछ दिनों तक वे किसी डाक्टर की दवा करते रहे। परतु अच्छे न होने पर उनको प्राकृतिक चिकित्सा का ज्ञान हुआ। किसी प्राकृतिक चिकित्सक के परामर्श से उन्होंने कुछ पुस्तकें खरीदीं और कुछ दिनों तक उन्होंने उसके प्रयोग किये। इसका परिणाम उनके लिए और भी घातक हुआ। उनका शक्तिशाली शरीर दुर्बल हो गया और वे बहुत दुखी रहने लगे। इसके फलस्वरूप उन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणाली की निंदा करना प्रारभ किया।

अपनी इसी अवस्था में वकील महाशय ने मुझसे बहुत-सी बातें कीं। उस समय जो कुछ मेरी समझ में आया, मैंने उनके सामने रखा। वास्तव में कारण यह है कि एक बार किसी रोग के विजयी होने पर, आसानी से छुटकारा नहीं मिलता। दूसरी एक बात और है। रोगी होने पर किसी एक ही बात से काम नहीं चलता। जिस प्रकार कानून की किसी एक पुस्तक को पढ़ लेने से कोई व्यक्ति वकील नहीं बन जाता ठीक उसी प्रकार किसी एक पुस्तक का अध्ययन करके कोई मनुष्य उसका पडित नहीं होता। मनुष्य जितना ही अध्ययन करता है, उसकी जानकारी उतनी ही अधिक होती है। बीमारियों में मनुष्य जितना पैसा दवाओं में खर्च करता है, यदि उपयोगी पुस्तकों और साहित्य में उसमें से वह कुछ भी व्यय करे, अध्ययन करे और उसके ज्ञान से लाभ उठाने का प्रयत्न करे तो मनुष्य अधिक लाभ उठा सकता है।

रोगों का कारण

कई वर्षों तक प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणाली के अनुसार रोगियों को स्वस्थ बनाने के लिए, मुझे जो काम करना पड़ा है, उसके द्वारा मैं यह कहने का साहस करती हूँ कि मनुष्यों की बीमारियों का कारण, उनकी भोजन-संबधी असावधानी है। भोजन की सावधानी पर आज बड़ी-से-बड़ी खोजें हो रही हैं। उनका ज्ञान होना, प्रत्येक स्त्री-पुरुष के लिए आवश्यक है।

शरीर को नीरोग रखने के लिए जितने उपाय हैं, उन सबका अधिकांश संबंध हमारे खाने-पीने से है, इसी की गड़बड़ी से रोगों की उत्पत्ति होती है। छोटे-से-छोटा और बड़े-से-बड़ा रोग हमारे भोजनों से सम्बंध रखता है। मनुष्य जो कुछ खाता-पीता है, उसके अमृतमय प्रभाव से उसके शरीर को जीवनी-शक्ति प्राप्त होती है किन्तु भोजन के पदार्थों से बननेवाले मल के द्वारा रोगों की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार मनुष्य के शरीर में भोजन के दोनों काम होते रहते हैं। यदि शरीर और उसके सम्पूर्ण अंग विशुद्ध रखे जा सकें तो रोगों से रक्षा हो सकती है। किन्तु शरीर के परिष्कृत रखने का कार्य, साधारण नहीं है। उसका ज्ञान प्राप्त करने के लिए विशेष रूप से प्रयत्न और अध्ययन करना पड़ता है। इसके साथ ही एक बात और है। केवल जान लेने से ही काम नहीं चलता, शरीर को लाभ उसी अवस्था में पहुँचता है, जब उसके नियम हमारे आचरण में स्थान पाते हैं।

जो अपने शरीर को स्वस्थ और आरोग्य रखना चाहते हैं, उनको अपने भोजन के संबंध में पूर्ण जानकारी होनी चाहिए। भोजन के प्रत्येक पदार्थ के गुण और स्वभाव से परिचित होकर उसके उचित प्रयोग के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति अपने शरीर की रक्षा और सहायता कर सकता है। इन सभी बातों के संबंध में, आगामी पृष्ठों में अलग अलग प्रकाश डाला जायगा।

जिन स्त्री-पुरुषों को अपने जीवन की इन बातों का स्वयं ज्ञान नहीं होता, वे दूसरों के बताने पर विश्वास नहीं करते। एक रोगी के संबंध में मुझे कुछ बातों की याद आ रही है। उसके बीमार होने पर खाने पीने की जो सावधानी उसको बतायी गई थी, उसको उसने ध्यानपूर्वक सुना था और स्वीकार किया था। दो-तीन दिनों के बाद पता लगाने से ज्ञात हुआ कि जो बातें उससे कही गई थीं, उनका उसपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उसके घर के दूसरे व्यक्तियों से जो बातें ज्ञात हुईं, उनको सुनकर बड़ा विस्मय हुआ। रोगी को खाने-पीने के लिए कुछ संयम बताया गया था। उसको उसने महत्व नहीं दिया और यह कहकर उसने पेश। की कि खाने पीने से कोई रोगी नहीं हो जाता। यदि खाने-पीने के द्वारा ही मनुष्य बीमार हो सकता है तो सभी लोग बीमार ही क्यों नहीं बने रहते।" अपनी इन बातों पर वह विश्वास करता था। इसीलिए उसे जो संयम बताया गया था, सुनने के बाद उसका कोई प्रभाव न रहा। संयम से काम न लेने के

कारण, उसका रोग बराबर बढ़ता जा रहा था।

वास्तव में जब तक मनुष्य को ठीक-ठीक और पूर्ण रूप से ज्ञान नहीं होता, तब तक उसका उसपर विश्वास नहीं पैदा होता। यथोचित जानकारी के बाद ही विश्वास उत्पन्न होता है और विश्वास होने पर ही सयम और नियम का पालन होता है। समय और सयोग पड़ने पर यदि किसी को कुछ मालूम भी हो जाता है तो उसमें स्थायीत्व नहीं होता और न उसके-द्वारा विश्वास ही उत्पन्न होता है।

भोजन कैसा और कितना हो ?

स्वास्थ्य और शक्ति पाने के लिए भोजन किया जाता है। खाने की जितनी वस्तुएँ हैं, सभी के भिन्न-भिन्न गुण और स्वभाव होते हैं। जो वस्तुएँ हमारे शरीर को अधिक स्वास्थ्य और शक्ति देती हैं, वही हमारे लिए अधिक उपयोगी होती हैं। भोजन के द्वारा शरीर का पालन होता है। जो पदार्थ शरीर के पालन-पोषण में अधिक काम करते हैं, वे ही भोजन के लिए अधिक आवश्यक होते हैं।

जाड़े के दिनों में शीत से बचने की आवश्यकता होती है। इसलिए ऐसे कपड़े पहने और ओढ़े जाते हैं जो शीत से हमारे शरीर की रक्षा करते हैं। उस समय यह नहीं कहा जाता कि पहनने और ओढ़ने के लिए कोई भी कपड़ा होना चाहिए। इसलिए कि वे कपड़े यदि सरदी से हमारी रक्षा नहीं करते तो उनके प्रयोग से हमारा कुछ लाभ नहीं होता। इतना ही नहीं, यदि विचारपूर्वक कपड़े न पहने जायँ तो सरदी से हमको बड़ी से बड़ी क्षति पहुँच सकती है।

यही अवस्था हमारे भोजन के संबंध में भी है। जिनको उसका ठीक-ठीक ज्ञान नहीं है, वे कहा करते हैं, "भोजन 'भोजन ही है, पेट भरने से मतलब है, कुछ भी होना चाहिए।" इस प्रकार की बातें बहुत बड़ी भूल से भरी हुई हैं। ऊपर वस्त्रों का उदाहरण दिया जा चुका है। कपड़ों का पहनना किसी शौक को पूरा करने के लिए नहीं होता। शरीर की रक्षा के लिए कपड़े पहने और ओढ़े जाते हैं। इसी प्रकार भोजन करना ही आवश्यक नहीं है। उसका अभिप्राय यह है कि उससे शरीर की रक्षा हो सके। जिन वस्तुओं से शरीर का पालन-

पोषण नहीं होता, वे अनावश्यक होती हैं। खाने के पदार्थों में इस बात का ध्यान रखना आवश्यक होता है कि किन पदार्थों से शरीर को शक्ति और स्वास्थ्य अधिक मिलता है। भोजन का वास्तविक अभिप्राय यही है।

भोजन के पदार्थों के गुण और स्वभाव, विस्तारपूर्वक आगे लिखे जायँगे। उनकी उपयोगिता वहीं पर समझनी होगी। यहाँ पर इतना ही बतलाना है कि भोजन के सबंध में हमें किस प्रकार की सावधानी से काम लेना चाहिए।

सुपाच्य और गरिष्ठ

खाने की कुछ वस्तुएँ ऐसी होती हैं जिनका पाचन सरलता से होता है। उन्हें सुपाच्य पदार्थ के नाम से पुकारा जाता है। और कुछ पदार्थ ऐसे भी होते हैं जिनका पाचन देर में और कुछ कठिनाई के साथ होता है उन्हें गरिष्ठ पदार्थ कहते हैं। जो वस्तुएँ सरलता से पचती हैं वही प्राय: अधिक उपयोगी मानी जाती हैं। जिनके पचाने में अधिक समय लगता है, अथवा पाचन-क्रिया को अधिक काम करना पड़ता है, उनकी उपयोगिता अच्छी नहीं समझी जाती। खाने के पदार्थों के ये दो स्वभाव होते हैं। सबसे पहले प्रत्येक स्त्री-पुरुष को इन दोनों बातों का ज्ञान होना चाहिए। सुपाच्य और गरिष्ठ का ज्ञान न होने के कारण मनुष्य को बड़े-बड़े कष्ट उठाने पड़ते हैं। शरीर के अन्तर्गत पाचन-क्रिया का कार्य जितनी ही सुगमता से होता है। शरीर उतना ही नीरोग और स्वस्थ रहता है। जो भोजन किया जाता है, उसके पाचन में कठिनाई उत्पन्न होने पर शरीर के रोगी होने में देर नहीं लगती। शरीर को रोग से बचाना हमारा सबसे पहला कार्य है। इसलिए जो पदार्थ आसानी से पच सकें, उन्हीं को खाना चाहिए।

इसके सबध में एक बात और समझ लेने की आवश्यकता है। सभी की पाचन-क्रिया एक सी नहीं होती। कुछ लोग कड़े-से-कड़े पदार्थों को भी सरलता से पचा सकते हैं। परंतु इस प्रकार के व्यक्ति वही होते हैं जो शारीरिक परिश्रम अधिक करते हैं। श्रम करनेवाले व्यक्तियों की पाचन-शक्ति तीव्र होती है। परन्तु जो व्यक्ति कम परिश्रम करते हैं अथवा नहीं करते, उनकी पाचन-शक्ति निर्बल होती है। बूढ़ों की अपेक्षा युवकों में भोजन पचाने की शक्ति तीव्र होती है। इस प्रकार पाचन-क्रिया के भिन्न-भिन्न रूप हैं। स्त्री-पुरुषों को अपनी पाचन-शक्ति के अनुसार ही अपने भोजन का निर्णय करना चाहिए।

भोजन की मात्रा

सभी के भोजन की मात्रा एक सी नहीं हो सकती। कुछ पुस्तकों में इस प्रकार की विवेचना दी गयी है और भोजन के परिणाम भी बताए गये हैं। परन्तु मेरी समझ में भोजन का परिमाण बुद्धिसगत नहीं है। इसका कारण है। सभी स्त्री-पुरुषों की खुराक समान नहीं होती। शरीर की परिस्थिति का भी भोजन की मात्रा पर प्रभाव पड़ता है। पढ़ने-लिखनेवाले लड़कों और लड़कियों की अपेक्षा उन लड़को और लड़कियों की खूराक अधिक होती है जो अधिक परिश्रम करते हैं और देहातों में रहते हैं। परिश्रम से दूर रहकर प्रायः बैठे रहनेवाले और लिखने-पढ़ने का कार्य करनेवाले स्त्री-पुरुषों की खुराक कम होती है। इन परिश्रमहीन स्त्री पुरुषों की अवस्था भी कई प्रकार की है। इनमें कुछ लोग अच्छी मात्रा में भोजन करते हैं और कुछ लोग तो बहुत कम खाते हैं। इस अवस्था में, भोजन की मात्रा का निर्णय नहीं किया जा सकता। जो मनुष्य सरलता से जितना भोजन पचा सकता है, उसके भोजन की मात्रा उतनी ही होती है।

आजकल शिक्षित स्त्री-पुरुषों में खाने-पीने की बहुत सावधानी चल रही है। भूख से कुछ कम भोजन करना शिक्षित लड़के-लड़कियों और स्त्री-पुरुषों ने अपना ध्येय बना लिया है। इसका कारण यह है कि शहर के निवासी दिन पर दिन स्वास्थ्य के नाम पर निर्बल होते जाते हैं। देहातों की अपेक्षा शहरों में रोग भी अधिक होते हैं। जो लोग रोगों से बचना चाहते हैं, वे लोग सबसे पहली सावधानी अपने भोजन की मात्रा में आरंभ करते हैं। कम भोजन करने का यही एक कारण है।

साधारण अवस्था में रोगों से बचने के लिए यह रास्ता अनुचित नहीं है। परन्तु गभीरतापूर्वक इस पर विचार करने से, पूर्ण रूप से इसका समर्थन नहीं किया जा सकता। यदि पाचन-क्रिया लगातार निर्बल होती जा रही हो तो भोजन की मात्रा कम करने से ही काम न चलेगा। पाचन क्रिया को तीव्र बनाने के लिए कुछ अन्य उपाय करने होंगे।

भोजन की मात्रा पाचन-क्रिया की शक्ति पर निर्भर है। इसलिए प्रत्येक स्त्री-पुरुष को अपना निर्णय स्वयं करना चाहिए। अधिक से अधिक भोजन करने

की नीति का भी समर्थन नहीं किया जा सकता। इसलिए कि ऐसा करना शरीर को रोगी बनाना है और रोग न केवल शारीरिक विपत्ति के कारण होते हैं, बल्कि उन्हीं के द्वारा मृत्यु भी होती है। इसके साथ साथ, कम-से-कम भोजन की भी सराहना नहीं की जा सकती। पाचन-क्रिया के मन्द होने से भूख का कम लगना स्वाभाविक है। उसके हिसाब से यदि भोजन की मात्रा, निरंतर कम होती चली गयी तो शरीर में निर्बलता अधिक पैदा हो जायगी। इस प्रकार शरीर की बढ़ती हुई दुर्बलता कभी भी वाञ्छनीय नहीं हो सकती।

रुचिपूर्वक जितना भोजन खाया और पकाया जा सके, उतना ही लाभकारक होता है। ठीक-ठीक पाचन होने से रक्त-मांस मज्जा और वीर्य की उत्पत्ति होती है। इन्हीं के द्वारा शरीर को स्वास्थ्य मिलता है। आरोग्य अवस्था में ही मानसिक शक्तियाँ उन्नत करती हैं। भोजन का ठीक ठीक पाचन न होने से, शरीर में दोष उत्पन्न होते हैं और जो भोजन रस, रक्त और वीर्य पैदा करने का काम कर सकता था, वह विष उत्पन्न करने का कारण बन जाता है। इसलिए भोजन के संबंध में इस बात की बड़ी सावधानी रखने की आवश्यकता है कि जो भोजन किया जाय, पाचन-क्रिया उसको सरलतापूर्वक पचा सके।

दूषित और विपाक्त प्रभाव

किसी भी वस्तु के दो दृष्टिकोण होते हैं। वे दोनों ही लाभ और हानि के रूप में हमारे सामने आती हैं। भोजन की सभी वस्तुओं के संबंध में यह बात समझ लेने योग्य है। जो भोजन किया जाता है, वह लाभकारी होता है और इसी दृष्टि से उसका प्रयोग होता है। परन्तु अनावश्यक अवस्था में लाभ के स्थान पर उसका दूषित प्रभाव हमारे शरीर पर पड़ता है! और उसी के परिणाम स्वरूप शारीरिक व्याधियाँ होती हैं।

मैंने देखा है कि सर्वसाधारण को इन बातों का ज्ञान नहीं होता। इसलिए बिना किसी अपराध के लोगों को कष्ट उठाने पड़ते हैं। भोजन के संबंध में इन सभी बातों की जानकारी आवश्यक है। जिसने हमें पैदा किया है, उसने हमें

इन बातों का ज्ञान भी दिया है। इतना ही नहीं, भोजन के दूषित प्रभाव को रोकने के लिए प्रकृति की ओर से हमारे जीवन में व्यवस्था है। परंतु साधारणतया उसकी उपेक्षा होती है।

मनुष्य के ज्ञानवान होने की बात प्रायः सुनने में आती है। परन्तु जीवन की सभी बातों में उनकी अपेक्षा दूसरे जीव अधिक समझदारी से काम लेते हैं। प्रकृति के नियमों का जितना उल्लंघन मनुष्यों के द्वारा होता है, उतना दूसरे जीवों के द्वारा नहीं होता। प्रकृति की व्यवस्था की उपेक्षा यदि मनुष्यों के द्वारा न होती तो वे आज अधिक सुखी और संतुष्ट होते। परन्तु ऐसा नहीं है। मैंने तो यह भी देखा है कि अशिक्षित स्त्री-पुरुषों की अपेक्षा, सभ्य और शिक्षित स्त्री-पुरुष प्रकृति के निकट अधिक अपराध करते हैं। प्रकृति क्षमा करना नहीं जानती, उसके निकट सभी बराबर हैं। बच्चों से लेकर, बूढ़ों तक सबके साथ एक ही नियम का पालन होता है। गरीब-अमीर, छोटे-बड़े और नीच-ऊँच का भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता। नियमों को भंग करने से सभी को दण्ड मिलता है।

भोजन करना हमारे लिए आवश्यक है। इसलिए कि उसके बिना मनुष्य जीवित नहीं रह सकता। अन्य जीवों की भी यही दशा है। इसलिए भोजन अनिवार्य रूप में आवश्यक है। परन्तु उससे भी अधिक आवश्यकता इस बात की है कि हममें से प्रत्येक मनुष्य को भोजन-संबंधी सभी बातों का ठीक ठीक और आवश्यक ज्ञान हो। पूर्ण जानकारी होने पर ही भोजन से हमारा लाभ है। जानकारी न होने के कारण, पद-पद पर हमारे सामने क्लेश है।

भोजन का प्रकोप

जो भोजन खाया जाता है, शरीर में उसका ठीक-ठीक पाचन होना चाहिए। जितना भोजन खाया जाता है, वह सबका सब शरीर के काम में नहीं आता। भोजन का अनावश्यक अंश मल के रूप में शरीर से बाहर होता रहता है। भोजन करके मनुष्य [illegible] पा जाता है [illegible] नहीं समझता कि उसके बाद भी उसके ऊपर [illegible] भोजन के पचने का कार्य [illegible] अनावश्यक भाग अलग [illegible] हैं।

उसका अनावश्यक अंश मल बनकर शरीर से निकल न जाय, उस समय तक दूसरी बार भोजन न करना चाहिए। भोजन का यह आवश्यक नियम है। किंतु इस नियम के विरुद्ध चलने पर और पहली बार के भोजन का पाचन कार्य न होने पर, दूसरी बार जो भोजन कर लिया जाता है, भोजन के संबंध में पहली भूल वहीं से आरंभ हो जाती है और पाचन का कार्य ठीक-ठीक न होने पर हमारे शरीर में भोजन का प्रकोप होता है। उससे विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं और मनुष्य को उनका भोग करना पड़ता है।

ज्ञान न होने के कारण ही मनुष्य से इस प्रकार की भूलें होती हैं। न्यायालय में ज्ञान और अज्ञान को कोई नहीं देखता। अपराधी को दण्ड देना ही न्याय कहलाता है। हमारी भूलों में भी यही होता है। प्रकृति के नियमों को भंग करने से रोगों की उत्पत्ति होती है। प्रकृति का यही दंड है।

मैंने साधारण बातों में भी स्त्री-पुरुषों की उलटी बातें देखी हैं। भोजन के साथ उन बातों का गहरा संबंध है। इसीलिए मैं संक्षेप में यहाँ उन पर प्रकाश डालना चाहती हूँ सभी प्रकार के स्त्री पुरुषों के लिए उनका जानना आवश्यक है। जानने और समझने के बाद लाभ उठाना और न उठाना उनका काम है।

इस बात को भली भाँति और बार-बार समझना चाहिए कि अपच की अवस्था में ही भोजन का प्रकोप होता है और उस दशा में, जो भोजन हमारे शरीर के पालन-पोषण का कार्य कर सकता था, वह शरीर में पीड़ा और रोग उत्पन्न करने का कार्य करता है। यही भोजन का प्रकोप है। उसकी इस अवस्था में पेट का अपच भोजन दूषित हो जाता है, उसका परिणाम विपाक होने लगता है और शरीर को अनेक प्रकार के कष्ट उठाने पड़ते हैं।

मस्तक-पीड़ा

उदाहरण के रूप में मेरे सामने मस्तक-पीड़ा का कष्ट है, किसी भी प्रकार की मस्तक-पीड़ा का कारण भोजन का न पचना है। मल विसर्जन का कार्य ठीक ठीक न होने पर और शरीर में उसके रुकने पर, अधिकांश अवस्था में मस्तक-पीड़ा होती है। उसके अनेक रूप होते हैं। सभी का एक ही कारण होता है।

इस प्रकार के कष्ट में लोग औषधि का प्रयोग करते हैं। मैंने सैकड़ों बार इस प्रकार के कष्ट में स्त्रियों ... मुँह से ... कारण सुना है।

साधारणतया लोग इस बात पर विश्वास करते हैं कि मस्तिष्क की कमजोरी से सिर में दर्द पैदा होता है। इसके संबंध में यहीं तक आश्चर्य नहीं है। मैंने तो कितने ही वैद्यों को भी यही कारण बताते हुए सुना है। जिस देश में चिकित्सकों का यह हाल हो, उसके साधारण समाज के लिए भला क्या कहा जा सकता है। लोग वैद्यों पर विश्वास करते हैं। फल यह होता है कि उस पीड़ा को दूर करने के लिए पाक जैसी गरिष्ठ वस्तुएँ बनाकर खिलाई जाती हैं। इसका फल उलटा होता है, पीड़ा घटने के स्थान पर बढ़ने लगती है।

इस प्रकार के कष्ट को दूर करने के लिए एक ही उपाय है। और वह यह कि शरीर में एकत्र मल को निकलने का अवसर दिया जाय। कोई भी भोजन न किया जाय। यदि रोगी बिना खाये नहीं रह सकता तो हलके हलके पदार्थ खाने को दिये जायँ और कम-से-कम मात्रा में दिये जायँ। अधिक और लगातार पीड़ा को दूर करने के लिए उपवास कराना बहुत आवश्यक होता है। एक दो दिन के उपवास के बाद जुलाब अथवा एनिमा का प्रयोग बहुत लाभ पहुँचाता है। शरीर से मल को निकालने में इनसे सहायता मिलती है।

बीमारी के बाद

छोटी या बड़ी बीमारी के बाद रोगी के लिए भोजन की सावधानी बहुत आवश्यक होती है। कितने ही दिनों तक बीमार रहने के बाद रोगी कमजोर हो जाता है। रोग से मुक्त होने पर, रोगी अपनी निर्बलता को दूर करना चाहता है। उस समय भी भोजन के सम्बध में प्रायः बड़ी भूल होती है। शक्ति उत्पन्न करने के लिए ऐसे भोजन प्रारम्भ किये जाते हैं, जिनको पचाना उस समय कठिन होता है। चतुर चिकित्सक बीमारी के बाद बड़ी सावधानी से काम लेते हैं। परन्तु जिनको ज्ञान नहीं होता, वे रोगी को गरिष्ठ भोजन देकर अथवा दिलाकर फिर रोगी बनाते हैं। इस प्रकार रोगी कई-कई बार रोगों का शिकार होता है।

इन सभी बातों का सम्बध भोजन के साथ है। इनका ज्ञान न होने से भोजन का लाभ नहीं उठाया जा सकता। शरीर का पालन और संरक्षण उसी अवस्था में सम्भव है, जब आवश्यकता और परिस्थिति को देखकर भोजन की व्यवस्था की जाय। ऐसा न करने से भोजन का प्रकोप हमको कभी सुखी नहीं होने देता। लाभ पहूँचाने के स्थान पर, वह दूषित और विषाक्त हो जाता है।

एक छोटी-सी घटना है। सम्पन्न परिवार की एक युवती चौबीस दिनों के बाद बीमारी से उठी थी। पाँच छः दिन उसके पथ्य के बीत चुके थे। घर के लोगों ने उसके खाने के लिए वैद्य से पूछा और यह निश्चित हो गया कि उसको दूध दिया जाय। इसके बाद उस स्त्री को दूध दिया जाने लगा। लगभग दस दिन और बीत गये। उसे देखने का मुझे अवसर मिला। घर के लोगों ने उसे दिखाकर बताया कि इसे हलका सा बुखार फिर रहने लगा है। मैंने जब देखा, उस समय भी उसको ज्वर था। अनेक प्रकार की बातें पूछने के बाद ज्ञात हुआ कि उस निर्बल स्त्री को प्रतिदिन दो सेर से भी अधिक दूध दिया जाता है और दूध दिया जाता है भैंस का।

मेरे पूछने पर घर के लोगों ने बताया कि दूध देने के लिए तो वैद्य ने स्वय कहा था। मैंने विश्वास नहीं किया कि कोई समझदार वैद्य इतनी बड़ी बीमारी के बाद, शरीर की निर्बल अवस्था में, इतना दूध देने की राय देगा। भैंस का दूध तो गरिष्ठ होता ही है। उसी दिन से मैंने उसका दूध एकदम बंद करा दिया और दूध के स्थान पर फल दिलाने की व्यवस्था करा दी। इसका फल यह हुआ कि उसे जो ज्वर पुन. रहने लगा था, वह स्वय दूर हो गया।

रोग के निरंतर आक्रमण

रोगों का क्रम भोजन सबधी भूलों के कारण ही चलता है। एक बार रोग से छुटकारा पाने के बाद लोग भोजन के सबध में बड़ा अन्याय करते हैं। उनको इस बात का ज्ञान नहीं होता कि रोगी अवस्था में पाचन-क्रिया निर्बल हो जाती है। और यह निर्बलता उस समय और बढ़ जाती है जब रोगों का क्रम चलता है। मैंने बड़े दुःख के साथ देखा है कि लोग दवाएँ करते रहते हैं और मन-माना भोजन करते जाते हैं। उनको अपने शरीर का ज्ञान नहीं होता। डाक्टर और वैद्य प्रायः इन बातों पर ध्यान भी नहीं देते। फलतः रोगी दवाएँ करता रहता है और रोगी भी बना रहता है। हमारे शरीर के स्वास्थ्य का संबध, हमारे भोजन के साथ है, दवाओं के साथ नहीं। यदि भोजन की व्यवस्था ठीक न हो और उसमें सुधार न किए जायँ तो औषधियाँ कभी किसी को नीरोग नहीं कर सकतीं। इसलिए नीरोग होने के लिए भोजन पर ध्यान देना अत्यावश्यक है।

भोजन के संबध में दो बातों का समझना अत्यन्त आवश्यक है। भोजन

के पचाने का कार्य और मल का विसर्जन। यदि इन दोनों बातों की सावधानी और जानकारी नहीं है तो शरीर का नीरोग रखना असम्भव है। एक बार बीमारी से अच्छे हो जाने पर पुनः बीमार हो जाना इस बात का प्रमाण है कि रोगी को जो भोजन दिया गया है, उसके पाचन और मल-विसर्जन का कार्य यथोचित रूप में नहीं हुआ। शरीर के भीतर अपाचित भोजन और रुका हुआ मल किसी भी बीमारी का कारण है।

रोगों के बार-बार आक्रमण करने पर भोजन में सुधार होना आवश्यक है। कोई भी खाने की वस्तु ऐसी न दी जानी चाहिए जिसे पचाने में रोगी का शरीर असमर्थ हो रहा हो। पाचन शक्ति की निर्बलता में तो साग और फलों से अच्छा कोई दूसरा भोजन नहीं हो सकता। इनके सिवा दूसरी कोई भी गरिष्ठ वस्तु खाने को न दी जानी चाहिए। रोगी की सबसे पहली सावधानी यही है। इसके बाद दूसरे उपाय लाभकर हो सकते हैं।

हमारे भोजन में संयम का महत्वपूर्ण स्थान है। भोजन की उपयोगिता के साथ-साथ, शरीर के स्वास्थ्य के लिए खाने-पीने में प्रायः सयम की आवश्यकता पड़ती है। शरीर की अवस्था और पाचन-शक्ति के अनुसार भोजन की व्यवस्था करना, शरीर को स्वस्थ और नीरोग बनाना है।

बड़े आदमियों का भोजन

बड़े आदमियों से मेरा अभिप्राय उन लोगों से है जो सम्पत्तिशाली होते हैं। परंतु किसी अच्छी बात का ज्ञान नहीं रखते। उनके पास सम्पत्ति होती है किंतु उस सम्पत्ति का वे सदुपयोग नहीं जानते।

इन बड़े मनुष्यों में व्यवसायी, जमींदार, ताल्लुकेदार तथा दूसरी श्रेणी के सम्पत्तिशाली लोग हैं। उनके जीवन की सभी बातें अद्‌भुत होती हैं। खाने-पीने के विषय में ये लोग बड़ा ही असयम करते हैं। भगवान ने उन्हें पैसा दिया है अथवा रुपये-पैसे पैदा करने की उनको बुद्धि दी है। परन्तु अपने रुपये को ढंग और तरीके से खर्च करने की भगवान ने उन्हें बुद्धि नहीं दी। इसका कारण है।

जिस प्रकार वे सम्पत्ति के अधिकारी बन जाते हैं, वास्तव में उनकी वह सम्पत्ति नहीं होती। इसीलिए प्रकृति का यह नियम है कि वे अपनी उस सम्पत्ति का सुख कभी नहीं उठा पाते।

कोई बड़ा आदमी ऐसा नहीं है जो सदा बीमार न रहता हो। सम्पत्ति के नाम पर, सब कुछ होते हुए भी जीवन के सुख से उसे वञ्चित रहना पड़ता है। उसे और उसके घर के लोगों को बार-बार कहना पड़ता है भगवान ने सब कुछ दिया है लेकिन वह सुख से खाने-पीने नहीं देता।

बड़े मनुष्यों की जिन्दगी का जिनको अनुभव है, उन्हें उनके मुँह से इस प्रकार दुख भरी बातें सुनने का अवसर मिला होगा। इस प्रकार की बातें किसी एक घर की नहीं हैं और न किसी एक आदमी की हैं। मेरा तो अनुभव यह है कि जीवन की इस पीड़ा से उस प्रकार का कोई भी मनुष्य अछूता नहीं है।

इन बड़े मनुष्यों का प्रभाव समाज के साधारण लोगों पर पड़ता है। न तो बड़े मनुष्यों को खाने पीने का ज्ञान होता है और न उनको, जो उनसे इस प्रकार की बातें सीखा करते हैं। बड़े आदमियों और उनके घरों के स्त्री-बच्चों के बीमार रहने का एक मात्र कारण उनका भोजन है। वे भोजन करते हैं और उसके लिए अधिक से अधिक खर्च करते हैं परन्तु उनको इस बात का ज्ञान नहीं होता कि हमारा भोजन क्या है और किस प्रकार उसकी व्यवस्था करनी चाहिए।

रुपये होने से ही कोई सुखी नहीं होता। जीवन का सुख कुछ और है, जिसे सभी लोग नहीं जानते। सच्चा सुख शरीर का स्वास्थ्य है और स्वास्थ्य भोजन पर निर्भर है। रुपये के द्वारा स्वास्थ्य बाजार में या किसी दूकान पर खरीदा नहीं जा सकता। शरीर की रक्षा और स्वास्थ्य की व्यवस्था भोजन की जानकारी के द्वारा होती है। इसके बिना असम्भव है। जो लोग इसकी अवहेलना करते हैं और रुपये के बल पर जीवन का सुख उठाना चाहते हैं, उनको जीवन भर सुखों के लिए लालायित रहना पड़ता है।

साधारण श्रेणी के स्त्री-पुरुषों को भोजन-सम्बंधी बातों का ज्ञान नहीं होता। वे लोग बड़े मनुष्यों के यहाँ जो कुछ देखते हैं, उसी का अनुकरण करने की चेष्टा करते हैं। इसका फल उनके लिए और भी घातक हो जाता है। भोजन की सादगी, खाने-पीने में हमेशा लाभप्रद है। परन्तु बड़े आदमियों के यहाँ ऐसा

नहीं होता। प्रत्येक दिन और प्रत्येक बार उनके यहाँ जिस प्रकार के भोजन किये और कराये जाते हैं, वे सर्वथा गरिष्ठ और अस्वास्थ्यकर होते हैं। रुपये-पैसे के द्वारा उन भोजनों को रुचिपूर्ण बनाया जाता है। उनके द्वारा शारीरिक उन्नति की बड़ी-बड़ी आशाएँ की जाती हैं। परन्तु उनके फल उलटे निकलते हैं। और निकलने भी चाहिएँ।

बड़े मनुष्यों के भोजनों में पूड़ी, पकवान और मिठाइयों को अधिक स्थान मिलता है। गरिष्ठ होने के साथ-साथ इनमें और भी कई प्रकार के दोष हैं। इस प्रकार के भोजन प्रायः हानिकारक होते हैं। ये बड़े आदमी स्वयं इन भोजनों के द्वारा हानि उठाते हैं, बीमार पड़ते हैं और उनके यहाँ जो लोग जाते हैं, उनको भी वे लोग बीमार बनाते हैं।

इन लोगों का समाज के दूसरे लोगों पर प्रभाव पड़ता है। सम्पत्तिशाली न होने पर भी लोग खाने-पीने का ज्ञान इन बड़े आदमियों से सीखते हैं। इनकी अवस्था और भी संकटपूर्ण बन जाती है। इसलिए कि रुपये के अभाव में इन्हें प्रायः नक़ली वस्तुओं को खरीदकर अपना काम चलाना पड़ता है। इस प्रकार की चीज़ें शरीर और स्वास्थ्य के लिए और भी अधिक घातक होती है।

भोजन और श्रम

भोजन के साथ शारीरिक परिश्रम का सम्बन्ध है। जो लोग परिश्रम नहीं करते, उनके शरीर भोजन को ठीक-ठीक पचा नहीं पाते। यह नियम सभी के साथ लागू है। सम्पत्तिशाली परिश्रम नहीं करते। परिश्रम करने की वे आवश्यकता भी नहीं समझते। उनकी समझ में जीवन का यही सुख है। जो स्त्री-पुरुष परिश्रम का कोई कार्य नहीं करते। वे शरीर से असमर्थ हो जाते हैं, बड़े दुख की बात तो यह है कि साधारण स्त्रियों और पुरुषों में भी इसी को महत्व दिया जाता है। इसका दुष्परिणाम शरीर और स्वास्थ्य पर पड़ता है। मनुष्य जो भोजन करता है, उसको पचाने के लिए परिश्रम करना आवश्यक होता है। सम्पत्तिशाली स्त्री और पुरुष परिश्रम के शत्रु होते हैं। उनकी पाचन इसके फल-स्वरूप निर्बल हो जाती है। उनके जीवन की एक ओर यह दुरवस्था है और दूसरी ओर उनका गरिष्ठ भोजन है। दोनों मिलकर उनके शरीर निकम्मा और अयोग्य बना देते हैं। इसका परिणाम केवल रोग होता है।

जिन खाद्य पदार्थों के पचाने में, पाचन-शक्ति को कठिनाई उठानी पड़ती है अथवा भोजन के जो पदार्थ सरलता से नहीं पचते, उन्हें गरिष्ठ भोजन कहते हैं। इस प्रकार के भोजन कभी भी अभीष्ट नहीं होते। पूड़ी-पकवान और विभिन्न प्रकार की मिठाइयाँ पाचन-शक्ति को निर्बल बनाती हैं। कुछ तरकारियों और दालों का भी यही हाल है। जिन लोगों को शारीरिक परिश्रम अधिक करना पड़ता है, उनकी पाचन-शक्तियाँ तीव्र होती हैं। साधारण पढ़े-लिखे व्यक्तियों की अपेक्षा किसानों और मजदूरों का भोजन, बहुत अंशों में भारी होता है। परन्तु वे लोग उसके पचाने की शक्ति भी रखते हैं।

परिश्रम न करनेवाले व्यक्तियों का भोजन कभी भी गरिष्ठ न होना चाहिए। खाने में जितनी पकवान की वस्तुएँ होती हैं, सभी गरिष्ठ होती हैं। भोजन की इस उपयोगिता का जिनको ज्ञान नहीं होता, वही लोग इस प्रकार की भूलें करते हैं। और शारीरिक व्यथा उत्पन्न होने पर भगवान को दोष देते हैं।

अधिक भोजन अपराध है

आवश्यकता से कम भोजन जिस प्रकार शरीर को क्षीण बनाता है, आवश्यकता से अधिक भोजन उसी प्रकार शरीर के स्वास्थ्य के लिए घातक होता है। एक बात और भी समझ लेने की आवश्यकता है कि कम भोजन करना, प्रकृति के निकट उतना बड़ा अपराध नहीं है, जितना बड़ा अपराध अधिक भोजन करना है। कम भोजन करने के कारण कुछ अधिक दिनों में शरीर को क्षति पहुँचती है। परन्तु अधिक भोजन करने के कारण बहुत शीघ्र उसका दण्ड मिलता है। भोजन के लोभी और पेटू व्यक्तियों की कहानियाँ नित्य ही देखने और सुनने में आती हैं। कहीं पर मुफ्त का भोजन मिल जाने के कारण एक बार भी अधिक भोजन कर लेने से दो-चार घण्टे में ही शरीर में कुछ-न कुछ अनर्थ उत्पन्न हो जाता है।

अधिक भोजन करनेवालों के अनावश्यक उदाहरण देना यहाँ पर अभीष्ट नहीं है। फिर भी प्रकाश डालने के लिए कुछ बातों की आवश्यकता पड़ती है। रुपये-पैसे से सम्पन्न होने पर भी एक पण्डितजी बहुत लोभी थे। वे किसी के यहाँ भोजन करने गये और उन्होंने भूख से अधिक भोजन किया। रात को नौ वे अपने घर लौट आये। आधी रात के बाद उनकी तबीयत कुछ गड़बड़

होने लगी और सुबह होने से कुछ पहले ही उनको दस्त आने लगे। कई बार पाखाने जाने के बाद उन्हें उलटी भी होने लगी।

पंडितजी का यह हाल देखकर घर के लोग बहुत घबराये। बुखार की अवस्था में शरीर का जो व्यतिक्रम पैदा हुआ, उसे लोगों ने अच्छा नहीं समझा। विवश होकर घर के लोगों को डाक्टर बुलाना पड़ा। दूसरे दिन भी हालत ज्यों-की-त्यों रही। औषधि का बहुत कुछ प्रबन्ध करने और रुपये बरबाद करने के बाद चौथे दिन उनकी अवस्था में कुछ परिवर्तन हुआ। पंडितजी हँसोड़ व्यक्ति थे। उनकी दशा जब ठीक हुई तो उन्होंने अपने खाने-पीने की उन बातों को बताया जिनके कारण उनको यह कष्ट उठाना पड़ा और कई दिनों तक डाक्टर के बुलाने में उनको रुपये खर्च करने पड़े। जिस समय मनुष्य अधिक भोजन करता है, उस समय उसे इस बात का ज्ञान नहीं होता कि इसका फल क्या होगा।

अधिक भोजन करने के अपराधी प्रायः वे ही लोग होते हैं, जिनके पास खाने-पीने का कुछ अभाव नहीं होता और अधिक से अधिक खाकर मोटे-ताज़े और सुखी बनना चाहते हैं। परतु ऐसा करके वे कितना बड़ा अपराध करते हैं, इसका न तो उन्हें ज्ञान होता है और न वे इस बात को कभी सोचते ही हैं। रुपए पैदा कर लेने अथवा किसी प्रकार सम्पत्ति के अधिकारी हो जाने पर कोई अधिक भोजन कर सके, प्रकृति को यह स्वीकार नहीं है। शारीरिक परिस्थिति जितना भोजन चाहती है, प्रत्येक मनुष्य उतने ही भोजन का अधिकारी है। शरीर-रचना के साथ प्रकृति का यह नियम अटूट है। किसी का धन और बल इसमें सहायता नहीं करता।

मेरा अभिप्राय सम्पत्तिशालियों के विरुद्ध लिखना नहीं है। परन्तु भोजन के दुरुपयोग के उदाहरण, अधिकतर उन्हीं लोगों में मिलते हैं जिनके पास रुपये-पैसे अधिक हैं, वे इसलिए अधिक-से-अधिक और कीमती-से-कीमती भोजन करना चाहते हैं कि वे सम्पत्तिवाले हैं। उनका यह विश्वास, उनके जीवन का अपराध हो जाता है और उसके फलस्वरूप भीषण कष्ट भोगते हैं।

छोटे बच्चों के साथ अन्याय

छोटे लड़कों के खाने-पीने में प्रायः लोग अन्याय करते हैं। धनिकों के घरों में बच्चों के खिलाने के लिए जो कुछ किया जाता है वह तो आश्चर्य से भी आगे

हैं। परन्तु निर्धन परिवारों में भी कम मूर्खता नहीं होती। छोटे बच्चों का शारीरिक विकास स्वाभाविक ढंग से होना चाहिए। उनको स्वस्थ और शक्तिशाली बनाने के लिए किसी विशेष प्रबंध की आवश्यकता नहीं होती। परतु माता-पिता इस स्वाभाविकता को महत्व नहीं देते। वे अधिक खिलापिलाकर, बहुत थोड़े दिनों में उन्हें जवान बनाना चाहते हैं। बच्चों की बीमारियों का यही कारण होता है।

जिन छोटे लड़कों को ऊपर का दूध आवश्यक से अधिक दिया जाता है, वह प्राय. हानिकारक होता है। कई परिवारों में चार पाँच वर्ष के बच्चों को औटा हुआ दो-ढाई सेर दूध देते हुए मैंने देखा है। उस अवस्था में इतना दूध पचाने की शक्ति बालक नहीं रखते। रोकने पर भी माता-पिता पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इस अधिकता के कारण छोटे बच्चों के लीवर खराब हो जाते हैं और अधिकांश बच्चे उसी बीमारी में मर जाते हैं। भोजन की यह अधिकता प्रकृति के नियमों के बिल्कुल विरुद्ध है। माता-पिता की भूलों का फल छोटे बच्चों को भुगतना पड़ता है।

भोजन का क्रम

खाने-पीने का क्रम ऐसा होना चाहिए, जिससे कभी अपच न हो। जहाँ पर कोई क्रम नहीं होता और बिना भूख के भोजन किया जाता है, वहाँ पर निश्चित रूप से बीमारी उत्पन्न होती है। छोटे बच्चों के सबध में इस प्रकार की भूलें अधिक की जाती हैं। निर्धन और धनिक दोनो प्रकार के परिवारों में, माता-पिता मूर्खता करते हैं। बच्चों को बार-बार भोजन खिलाना हानिकारक होता है। इससे लाभ नहीं होता। हानि ही अधिक होती है।

दूध पीनेवाले छोटे बच्चों से लेकर सयाने बच्चों तक सभी के खाने-पीने का एक क्रम होना चाहिए। थोड़ी-थोड़ी देर में उन्हें खिलाना माता पिता की बहुत बड़ी मूर्खता है। इसमें बच्चों का अपराध नहीं होता। अपराधी माता-और पिता होते हैं। बच्चों के खाने-पीने का एक क्रम होता है। उसीके हिसाब से उन्हें खिलाना और पिलाना चाहिए। यदि कभी उनके शरीर में किसी प्रकार का विकार उत्पन्न हो तो उनका भोजन रोक देना ही पहली औषधि है। यदि ऐसा किया जाय तो उत्पन्न होनेवाला विकार अपने आप नष्ट हो जाता है।

शरीर के कुछ अंग और उनके कार्य

शरीर को स्वस्थ और नीरोग रखने के जितने भी साधन हैं। उनमें भोजन प्रमुख है। इसीलिए शरीर के प्रत्येक अंग का सम्पर्क भोजन के साथ है। इतना ही नहीं, कुछ अंग तो ऐसे हैं, जिनके संबंध में जानना और समझना अत्यावश्यक है।

भोजन के संबंध में यथोचित ज्ञान रखने के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि उसकी अन्य बातें भी समझी जायँ। मनुष्य जो भोजन करता है, मुख में पहुँचकर उसका कार्य किस प्रकार आरम्भ होता है। उसके बाद वह शरीर के किस अंग में जाता है और किस प्रकार वह हमारे शरीर का संचालन करता है, आदि बातों को समझने के लिए शरीर के कुछ प्रमुख अंगों और उनके कार्यों की जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है।

हमारी खाद्य सामग्री में अनेक प्रकार की वस्तुएँ हैं। सभी के गुण और स्वभाव अलग-अलग होते हैं। भिन्न-भिन्न प्रकार के पदार्थों से भिन्न-भिन्न प्रकार के तत्व प्राप्त होते हैं और वे तत्व शरीर के अंगों में विभिन्न रूप में काम करते हैं। इस अवस्था में, शरीर के भीतर प्रमुख काम करनेवाले अंगों की बनावट और उनके कार्यों का समझना हितकर सिद्ध होगा।

हमारा वक्ष

वक्ष का स्थान छाती पर कुछ बाएँ और कुछ दाहिने होता है। इसका विभाजन एक हड्डी के द्वारा होता है। इसके ऊपरी भाग पर पसलियों का संरक्षण रहता है। पसलियों की कुल संख्या चौबीस होती है, बारह दाहिनी ओर और बारह बाईं ओर।

वक्ष की बनावट देखने में सुडौल मालूम होती है, इसके किनारे चिकने होते हैं। इसमें किसी प्रकार के गड्ढे नहीं होते। पसली के नीचे कुछ ढालू होता है। छोटे बच्चों का वक्ष कुछ गोलाई के साथ होता है। सभी के वक्ष की बनावट एक-सी नहीं होती। जब इसमें किसी प्रकार का कोई रोग हो जाता है, तो उसकी आकृति में परिवर्तन हो जाता है।

स्वस्थ मनुष्यों के वक्ष की माप बत्तीस इञ्च से लेकर चौंतीस इंच तक की होती है। साधारण साँस लेने में यह माप एक इंच अधिक हो जाती है।

गहरी साँस लेने पर यह वृद्धि और भी अधिक हो जाती है।

जो लोग व्यायाम करते हैं, उनके वक्ष की माप प्रायः अधिक होती है और जिनका स्वास्थ्य दुर्बल होता है, उनकी माप स्वतः कम होती है। वक्ष-परीक्षा के लिए एक यंत्र होता है, उसको अँगरेजी में स्टेथसकोप कहते हैं। यह यंत्र दो प्रकार का होता है, एक नल का और दो नल का। परन्तु आजकल आमतौर पर दो नल का स्टेथसकोप ही अधिक व्यवहार में आता है।

रीढ़ की बनावट

पीठ की इस रीढ़ को मेरुदण्ड भी कहते हैं। गर्दन के नीचे से लेकर कमर तक इस रीढ़ की लम्बाई होती है। इसकी बनावट कुछ ऐसी होती है। जिससे ज्ञात होता है कि एक हड्डी पर दूसरी हड्डी रखी हुई है। शरीर के समस्त भार का सम्हालना इसी रीढ़ का काम होता है। इस भार को सहन करने के लिए रीढ़ को स्वभावत. सुदृढ़ होना चाहिए। समूचे मेरुदण्ड में छब्बीस हड्डियाँ होती हैं।

जिस यन्त्र से वक्ष की परीक्षा होती है, उसके रोगी और नीरोग होने का निर्णय किया जाता है, उसी यन्त्र के द्वारा मेरुदण्ड की परीक्षा भी की जाती है। डाक्टर लोग उस यन्त्र का प्रयोग करके मेरुदण्ड की वास्तविक और विकृत दशा का अनुसधान करते हैं। किसी रोग से प्रभावित होने पर यह रीढ़ विकृत हो जाती है और उसमें टेढ़ापन पैदा हो जाता है। उस यन्त्र के द्वारा डाक्टर उसकी परीक्षा करके रोग का अनुसधान करते हैं।

फेफड़े और उनके कार्य

फेफड़े दो होते हैं और उनका स्थान वक्ष के दोनों ओर है, हमारे शरीर में जो रक्त होता है, उसको शुद्ध बनाने का कार्य फेफड़ों के द्वारा होता है, वक्ष-स्थल में जितना स्थान होता है, उसमें हृत्पिण्ड को छोड़कर शेष सम्पूर्ण स्थान फेफड़ों से घिरा हुआ है। हृत्पिण्ड के दोनों ओर फेफड़ों का स्थान है। दाहिनी ओर अवस्थित फेफड़ा दाहिना फेफड़ा और बाईं ओर का बायाँ फेफड़ा कहलाता है। इनका रंग कुछ मटमैला होता है और ये स्पञ्ज की भाँति सिकुड़े रहते हैं।

जो फेफड़ा दाहिनी ओर है, उसके तीन भाग होते हैं और बाईं ओर के फेफड़े के दो। ये विभाग मास-पेशियों के द्वारा बने होते हैं। जीभ के मूल भाग

के पीछे एक गड्ढा-सा होता है, यह माँस-पेशियों से बना होता है और लगभग पाँच इञ्च लम्बा होता है। इसे गले का कोष कहते हैं। नाक के मार्ग से जो वायु प्रवेश करता है, वह पहले इसी कोष में जाता है। उसके बाद वह फेफड़ों में पहुँचता है।

फेफड़ों के द्वारा रक्त के परिमार्जन का कार्य होता है। स्वच्छ और शुद्ध वायु मिलने के कारण फेफड़े स्वस्थ रहते हैं और दूषित वायु से वे रोगी हो जाते हैं। फेफड़ों के खराब होने के और भी कारण हैं। बीड़ी, सिगरेट और तम्बाकू के पीने से भी फेफड़े खराब और रोगी हो जाते हैं। फेफड़ों के रोगी होने से शरीर में अनेक प्रकार के रोग पैदा होते हैं।

फेफड़ों के रोगी होने से खाँसी का आना आरम्भ होता है। खाँसी एक भयानक रोग है और शरीर के अन्यान्य रोगों का लक्षण है। जिसे लगातार बहुत दिनों तक खाँसी आती है, उसे सैकड़ों रोगों से ग्रसित रोगी समझना चाहिए।

खाँसी अनेक प्रकार की होती है। उनमें से कोई भी खाँसी अच्छी नहीं होती। खाँसी का रोग जितना ही पुराना होता जाता है, उतना ही वह स्थायी और अमिट होता जाता है। पुरानी खाँसी का रोग अच्छा होना कठिन हो जाता है।

हृदय की बनावट और गति

मनुष्य के जीवन में उसके हृदय का सर्वोपरि महत्व है। उसकी श्रेष्ठता ने ही मनुष्य को, मनुष्य बनाया है। मनुष्य के शरीर में जितने भी अंग-प्रत्यंग हैं, उनकी-अपेक्षा सभ्यता और शिक्षा ने मनुष्य के हृदय को अधिक परिवर्तित किया है। इसकी श्रेष्ठता और उदारता से मानव-जीवन को बड़ी से बड़ी महानता प्राप्त हुई है।

हृदय की बनावट नाशपाती के रूप में होती है। हाथ की मुट्ठी बाँध लेने पर, मुट्ठी का जो आकार-प्रकार बन जाता है, कुछ उतना ही बड़ा हृदय माना जाता है। वक्षस्थल के भीतर बायीं ओर, दोनों फेफड़ों के बीच हृदय का स्थान होता है। नीचे की अपेक्षा हृदय का ऊपरी भाग अधिक चौड़ा होता है। इसके ऊपर एक आवरण होता है, यह आवरण पतली झिल्ली का होता है। इस आवरण में एक प्रकार का रस होता है, जिससे हृदय तर रहा करता है।

देखने में हृदय एक पिण्ड मालूम होता है। इसीलिए इसको हृत्पिण्ड

कहते हैं। इसका भीतरी भाग खोखला होता है। हृत्पिण्ड शरीर के छोटे बड़े सभी अंगों में रक्त पहुँचाने का काम करता है। सम्पूर्ण शरीर में धमनियाँ फैली हुई हैं, उन्हीं के द्वारा रक्त प्रवाहित होता है और शिराओं के द्वारा दूषित रक्त लौटकर हृत्पिण्ड में एकत्र होता है। हृदय का यही कार्य है। दूषित रक्त का संशोधन और परिष्कार फेफड़ों के द्वारा होता है। विशुद्ध होने के बाद रक्त हृत्पिण्ड में एकत्र होता है और वहाँ से संचालित होकर सम्पूर्ण शरीर में पहुँचता है। इस प्रकार रक्त का दूषित और विषाक्त अंश लौटकर फिर उस पिण्ड में आ जाता है। विशुद्ध रक्त का रंग चमकीला और लाल होता है, परन्तु लौटने पर दूषित और विषाक्त हो जाने के कारण वह गदला हो जाता है और उसका रंग बैंगनी रंग लिए हुए कुछ काला हो जाता है।

नाक के द्वारा जो स्वच्छ वायु फेफड़ों में जाती है, उसी के द्वारा रक्त का संशोधन होता है। फेफड़े नाक से लौटती हुई वायु के द्वारा विषाक्त अंश को निकालकर बाहर फेंकने का कार्य निरन्तर करते रहते हैं। यदि ये विषाक्त अंश नाक से निकलनेवाली वायु के द्वारा कुछ देर के लिए भी रुक जायँ तो उनसे शरीर में भयानक बीमारियों और पीड़ाओं की उत्पत्ति होती है।

शरीर के स्वास्थ्य के लिए हृदय का कार्य सबसे अधिक श्रेष्ठ और महत्त्वपूर्ण होता है। हृत्पिण्ड बराबर सिकुड़ता और फैलता रहता है। संकोचन के द्वारा फेफड़ों का शुद्ध किया हुआ रक्त वह अपनी ओर खींचता है और फैलाव के साथ वह उस रक्त को धमनियों में छोड़ देता है। शरीर की प्रत्येक धमनी उस विशुद्ध रक्त को लेकर सम्पूर्ण शरीर में पहुँचाती रहती है। हृदय-पिण्ड का सिकुड़ना और फैलना हृदय की गति कहलाती है। यह गति निरंतर अपना काम करती रहती है। वह कभी रुकती नहीं है। यदि वह रुक जाय तो मनुष्य की मृत्यु हो जाती है।

हमारी हड्डियाँ

शरीर में हड्डियों का एक ढाँचा होता है। यह ढाँचा ही शरीर के सम्पूर्ण अंगों का आधार होता है। हड्डियों के ऊपर मांस और स्नायुओं का जमाव होता है और सबके ऊपर चमड़ा होता है। जिन हड्डियों से शरीर का ढाँचा बनता है, वे अत्यन्त सुदृढ़ होती हैं। इनकी दृढ़ता के संरक्षण में ही शरीर के

कोमल अंगों का बचाव होता है। इन हड्डियों का भीतरी भाग पोला होता है और उनके पोले स्थान में मज्जा होती है।

छोटी अवस्था में शरीर की हड्डियाँ बहुत कोमल होती हैं। अवस्था के साथ-साथ उनको विकास और दृढ़ता प्राप्त होती है। उपयोगी भोजनों के द्वारा इनकी वृद्धि में सहायता मिलती है। शुद्ध वायु और सूर्य की किरणों से शरीर की रगों और हड्डियों को शक्ति प्राप्त होती है। इसीलिए लड़कों और लड़कियों को स्वतन्त्र वायु और सूर्य की धूप में निकलना, चलना-फिरना, दौड़ना और परिश्रम करना आवश्यक होता है। इससे हड्डियाँ मजबूत बनती हैं। उनमें क्षमता उत्पन्न होती है और वे सुदृढ़ होकर शरीर की रक्षा करने में अधिक सफल होती हैं।

भोजन का प्रत्येक पदार्थ हड्डियों को शक्ति और दृढ़ता नहीं देता। भोजन की वस्तुओं के विवरण में उनका परिचय मिलेगा, जिनके द्वारा शरीर की हड्डियाँ विकसित होती हैं, दृढ बनती हैं और शरीर को सुरक्षित रखने के योग्य तैयार होती हैं।

जिन लड़के लड़कियों और स्त्री-पुरुष के जीवन में आवश्यक भोजनों का अभाव रहता है अथवा जिनको स्वस्थ वायु और सूर्य की किरणें प्राप्त नहीं होतीं उनके शरीर सदा निर्बल रहा करते हैं। जीवन की इस उपयोगिता से जो वंचित रहते हैं, वे अपने शरीर को स्वयम् निर्बल बनाने का कार्य करते हैं। इस प्रकार का अभाव प्रायः उनके जीवन में अधिक रहा करता है, जो अधिक क्षमता रखते हैं और जीवन की जिन परिस्थितियों को वे अपना सुख-सौभाग्य समझते हैं, प्रकृति के विरुद्ध होने के कारण वे ही उनके दुख और दुर्भाग्य की कारण बन जाती हैं।

हमारे दाँत

मनुष्य जो भोजन करता है, उसी से वह जीवित रहता है और जीवन देनेवाले पदार्थों को उपयोगी बनाकर शरीर में पहुँचाने का कार्य हमारे दाँत करते हैं। यदि दाँत न होते तो मनुष्य अपने भोजन से लाभ न उठा सकता और उस लाभ के अभाव में उसका जीवन आज का-सा जीवन न रहता।

जन्म लेने के बाद कुछ दिनों में बच्चों के मुँह में दाँत निकलते हैं। इन दाँतों के आने में अधिक समय नहीं लगता। प्रकृति हमारी आवश्यकता का

सदैव ध्यान रखती है। बच्चा जब तक माँ का दूध पीता है, और उसे बाहरी भोजनों की आवश्यकता नहीं पड़ती, उस समय तक उसके दाँत नहीं निकलते।

बच्चों को जब बाहरी भोजन की आवश्यकता होती है, उसके पहले ही दाँत निकलने आरम्भ हो जाते हैं और छः-सात महीने की अवस्था से लेकर लगभग दो वर्ष की आयु तक बच्चों के दाँत आ जाते हैं। ये दाँत दूध के दाँत कहलाते हैं। दूध के दाँत नाम पड़ने का कारण यह है कि जिस अवस्था में बच्चों के ये दाँत आते हैं, उस समय बच्चे माँ का दूध पीते रहते हैं। माँ के दूध के अभाव में उन्हें ऊपरी दूध दिया जाता है। दूध के अतिरिक्त वे और कुछ खाने के योग्य नहीं होते। उनकी यह अवस्था दूध की अवस्था कहलाती है। इसीलिए उनको दूध के दाँत कहते हैं।

दूध के दाँत स्थायी नहीं होते। छः सात वर्ष की अवस्था में इनका हिलना और गिरना आरम्भ हो जाता है और एक-एक करके वे धीरे धीरे गिरते रहते हैं। वे एक साथ न तो निकलते ही हैं और न गिरते ही हैं, परन्तु लगभग बारह-तेरह वर्ष की आयु तक दूध के सभी दाँत गिर जाते हैं और उनके स्थान पर स्थायी दाँत निकल आते हैं। इसके बाद यौवनावस्था में एक दाँत और आता है, उसे सभी लोग 'अकल की दाढ़' कहते हैं। अंग्रेजी के लेखकों ने भी इसी नाम से (Wisdom teeth) स्वीकार किया है। इस दाढ़ के इस नाम का कुछ अभिप्राय है। लोगों की धारणा है कि यह दाढ़ किसी-किसी के सत्रह वर्ष की आयु के पश्चात् होती है और कुछ लोगों में अधिक समय लगता है। परन्तु चौबीस और पच्चीस वर्ष की अवस्था तक इस दाढ़ के निकल आने का समय माना जाता है।

अकल की यह दाढ़ सभी के आती है और उस समय आती है। जब मनुष्य को जीवन का ज्ञान और कुछ अनुभव प्राप्त होता है इसी आधार पर इसे अकल की दाढ़ (Wisdom teeth) कहते हैं। अंगरेजी-ग्रन्थकारों ने इस दाढ़ के निकलने का समय, इक्कीस वर्ष की अवस्था तक ही बताया है। इसके अतिरिक्त दूध के दाँतों के बाद जो और स्थायी दाँत निकलते हैं उनका समय भी अंगरेजी ग्रन्थकार सात वर्ष की अवस्था तक ही स्वीकार करते हैं। इससे ज्ञात होता है कि शीत प्रदेशों में, हमारे देश की अपेक्षा दाँत कुछ कम अवस्था

में ही निकल आते हैं।

देखने से ज्ञात होता है, कि दाँत हड्डियों के बने होते हैं। किन्तु बात कुछ और है। वे जिस चीज से बनते हैं, उनका मैटीरियल, हड्डियों के मैटरियल से भिन्न होता है। उनके निर्माण में विशेष रूप से जो सामग्री काम आती है, उसे डेन्टिन (Detine) कहते हैं। डेन्टिन में कोमलता होती है और वायु का संसर्ग और सम्पर्क पाकर वह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। डेन्टिन की यह प्रकृति है। इसीलिए दाँतों के ऊपर एनेमल (Enamel) नामक पदार्थ के सत की पालिश होती है। यदि यह पालिश न होतो दाँतों में कठोरता न उत्पन्न हो। एनेमल की पालिश से ही वे बड़े कठोर और श्वेत बनते हैं। इसके अभाव में डेन्टिन से बने हुए दाँत थोड़े ही दिनों में रोगी होकर नष्ट हो जाते। एनेमल की पालिश दाँतों की इस त्रुटि को दूर करती है और अधिक से-अधिक दिनों तक काम करने के लिए उनको उपयोगी बनाती है।

हानिकारक भोजनों के संसर्ग से, किसी रोग के कारण अथवा बुढ़ापा निकट आने पर दाँतों की यह पालिश नष्ट होने लगती है। उसी अवस्था में दाँतों में निर्बलता पैदा होती है। ठंढा पानी पीने में कष्ट होता है और रोगों का आक्रमण होता है। यह पालिश जितनी ही दाँतों से निकलती जाती है, दाँत उतने ही निर्बल होते जाते हैं। इन दाँतों के गिर जाने पर फिर, दाँत नहीं उत्पन्न होते। इसलिए हानिकारक वस्तुओं से दाँतों के बचाने की आवश्यकता होती है।

दाँतों के निर्बल होने पर भोजन करने का सुख मारा जाता है। इसलिए कि खाद्यपदार्थों के चबाने का कार्य दाँतों और दाढ़ों के द्वारा ही होता है। दाँतों की अपेक्षा दाढे अधिक मजबूत होती हैं। इसलिए वे दाँतों से अधिक दिनों तक ठहरती भी हैं। मुख में खाद्यपदार्थों के भलीभाँति चबाने से पाचन-क्रिया में अधिक सहायता मिलती है। जो लोग बिना पूर्ण रूप से चबाये हुए भोजन करते हैं, उनके परिपाक में अथवा उनकी पाचन क्रिया में बड़ी बाधा पड़ती है। दाँतों और दाढ़ों के निर्बल होने पर पाचन-क्रिया कमजोर पड़ जाती है। बुढ़ापे में भोजन हजम न होने का यही कारण है।

जब तक दाँतों और दाढों में किसी प्रकार की निर्बलता नहीं आती तब तक हमें उनका महत्व नहीं मालूम होता। जब वे निर्बल हो जाते हैं और अपना

कार्य ठीक-ठीक नहीं कर पाते, उस समय उनकी आवश्यकता और उपयोगिता का ज्ञान हमें होता है।

दाँतों के साथ हमारे शरीर के स्वास्थ्य का घनिष्ट सम्बंध है। निर्बल और रोगी दाँतोंवाला मनुष्य कभी स्वस्थ और नीरोग नहीं होता। भोजन से शरीर का पालन करनेवाले तत्वों का मिलना पाचन-क्रिया पर निर्भर है और दाँत पाचन-क्रिया में सहायक होते हैं। इसीलिए स्वस्थ और नीरोग शरीर के लिए, स्वस्थ और नीरोग दाँतों की आवश्यकता होती है। यदि मनुष्य सावधानी से काम ले और हानिकारक पदार्थों से दाँतों को सुरक्षित रखे तो वे अधिक से-अधिक आयु तक दृढ़तापूर्वक कार्य करते हैं। अन्यथा समय के पहले ही वे निर्बल और रोगी हो जाते हैं।

दाँतों की सहायता से ही बोलने और बातचीत करने में सहायता मिलती है। वे जितने ही निर्बल और ढीले होते हैं, बोलने में उतनी ही कठिनाई उत्पन्न होती जाती है। मुख और वाणी का सौन्दर्य बहुत-कुछ दाँतों के ऊपर निर्भर है। इसलिए दाँतों की रक्षा का हमें ठीक-ठीक ज्ञान होना चाहिए। और प्रारम्भ से ही उनको सुदृढ़ एवम् स्वस्थ बनाये रखने के लिए हमें प्रयत्न करना चाहिए।

क्षारोत्पादक गोलियाँ

मुख में भोजन के पहुँचते ही उनके चबाने का कार्य दाँतों और दाढ़ों के द्वारा आरम्भ हो जाता है। दाँतों का यह कार्य अनेक अर्थों में अत्यन्त उपयोगी और आवश्यक होता है। मुख में भोजन जितना ही चबाया जाता है उतना ही वह उपयोगी और काम का बन जाता है। उसके कई अभिप्राय हैं।

१—भोज्य पदार्थों की कठोरता मुलायम बन जाय। जिससे गले से उतरने में किसी प्रकार का कष्ट न हो।

२—मुख में गया हुआ भोजन का भाग, बारीक से-बारीक हो जाय।

३—भोजन में रुचि और स्वाद उत्पन्न हो जाय।

४—भोजन में गयी हुई किसी कठोर वस्तु का पता चल जाय।

५—सुगमतापूर्वक भोजन का परिपाक करने के लिए उसमें लार का सम्मिश्रण हो जाय।

मुख में भोजन चबाने के पाँच उद्देश्य हैं। इन्हीं उद्देश्यों को लेकर दाँत अपना काम करते हैं। सभी भोजन करनेवालों को इन बातों का ज्ञान नहीं होता। कितने ही लोग पेट में भोजन पहुँचाने के लिए, मुख को पेट का केवल द्वार समझते हैं। मुँह खोलते ही वे भोजन झोंकना आरभ करते हैं और बिना-अधिक चबाये हुए, उसे वे पेट में ले जाते हैं।

ऐसा करना एक बहुत बड़ी मूर्खता है। प्रकृति ने मुख को केवल द्वार नहीं बनाया है। भोजन का जो कार्य पेट में पहुँचने पर होता है, उसका प्रारभ मुख से ही होता है। यदि प्रारम्भिक कार्य उचित रूप में नहीं होता तो पेट में भोजन का ठीक-ठीक परिपाक नहीं होता और पाचन-कार्य भली-भाँति न होने से दो बातें पैदा होती हैं। पहली यह कि मल-विसर्जन का कार्य ठीक-ठीक नहीं होता और दूसरा यह कि भोजन से जिन पोषक तत्वों और जीवन तत्वों की प्राप्ति होती है, शरीर को उनसे अनेक अशों में वचित होना पड़ता है।

मुख में भोजन चबाने के ऊपर जो पाँच उद्देश्य लिखे गये हैं, उनमें सभी आवश्यक हैं और प्रकृति के नियमानुसार मुख में उन पाँचों की पूर्ति होती है। उन पाँचों में चार उद्देश्य अपने आप स्पष्ट हो जाते हैं। अन्तिम उद्देश्य पर कुछ प्रकाश डालना आवश्यक है।

मुख के भीतरी भाग में जहाँ से जीभ का प्रारंभ होता है, वहाँ पर लार उत्पन्न करनेवाली छः गोलियाँ होती हैं। इन गोलियों को लारोत्पादक पिण्ड भी कहते हैं। तीन-तीन गोलियाँ मुख के दोनों ओर होती हैं।

लारोत्पादक गोलियों से जो लार या रस उत्पन्न होता है, उससे मुख हमेशा तर रहता है। यदि यह लार न मिलती तो मुख सूख जाता। जिस समय भोजन मुख में जाता है और दाँत उसके चबाने का कार्य प्रारम्भ करते हैं, उसके साथ ही लारोत्पादक गोलियों से लार का निकलना आरंभ होता है और वह आकर मुख में गये हुए भोजनों में मिलती जाती है।

मुख में इस लार के मिलने का कार्य ठीक उसी प्रकार होता है, जिस प्रकार सूखा मसाला पीसते समय उसमें पानी के छींटे दिये जाते हैं। इससे मसाले के पीसने में आसानी होती है। साधारण तौर पर उन गोलियों से जो लार निकलती है और मुख में आती रहती है, उसकी अपेक्षा भोजन चबाते समय लार

अधिक मात्रा में निकलती है।

मुख में गये हुए भोजन में इस लार के मिलने का बहुत महत्व है। सूखे पदार्थों को लार के द्वारा गीला करके चबाने और पीसने में दाँतों को आसानी होती है। साथ ही उस लार में ऐसे तत्व होते हैं, जिनके भोजन में मिल जाने से, पाकस्थली में भोजन के परिपाक होने में सहायता मिलती है, भोजन से उपयोगी तत्वों को पृथक करने में सरलता होती है और अन्त में बचा हुआ भोजन का अनावश्यक अंश मल बनकर सरलतापूर्वक शरीर से बाहर हो जाता है। स्वस्थ और नीरोग शरीर के यही लक्षण हैं।

भोजन के संबंध में जितने अनुसंधान हो रहे हैं। सभी में दाँतों के इस कार्य को उतना ही महत्व दिया जा रहा है। भोजन के संबंध में दो बातें अधिक काम की हैं। एक तो यह कि उपयोगी भोजन खाने को मिले और दूसरा यह कि उनका हमारे शरीर में भली-भाँति पाचन कार्य हो। इन्हीं दोनों अवस्थाओं में शरीर को स्वास्थ्य मिल सकता है और वह सजीव तथा शक्तिशाली बन सकता है।

कुछ लोगों में जल्दी भोजन करने की आदत पायी जाती है और यह भी सत्य है कि इस प्रकार की आदत डाली और डलाई जाती है। सर्वसाधारण में इस मूर्खता को देखने का मुझे स्वयम् संयोग मिला है। जो लड़के और लड़कियाँ देर में भोजन करती हैं उनको डाँटा जाता है। जल्दी भोजन करने का अभिप्राय सर्वसाधारण में यह समझा जाता है कि जिससे कोई यह न समझ सके कि भोजन करनेवाला अधिक भोजन करता है। इसी आधार पर जो लोग कुछ देर में भोजन करते हैं, उनकी आलोचना की जाती है।

इस प्रकार की आलोचना केवल मूर्खता है। मुख में भोजन को चबाने की दृष्टि से जो थोड़ी-सी देर होती है, वह लाभ की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी है। परंतु जो लोग भोजन करते समय अनेक प्रकार की बातों में देर करते हैं, वह अनावश्यक होती है। भोजन से लाभ उठाने के लिए इन सभी बातों पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

आमाशय का कार्य

आमाशय का आकार कुछ मशक से मिलता जुलता होता है। इसका स्थान हृदय के नीचे और यकृत तथा प्लीहा के बीच में होता है। इसकी लम्बाई लग-

भग चौदह-पन्द्रह इंच और चौड़ाई पाँच इच के लगभग होती है। इसकी बनावट ऊपर की ओर अधिक चौड़ी और नीचे की ओर तग होती हैं। इसके ऊपरी भाग में एक मुख होता है जो खुलता और बन्द होता रहता है। आमाशय में आहार के पहुँचने से पाचन-क्रिया का कार्य होता है और उसके बाद भोजन आमाशय से निकलकर छोटी आँत में पहुँचता है इसमें अम्लरस उत्पन्न होता है और वह रस पाचन-क्रिया में सहायता करता है।

आमाशय में जो रस बनता है, वह खट्टा और नमकीन होता है। इस रस में भोजन को पचाने की शक्ति होती है। पेट में आमाशय का स्थान प्रमुख होता है, वहाँ पर पाचन-क्रिया का कार्य होता है। एक बार परिपाक हो चुकने पर भोजन का जो अश शेष रहता है, उसका पाचन-कार्य फिर प्रारंभ होता है और उस समय तक बराबर यह कार्य होता रहता है, जब तक भोजन के उपयोगी तत्व शरीर को प्राप्त नहीं हो जाते। अन्त में जो अनावश्यक भाग रह जाता है, वह मल कहलाता है और शरीर से बाहर होने के लिए वह मलाशय में एकत्र होता रहता है।

छोटी आँत और बड़ी आँत

पेट के भीतर दो आँतें होती हैं, छोटी आँत और बड़ी आँत। इन दोनों का सबध पेट की पाकस्थली के साथ है। छोटी आँत अधिक लम्बी और बड़ी आँत लम्बाई में कम किंतु मोटाई में अधिक होती है। छोटी आँत की बनावट गिंडी के समान पेट के एक ओर से दूसरी ओर तक फैली रहती है।

आँतें सभी प्राणियों के होती हैं। जिन प्राणियों को जितना अधिक भोजन खाकर पचाना पड़ता है, उसीके हिसाब से उनकी आँतें होती हैं। पेड़ और पौधों पर जीवित रहनेवाले पशुओं की आँतें बड़ी तथा माँसाहारी पशुओं की छोटी होती है। मनुष्य की आँत लम्बाई में बीस फीट से लेकर तीस फीट तक होती है, यह लम्बाई छोटी आँत की होती है परन्तु बड़ी आँत लगभग पाँच फीट से लेकर सात फीट तक होती है। इसकी मोटाई अधिक होती है। पेट के दाहिने भाग में दोनों आँतों का सम्मेलन होता है। आमाशय के बाद भोजनांश पहले छोटी आँत में और उसके बाद बड़ी आँत में जाता है।

संयम, नियम और विश्राम

भोजन के साथ-साथ संयम, नियम और विश्राम की बड़ी आवश्यकता है। शरीर के भीतर खाये हुये पदार्थों के पचाने का कार्य निरंतर होता रहता है। पाचन शक्ति को कभी-कभी विश्राम मिलना चाहिए। इससे उसकी शक्ति में वृद्धि होती है और मनुष्य की पाचन शक्ति बढ़ जाती है।

विश्राम मिलना स्वाभाविक है। कार्य और विश्राम निरंतर साथ-साथ चलते हैं। कार्य के बाद विश्राम मिलना आवश्यक होता है और विश्राम के बाद फिर कार्य होता है। दो में से किसी एक से काम नहीं चलता। विश्राम न मिलने से कार्य करनेवाली शक्तियाँ निर्बल हो जाती हैं। उनको शक्ति-सम्पन्न बनाने के लिए विश्राम दिया जाता है।

विश्राम का महत्व कम नहीं है। एक आदमी काम करते-करते थक जाता है। इसलिए उसे विश्राम दिया जाता है। प्रकृति के नियमानुसार कार्य और विश्राम दोनों जरूरी हैं। कार्य के बाद विश्राम पाने के लिए प्रकृति ने दिन के बाद रात्रि की रचना की है। दिन में मनुष्य काम करता है और रात में विश्राम। पशु-पक्षियों और दूसरे जीवों का भी यही हाल है। रात सभी के लिए विश्राम का काम देती है। जो रात को काम करते हैं वे दिन में विश्राम करते हैं। इस प्रकार कार्य और विश्राम का लगातार संबंध चलता है।

परिश्रम करनेवाले मजदूरों और किसानों को विश्राम की आवश्यकता होती है। मानसिक श्रम करनेवाले और लिखने-पढ़ने का जो काम करते हैं, वे भी विश्राम करते हैं। यदि विश्राम न मिले तो उनकी शक्तियाँ समाप्त हो जायँ और वे काम न कर सकें। विश्राम पाने के बाद कार्य करने की शक्तियों को जीवन मिलता है और वे फिर उत्साह के साथ काम करने लगती हैं।

प्रकृति का यह नियम जीवधारियों तक ही नहीं है। मशीनों से काम लेने-वाले कार्यकर्त्ताओं को इस बात का ज्ञान होता है और वे जानते हैं कि लगातार काम करने के बाद मशीनों को भी विश्राम दिया जाता है। यदि उन्हें विश्राम न मिले तो उनकी अवस्था में अनेक प्रकार की गड़बड़ी पैदा होती है। यही अवस्था जमीन की भी है। कृषक भूमि के इस स्वभाव को जानते हैं। इसीलिए

वे अपने खेतों को अधिक उपजाऊ बनाने के लिए कभी-कभी विश्राम दिया करते हैं। कई वर्ष तक खेतों को बोने के बाद एक साल के लिए जब उन्हें पड़ती रूप में छोड़ दिया जाता है तो आगामी वर्ष के लिए उनकी उर्वरा-शक्ति बढ़ जाती है। और जो कुछ उनमें बोया जाता है, उसकी पैदावार अधिक होती है। प्रकृति का यह नियम सर्वत्र लागू है।

हमारे शरीर को विश्राम की विशेष रूप से आवश्यकता है। इसकी पूर्ति न होने से शरीर की शक्तियों का ह्रास होता है। पाचन-शक्तियाँ जब विश्राम नहीं पातीं तो वे भोजन के पचाने का कार्य यथोचित रूप में नहीं कर सकतीं। इस प्रकार शरीर में विकार उत्पन्न होते हैं और कोष्ठबद्धता बढ़ने लगती है। इसको दूर करने के लिए विश्राम देने की अपेक्षा दूसरा और कोई अच्छा साधन नहीं है। प्रत्येक मनुष्य को इसका ज्ञान होना चाहिए।

विश्राम किस प्रकार दिया जाय

अब प्रश्न यह है कि पाचन-शक्तियों को विश्राम किस प्रकार करना चाहिए। इसके लिए सबसे पहले इस बात का ध्यान रखा जाय कि भोजन की वस्तुओं में बराबर परिवर्तन होता रहे। इससे रुचि में वृद्धि होती है और विश्राम भी मिलता है। दूसरी बात यह है कि एक-दो दिन यदि भारी भोजन चलते हैं अथवा ऐसी चीजें खाई जाती हैं, जिनके पचाने में कुछ अधिक समय लगता है तो उसके बाद कम से-कम एक दिन हलके पदार्थ खाये जायँ और उसके बाद फिर क्रम बदल दिया जाय। ऐसा करने से पाचन-शक्ति को प्रदीप्त होने के लिए कुछ साधन और अवसर मिल जाता है और उसका कार्य अच्छे ढंग से होने लगता है।

वस्तुओं के परिवर्तन के साथ साथ हलका भोजन करने की भी आवश्यकता होती है। इसका अभिप्राय यह है कि मनुष्य जितनी मात्रा में भोजन करता है, कभी-कभी उससे कम मात्रा में भोजन करे। शरीर की पाचन शक्ति को विश्राम देने का यह भी एक साधन है। इससे पाचन प्रणाली को कम परिश्रम करना पड़ता है। इससे उसकी संचित शक्ति समाप्त नहीं होती।

इस विश्राम की सभी को आवश्यकता होती है। परन्तु उसकी आवश्यकताएँ विभिन्न रूप में हैं। पाचन-शक्ति के अनुसार उसकी व्यवस्था करनी पड़ती है। मनुष्य-जीवन की विभिन्न परिस्थितियाँ भी इसका अलग-अलग कारण रखतीं

है। पाचन-प्रणाली के निर्बल होने पर विश्राम की अधिक आवश्यकता होती है। किसको कितना विश्राम चाहिए, इसे समझ लेना चाहिए। पाचन शक्तियाँ अपने विश्राम की माँग स्वयम् करती हैं।

मनुष्य जो भोजन करता है, उसका ठीक-ठीक परिपाक होना चाहिए। यदि उसमें कुछ गड़बड़ी होती है तो उस अवस्था में मल का विसर्जन ठीक-ठीक नहीं होता। फल यह होता है कि भूख कम लगती है। शरीर के भीतर जब मल अधिक मात्रा में एकत्र हो जाता है तो भूख बिल्कुल नहीं लगती। मनुष्य की भूल यह होती है कि उसको बिना समझे बूझे वह खाने-पीने का क्रम बराबर जारी रखता है। इससे हानि पहुँचती है। भूख न लगने पर अथवा मल के यथोचित रूप में विसर्जन न होने पर समझना चाहिए कि पाचन प्रणाली विश्राम चाहती है। उस अवस्था में उसे विश्राम देना आवश्यक हो जाता है।

एक बार भोजन

गिरती हुई पाचन शक्ति को उत्तेजित करने के लिए एक बार भोजन करने का भी विधान है। भोजन दिन में प्राय दो बार किया जाता है। जिनकी पाचन शक्ति निर्बल हो रही हो और खुलकर भूख न लगती हो, उन्हें एक बार भोजन करना चाहिए, इससे भोजन पचाने की अग्नि उत्तेजित होती है और पाचन-प्रणाली को विश्राम भी मिलता है।

यहाँ पर एक प्रश्न यह भी है कि दिन में किस समय एक बार भोजन किया जाय? साधारण तौर पर दो बार भोजन होता है। दोपहर को और सायंकाल अथवा रात में। इन दो बार के भोजनों में सायकाल अथवा रात का भोजन बन्द किया जा सकता है। इसका अभिप्राय यह भी है कि रात में मनुष्य सोता है। चलने फिरने अथवा परिश्रम करने का अवसर नहीं मिलता। इसलिए स्वभावत रात में पाचन-क्रिया का काम कम होता है। जब एक बार का भोजन बन्द करना पड़े तो सायकाल का भोजन बन्द करना ही उपयोगी होगा।

लड़कपन में अग्नि प्रदीप्त रहती है। इसलिए उस अवस्था में लड़कियाँ और लड़के कई बार भोजन करते हैं। अग्नि की यह गरमी जवानी के बाद गिरने लगती है और बुढ़ापा जितना ही निकट आता जाता है, परिपाक करने-वाली अग्नि क्षीण होती जाती है। बुढ़ापे में भूख के कम लगने का यही कारण

है। इसलिए बुढ़ापे में प्रायः लोग शाम को भोजन नहीं करते और कुछ लोग हलका-सा भोजन अथवा थोड़ा-सा दूध लेकर काम चला लेते हैं। इसका फल यह होता है कि उनकी निर्बल पाचन-शक्ति को अधिक विश्राम मिल जाता है और बुढ़ापे में शरीर रोगों से कुछ छुटकारा पा जाता है। अग्नि की क्षीणता में एक बार का भोजन एक अच्छा विधान है।

उपवास किया जाय

पाचन-शक्ति को विश्राम देने और उसकी अग्नि को तीव्र बनाने के लिए उपवास एक बड़ी सुन्दर व्यवस्था है। इसकी आवश्यकता रोज नहीं पड़ती। पाचन-शक्ति को देखकर उसकी आवश्यकता का अनुमान होता है। जिन्हें कोष्ठ-बद्धता की कोई शिकायत कभी न मालूम होती हो, उन्हें भी महीने में एक अथवा दो बार उपवास कर लेना अच्छा होता है। प्रत्येक अवस्था में उपवास से लाभ है। इससे शरीर में रोग नहीं उत्पन्न होते और जो विकार उत्पन्न होते हैं, वे अपने आप नष्ट हो जाते हैं।

शरीर की शुद्धि के लिए उपवास बहुत आवश्यक है। जिस प्रकार वस्त्र को साबुन और पानी से धोकर स्वच्छ बनाते हैं और शरीर के ऊपरी आवरण को स्नान करके शुद्ध करते हैं, उसी प्रकार शरीर के भीतरी आवरण को निर्मल बनाने की आवश्यकता होती है। आंतरिक अंगों को विशुद्ध करने के लिए, उपवास से अच्छी कोई व्यवस्था नहीं है। शरीर पर इसका बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है।

कई दिनों तक स्नान न करने से शरीर का ऊपरी भाग गन्दा और मैला हो जाता है। स्नान न करनेवालों को अनेक प्रकार की शारीरिक व्याधियाँ उठानी पड़ती हैं। नियमपूर्वक प्रतिदिन स्नान करने से जिस प्रकार मन और आत्मा प्रसन्न होता है, ठीक उसी प्रकार भीतरी अंगों को शुद्ध करने से मन में स्फूर्ति पैदा होती है, विकारों का नाश होता है और पाचन-शक्ति को उत्तेजना मिलती है। उपवास का मनुष्य के जीवन पर एक अद्भुत प्रभाव पड़ता है।

उपवास कई प्रकार से किए जाते हैं। इनकी आवश्यकता कोष्ठबद्धता और पाचन-क्रिया की निर्बलता में अधिक पड़ती है। उसी को देखकर, उपवास करने की व्यवस्था करनी चाहिए। आवश्यकतानुसार जो उपवास किये जाते हैं, उन्हीं से लाभ होता है। अपाचन से उत्पन्न होनेवाले विकारों को देखकर, उपवास

के नियम बनाये जा सकते हैं।

साधारण अवस्था में हलके और पाचक पदार्थों का सेवन भी साधारण उपवास में गिना जाता है। यदि शरीर में विकार और मल की अधिकता न मालूम होती हो तो इनसे ही लाभ हो जाता है। परन्तु विकारों के बढ़ने पर, मल के ठीक-ठीक विसर्जन न होने पर अथवा भूख के कम लगने पर उपवास का आश्रय लेना पड़ता है। उसकी व्यवस्था कई रूप में होती है—

१—हलका भोजन अथवा फलाहार।

२—दिन में एक बार भोजन अथवा अर्द्धोपवास।

३—पूरे चौबीस घण्टे का उपवास।

४—एक दिन से अधिक के उपवास।

५—सप्ताह में एक दिन का अर्द्धोपवास अथवा पूरा उपवास।

इस प्रकार आवश्यकता के अनुसार किसी प्रकार का उपवास किया जा सकता है और उससे शरीर, मन और आत्मा को शांति मिलती है, स्फूर्ति पैदा होती है। शरीर को विकाररहित बनाने के लिए किसी भी प्रकार का कोई उपवास उत्तम साधन है।

प्रायः देखा जाता है कि विकारों के पैदा होने पर लोग जुलाब और एनिमा का प्रयोग करते हैं। वैद्यों और डाक्टरों को भी इन दोनों का आश्रय लेना पड़ता है। इन दोनों के द्वारा शरीर से मल को निकालने में सहायता मिलती है। परन्तु उनके द्वारा मिलनेवाले विश्राम की पूर्ति नहीं होती शरीर और पाचन-क्रिया को विश्राम देने का उद्देश्य और है। उस उद्देश्य को जुलाब और एनिमा पूरा नहीं करते।

शरीर के भीतर एकत्र मल को निकालने के लिए जुलाब और एनिमा सामयिक साधन हैं। परन्तु उनके द्वारा स्थायी रूप से न तो शरीर विशुद्ध होता है और न पाचन-शक्ति को प्रबल होने के लिए सहारा मिलता है। इसलिए विश्राम देनेवाले सम्पूर्ण साधनों से शरीर को जो लाभ मिलता है, प्रत्येक स्त्री-पुरुष को उन पर ध्यान देना चाहिए। हमारे भोजन के साथ प्रकृति के इन सभी नियमों का स्थायी रूप से सम्बन्ध है।

———

भोजन के संबंध में नवीन खोज

भोजन-संबंधी खोज का कार्य आज कुछ नया नहीं है। मानव-जीवन के प्रारम्भिक काल से इस खोज का काम बराबर होता आ रहा है और आज भी हो रहा है। मनुष्य जितना ही शिक्षित और सभ्य होता जाता है, अपनी आवश्यकताओं को वह उतना ही समझता जाता है।

खोज का निरंतर प्रयत्न इस बात का प्रमाण है कि पहले पहल मनुष्य को अपनी भोजन-संबंधी बातों का भी अधिक ज्ञान न था। यह बात तो सही है। मानव-जीवन का क्रमशः विकास हुआ है और अपने विकास के साथ-साथ, उसने जीवन-संबंधी सभी बातों का ज्ञान प्राप्त किया है। इस विकास के दो दृष्टिकोण हैं। मानव-जीवन में दोनों की वृद्धि हुई है। ज्ञान का प्रकाश पाकर, मनुष्य जितना ही अपने जीवन का निर्माण कर सका है, उतना ही उसने अपने जीवन का क्षय भी किया है। दोनों प्रकार की उन्नति में मनुष्य बराबर आगे बढ़ा है।

खाने-पीने के संबंध में मनुष्य को आज जितना ज्ञान है, उतना पहले नहीं था। इसमें अतिशयोक्ति की बात नहीं है। किसी को आश्चर्य करने की जरूरत भी नहीं है। ऐसा लिखना पूर्वजों का अपमान नहीं है। जो बात सत्य है, उसे लिखना और स्वीकार करना चाहिए।

भोजन का संबंध मनुष्य के स्वास्थ्य, शरीर-पालन और दीर्घ-जीवन से है। अतीत काल की अपेक्षा जब मनुष्य ने अपने इस ज्ञान की आज अधिक वृद्धि की है, तब उसने स्वास्थ्य और दीर्घजीवन में भी वृद्धि की होगी। परन्तु ऐसा नहीं है। ऊपर लिखा जा चुका है कि मनुष्य ने जो उन्नति की है, उसमें जीवन का निर्माण भी है और क्षय भी। यह तो सभी स्वीकार करते हैं कि हमारे पूर्वज हमारी अपेक्षा अधिक स्वस्थ और दीर्घजीवी थे।

आज के मानव-जीवन का उसके स्वास्थ्य और जीवन में जो पतन हुआ है, वही उसके जीवन का क्षय है। इस क्षय के साथ-साथ मानव-जीवन की सभ्यता में विकास भी हुआ है। यहाँ पर इन बातों की अधिक आलोचना करने का स्थान नहीं है। इसीलिए इन्हें मैं यहीं छोड़ दूँगी। इन पृष्ठों में मैं यह बताना चाहती हूँ कि मनुष्य ने अपने खाने पीने की बातों में, आज कितनी उन्नति की है।

कुछ दिन पहले की बात है, अमेरिका से प्रकाशित होनेवाली एक पत्रिका में एक लेख मैंने इस आशय का पढ़ा था "पिछले पच्चीस वर्षों में अमेरिका ने अपने भोजन में जिस प्रकार परिवर्तन किया है, वह सर्वथा नवीन है।" उस लेख में यह बताया गया था कि अमेरिका के निवासियों के भोजन में कितना अधिक परिवर्तन हुआ है। यही बात संसार के किसी भी दूसरे सभ्य देश में देखने को मिलती है।

जो देश आज भी शिक्षा में पीछे हैं, उनकी कोई बात नहीं कही जा सकती। किंतु आज के शिक्षित और सभ्य देशों में अन्यान्य बातों के साथ-साथ भोजन-संबंधी बहुत बड़ी क्रांति हुई है। यह भी सत्य है कि भोजन संबंधी और अधिकांश रूप में अधिक पुराने नहीं हैं। आज का मनुष्य अपने स्वास्थ्य को किसी वैद्य और डाक्टर के ऊपर नहीं छोड़ना चाहता और न वह इसी बात पर विश्वास करता है कि हमारा जीवन और मृत्यु किसी दूसरे के हाथ में है।

आज की शिक्षा और सभ्यता ने जीवन की सभी बातों का अधिकार उसके हाथों में सौंपा है। यद्यपि अब भी ऐसे मनुष्यों की कमी नहीं है जो अपना सभी कुछ भाग्य पर छोड़े हुए हैं। इनकी संख्या है और अधिक है परन्तु ये आज के मनुष्य नहीं कहे जाते। आज की शिक्षा ने मनुष्य को उन्नतिशील बनाने की चेष्टा की है। और उसी ने यह शिक्षा दी है कि वह सभी कुछ कर सकता है। जीवन और स्वास्थ्य के संबंध में भी यही बात है।

इस नवीन प्रकाश में मनुष्य ने सीखा है कि हमारे जीवन की बीमारियाँ, हमारी भूलों का परिणाम हैं। प्रकृति ने हमको स्वास्थ्य और जीवन देकर उत्पन्न किया है। अपनी आवश्यकताओं को समझने के लिए ज्ञान दिया है और उपयोगिता को खोजने के लिए विवेक दिया है। इसी बुद्धि और विवेक के द्वारा भोजन संबंधी बातों की भी बहुत खोज हुई है। शरीर विज्ञान के एक विदेशी विद्वान ने लिखा है, मनुष्य की आयु बहुत बड़ी है। उससे पहले मरने का कारण वह स्वयं है। यदि मनुष्य चाहे तो स्वस्थ रहकर अधिक-से-अधिक दिनों तक जीवित रह सकता है किंतु उपेक्षा और अवहेलना के कारण वह स्वयं अपनी मृत्यु का कारण हो सकता है।

स्वास्थ्य और जीवन के संबंध में मनुष्य का यह विश्वास बढ़ता जा रहा है।

हमारे देश में ऋषि और मुनि दीर्घ जीवन के लिए बहुत बड़ी ख्याति पा चुके हैं। साधारण रूप से आधुनिक मनुष्य का जीवन आज अधिक नहीं समझा जाता। इसका कारण जीवन की परिस्थितियाँ और उसका ज्ञान है। इस अवस्था में भी, दीर्घजीवन पानेवाले आज भी कितने ही मनुष्य देखे जाते हैं। समाचार-पत्रों में प्रायः पढ़ने को मिलता है "अमुक व्यक्ति की मृत्यु एक सौ पैंतीस वर्ष की अवस्था में हुई।" महात्मा गाँधी ने अपनी हत्या के पूर्व लिखा था, 'मैं एक सौ पच्चीस वर्ष क्यों जीना चाहता हूँ ? इसका अर्थ यह है कि महात्मा गाँधी अपनी आयु एक सौ पच्चीस वर्ष से कम न समझते थे।

शरीर की विभिन्न अवस्थाएँ

बच्चों से लेकर बूढ़ों तक और स्त्रियों से लेकर पुरुषों तक भिन्न-भिन्न प्रकार के स्वास्थ्य और शरीर देखने में आते हैं। कोई बहुत दुबला है। इतना दुबला कि जिसे देखकर, देखनेवालों को कभी कभी आश्चर्य होता है, और कोई मोटा और इतना मोटा कि देखकर अचम्भा होता है। अब प्रश्न यह है कि कोई मनुष्य अधिक दुबला और कोई अधिक स्थूल क्यों है। दुबले और स्थूल-काय भी कई प्रकार के देखे जाते हैं। साधारण श्रेणी के स्त्री और पुरुष इसका कुछ और ही कारण समझते हैं। उनको तो केवल इतना ही ज्ञान है कि भगवान ने जिसको जैसा बना दिया है, वह वैसा ही बन गया है। इस प्रकार की बातें प्रायः सुनने में आती हैं।

बात वास्तव में ऐसी नहीं है। जीवन का सत्य कुछ और है। भगवान ने न किसी को दुबला बनाया है और न किसी को मोटा। दुबले और मोटे होने का एकमात्र कारण जीवन की परिस्थिति और भोजन की व्यवस्था है। यदि मनुष्य को ज्ञान हो और वह प्रयत्न करे तो दुबला से दुबला मनुष्य, मोटा और मोटा से-मोटा मनुष्य दुबला हो सकता है। इसमें ईश्वर का कोई दोष नहीं है।

यह पुस्तक भोजन के सबंध में है। भोजन के सबंध में इसमें सभी प्रकार की बातें पढ़ने को मिलेंगी। भोजन के सभी प्रकार के विवरण आगे लिखे जायँगे, यहाँ पर इतना ही लिखना यथेष्ट होगा कि भोजन के द्वारा ही मनुष्य का शरीर दुबला और मोटा होता है।

दुबला होने के दो कारण हैं। अच्छा भोजन न मिलने से मनुष्य दुबला हो

जाता है। बच्चे से लेकर बूढे तक के दुबला होने का यह एक प्रधान कारण है। दूसरा कारण और है। भोजन के जो पदार्थ चरबी पैदा करनेवाले होते हैं, उनके न मिलने से मनुष्य का शरीर दुबला पतला रहता है। प्रत्येक अवस्था में खाने की इन वस्तुओं का प्रभाव पड़ता है। प्राय. लड़कियाँ और लड़के दुबले-पतले देखने में आते हैं। उनके माता-पिता उनको मोटा देखना चाहते हैं। उन्हें दुर्बल देखकर, वे दु.खी होते हैं। किंतु किसी प्रकार उन्हें सतोष करना पड़ता है। यदि उन्हें इसका कारण मालूम हो और वे प्रयत्न करें तो उनकी सतान दुबली नहीं रह सकती।

दुबला और मोटा बनानेवाले भोजन होते हैं। मैं यह नहीं कहती कि मुटापा स्वास्थ्य कहलाता है और न यही कहा जा सकता है कि दुर्बलता स्वास्थ्य है। स्वस्थ शरीर न अधिक दुर्बल होता है और न अधिक मोटा। देखने में भी न दुर्बलता अच्छी लगती है और न स्थूलता। दोनों की अधिकता स्वास्थ्य के विरुद्ध है।

यहाँ पर इतना ही जान लेना आवश्यक है कि शरीर पर इस प्रकार के प्रभाव भोजन के द्वारा होते हैं। लोग कहा करते हैं कि भोजन तो करते हैं परन्तु शरीर में लगता नहीं है। मनुष्यों की यह अवस्था बड़ी दयनीय होती है। यदि भोजन-सबधी बातों की जानकारी हो तो वे ऐसा कभी नहीं कह सकते। उनकी अनजान अवस्था उनसे सब कुछ कहलाती है।

मनुष्य के भोजन की कितनी ही चीजें होती हैं। सभी के गुण अलग अलग होते हैं। हमारे शरीर में सभी अलग-अलग कार्य करते हैं। सभी से एक ही लाभ नहीं होता। खाने की एक वस्तु से हमें जो लाभ होता है, वही लाभ दूसरी वस्तु से नहीं होता। एक ही शिक्षा किसी को डाक्टर, वकील और व्यापारिक नहीं बनाती। जीवन के अलग-अलग व्यवसाय हैं। और शिक्षित होने के बाद उनके लिए अलग-अलग मार्ग देखना पड़ता है। शरीर की आवश्यकताएँ भी भोजन के कई पदार्थों से पूरी होती हैं।

शरीर का निर्माण और उसकी पूर्त्ति

कई प्रकार के तत्वों से मिलकर शरीर बना है। जिन तत्वों से शरीर की रचना हुई है, उसके पालन पोषण के लिए उन सभी तत्वों की आवश्यकता है। हमारे भोजन में जिन तत्वों का अभाव हो जायगा, शरीर में उन्हीं की कमी

रहेगी। इसलिए भोजन के सभी पदार्थों का ऐसा सामञ्जस्य होना चाहिए, जिससे शरीर की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति बराबर होती रहे।

खाने की वस्तुओं में ऐसी वस्तु कोई नहीं है, जो अकेले सभी प्रकार की आवश्यकताओं को पूरा करती हो। उनका आपस में, एक-दूसरे के साथ ऐसा सम्पर्क होता है, जिससे वे एक-दूसरे के अभाव की पूर्ति करती रहती हैं। इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह सभी प्रकार की वस्तुओं से लाभ उठाने की कोशिश करे।

मैंने प्रायः लोगों को यह कहते हुए सुना है कि खाने की चीजों में दूध ही एक ऐसा पदार्थ है, जो सभी प्रकार के गुण रखता है। इस प्रकार की बात साधारण स्त्री-पुरुष तो कहते ही हैं, मैंने तो चिकित्सकों को भी इस प्रकार की बात कहते हुए देखा है। इसमें सदेह नहीं कि मनुष्य के भोजन में दूध अधिक उपयोगी है, परन्तु केवल दूध से ही काम नहीं चलता और न उसके द्वारा सभी बातों की पूर्ति होती है। दूध की अपेक्षा कितने ही फल अधिक उपयोगी होते हैं और मनुष्य का वास्तविक भोजन फल ही है, परन्तु जो फल सभी प्रकार की उपयोगिता रखते हैं, वे सर्वत्र पाये नहीं जाते और पाये जाने पर भी वे अधिक मूल्यवान पड़ जाते हैं। अधिक-से-अधिक मूल्य खर्च करके प्रत्येक मनुष्य अपने भोजन की व्यवस्था नहीं कर सकता। इसलिए उसका भोजन तो वही है, जिसको वह सरलता से प्राप्त करता है।

शारीरिक अभाव

शरीर के भीतर जब किसी प्रकार का अभाव होगा, उसी समय उसकी कोई क्षति हमारे सामने आवेगी। वह क्षति वेदना उत्पन्न करती है। शरीर में कोई व्यथा उत्पन्न हो जाती है। उसे पीड़ा पहुँचती है। इस पीड़ा का अभिप्राय क्या है? इसे समझने की आवश्यकता है।

जिस प्रकृति ने हमारा निर्माण किया है, वही हमारे स्वास्थ्य और जीवन के संबंध में हमारे लिए सावधान भी रहती है। छोटी-सी भूल करने पर भी वह हमको सूचना देती है। सूचना और समाचार देने के लिए, उसके पास कोई दूसरा साधन नहीं है। भूल करने पर और शरीर को क्षति पहुँचने पर जो पीड़ा अथवा व्यथा उत्पन्न होती है, हमारे लिए प्रकृति की ओर से वही सूचना है। वह हमको सतर्क और सावधान होने के लिए सूचित करती है।

खोज का कार्य

खाने के सबंध में जो खोजें हुई हैं उसका अभिप्राय यही है कि मनुष्य अपने शरीर की आवश्यकताओं को समझे और जाने। वह जाने कि शरीर की व्यवस्था किन नियमों के आधार पर बनी है। जब तक मनुष्य उन नियमों को नहीं पहचानता, उस समय तक वह शरीर की आवश्यकता को नहीं समझ सकता।

शरीर की बीमारियाँ और कुछ नहीं है। वे केवल शरीर सबंधी अभाव हैं। इसलिए किसी भी रोग के उत्पन्न होने पर हमें सोचना चाहिए कि खाने-पीने में हमने कोई भूल की है। भूल कई प्रकार की होती है। पोषक तत्वों का न मिलना, शरीर का एक अभाव है। उसकी पूर्ति करनी ही पड़ेगी। अन्यथा वह रोग का कारण बन जायगा। इसी प्रकार आवश्यकता से अधिक किसी वस्तु के शरीर में पहुँचने पर हमारी वही अवस्था होती है जो किसी अभाव के कारण हो सकती है।

अभिप्राय यह है कि शरीर को जिन पोषक पदार्थों की आवश्यकता है, उनकी न तो कमी हो और न अधिकता ही हो। जिस प्रकार कमी से शरीर को क्षति पहुँचती है, उसी प्रकार अधिकता से रोगों की उत्पत्ति होती है। दोनों ही बातें घातक हैं।

किस प्रकार के पदार्थ मनुष्य के खाने की सामग्री में आ सकते हैं और किस प्रकार उनका उपयोग किया जा सकता है, एवं किन वस्तुओं से शरीर को किस प्रकार का लाभ हो सकता है, इसी का निर्णय भोजन के संबंध में आधुनिक खोज का कार्य है। जो लोग स्वास्थ्य चाहते हैं, नीरोग जीवन बिताने की अभिलाषा रखते हैं, उनके सामने एक ही मार्ग है और वह यह कि वे अपने भोजन का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करें।

इस प्रकार की आवश्यक जानकारी से हमारा बहुत लाभ है। स्वास्थ्य, नीरोग जीवन और दीर्घजीवन बिताने के लिए इन बातों का जानना और समझना बहुत आवश्यक है। इस प्रकार का लाभ न तो भाग्य के भरोसे रहने पर हो सकता है और न वैद्यों-डाक्टरों की सहायता से जीवन का सुख और संतोष प्राप्त किया जा सकता है। उसका एक मात्र आधार यही है।

विचित्र भोजन

भोजन के साथ नियमों का महत्त्व दिन पर दिन बढ़ता जाता है। जो लेख और पुस्तकें, इसके सबंध में लिखी जा रही हैं, उनमें अनेक प्रकार के नियम बताये जाते हैं, ठीक भी है। नियमित भोजन का महत्व है। परन्तु बताये गये नियम सर्वथा व्यावहारिक नहीं होते। उसका कारण है।

भोजन के सबंध में डाक्टरों और अधिकारियों के मत कभी कभी एक, दूसरे के विपरीत हो जाते हैं। उस अवस्था में, साधारण स्त्री पुरुषों के समझने में एक कठिनाई पैदा हो जाती है। भोजन कितना किया जाय, कब किया जाय और किस प्रकार का किया जाय? इन प्रश्नों के सबंध में कभी-कभी अधिकारियों के मत भेद देखने में आते हैं। इस मतभेद का कारण यह है कि सभी की शारीरिक अवस्थाएँ एक-सी नहीं होतीं। भोजन की आवश्यकताएँ भी अलग-अलग होती हैं। मात्रा और आवश्यकता, शारीरिक परिस्थितियों पर निर्भर है। इसीलिए सभी के लिए एक ही नियम प्रायः काम नहीं करता।

भोजन की मात्रा और आवश्यकता स्वास्थ्य और पाचन-शक्ति के अनुसार होती है। पिछले पन्नों में मैंने इन प्रश्नों पर जो प्रकाश डाला है, उसमें मैंने किसी एक ही नियम पर जोर नहीं दिया। साधारण परिस्थिति को सामने रख कर मैंने सभी कुछ लिखा है और वही बात ठीक भी है। इसलिए इस प्रकार के प्रश्नों का निर्णय करने के समय प्रत्येक व्यक्ति को अपने शरीर की अवस्था पर विचार कर लेना चाहिए।

उदाहरण के तौर पर मैं यहाँ पर एक छोटी-सी बात का जिक्र करना चाहती हूँ। जिन विद्वानों ने भोजन के सबंध में कुछ लिखा है, साधारण स्त्री-पुरुषों की दृष्टि में वे अधिकारी ही होते हैं। होता यह है कि पुस्तकों में अथवा मासिक पत्रों में भोजन के सबंध में जब कुछ पढ़ने को मिलता है तो लोग उसे प्रामाणिक समझकर पढ़ते हैं और उसपर अपना विश्वास कायम करते हैं।

एक मासिक पत्र में भोजन सम्बन्धी मैंने एक लेख देखा। आरंभ से लेकर अंत तक मैंने उसे पढ़ डाला। पूरे लेख में बताया गया था कि सूखे भोजन की अपेक्षा गीला भोजन अधिक लाभदायक होता है। इसी अभिप्राय को लेकर,

तरल भोजन पर उसमें अधिक जोर दिया गया था। यहाँ पर आवश्यक नहीं है कि उस लेख के लेखक को स्पष्ट रूप से सामने लाया जाय, परन्तु यह आवश्यक जरूर है कि उस लेख के बताये हुए मार्ग को स्पष्ट किया जाय।

लोगों को स्पष्ट रूप से यह समझ लेने की आवश्यकता है कि भोजन के तरल पदार्थ, पाचन की दृष्टि से उतने उपयोगी नहीं होते जितने कि सूखे पदार्थ और भोजन। इसका कारण यह है कि तरल पदार्थ चबाये नहीं जा सकते और तुरन्त निगल जाने का प्रभाव यह होता है कि वे तरल पदार्थ सरलता-पूर्वक पाचन के योग्य नहीं बन पाते। भोजन की कोई वस्तु निगल जाने के पूर्व इसलिए अधिक मुँह में चबाई जाती है जिससे वह अधिक-से-अधिक सुपाच्य बन सके। इसके सम्बन्ध में विशेष रूप से, आगे लिखा जायगा। यहाँ पर मेरा इतना ही अभिप्राय है कि जो लोग भोजन सम्बन्धी खोज की बातें जानना चाहते हैं, उनको कभी कभी कुछ विपरीत बातें पढ़ने को मिलती हैं और इस प्रकार वे सभी सही नहीं हुआ करतीं।

भोजन के सम्बन्ध में अनेक प्रकार की बातें प्राय देखने में आती हैं, उन्हें विचित्र भोजन के नाम से सम्बोधन करने के सिवा, मेरे पास दूसरा कोई शब्द नहीं है। यहाँ पर उन विचित्र भोजनों के सम्बन्ध में लिखना आवश्यक है। उनके द्वारा समाज को किस प्रकार की हानि उठानी पड़ती है। इसका ज्ञान उसी समय हो सकता है, जब उसकी वास्तविकता समझ में आ जाय।

पेटू आदमी

कुछ लोगों में खाने-पीने की बातें बड़ी अनोखी देखने में आती हैं। भोजन किसलिए किया जाता है और उसका क्या उपयोग होता है। इस लाभ और हानि का प्राय' सभी को ज्ञान नहीं होता। इसका परिणाम यह होता है कि कितने ही आदमी भोजन करना और अधिक से-अधिक भोजन करना अपने लिए गौरव की बात समझते हैं।

यह ठीक है कि भोजन से शरीर को स्वास्थ्य मिलता है और शक्ति प्राप्त होती है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि जितना अधिक भोजन किया जायगा, उतना ही अधिक हमारा लाभ होगा। सत्य तो यह है कि आवश्यकता से अधिक भोजन करने से, भोजन करनेवाला अपने स्वास्थ्य और शक्ति का स्वयम् नाश

करता है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि भोजन के अभाव में जो मृत्युएँ होती हैं, उनकी अपेक्षा भोजन की अधिकता से अधिक होती हैं। मैं पहले बता चुकी हूँ कि छोटे बच्चों की अधिक मृत्यु का कारण उनके भोजन की अनियमित अवस्था है। माता-पिता की असावधानी और अज्ञानता के कारण, उनको आवश्यकता से अधिक, भोजन दिया जाता है, जो उनकी बीमारी का कारण होता है और अधिकाश मृत्युएँ उसीसे होती हैं। अधिक भोजन कभी भी लाभदायक नहीं है।

खाने-पीने के अवसरों पर पेटू आदमियों की विचित्र बातें देखी जाती हैं। वे लोग अधिक भोजन करना अपने लिए आदर की बात समझते हैं और इस प्रकार के लोगों को मूर्खता के कारण प्रायः लोग गौरव भी देते हैं। पेटू आदमियों की खूराकें इतनी बढ़ जाती हैं कि एक-एक आदमी कई आदमियों की खूराक खा जाता है। एक अवसर पर किसी आदमी को दिखाकर मुझे बताया गया कि इसे लोग पसेरा महराज कहते हैं। इसका भोजन पाँच सेर है। यह सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ। मुझे विश्वास नहीं हुआ कि एक आदमी एक बार में पाँच सेर भोजन खा सकता है। मैंने हँसी की बात समझी। लेकिन उस आदमी की खूराक का उसी समय कई लोगों ने समर्थन किया।

बातें होती रहीं। पसेरा महराज को बुलाया गया। उसने सामने आकर बातें की और अपनी खूराक को स्वीकार करते हुए उसने कहा —जिसको विश्वास न हो, वह मुझे खिलाकर देख ले।

भला किसको पड़ी थी जो अपने पास से पाँच सेर उसे खिलाकर उसकी परीक्षा लेता। एक-दो नहीं, कितने ही आदमियों ने उसका समर्थन किया। मुझे विश्वास तो नहीं होता था, लेकिन अनेक आदमियों के कहने और बताने पर मुझे मान लेना पड़ा। मै सोचने लगी कि इतना अधिक भोजन करके यह आदमी क्या काम करता है और इससे क्या लाभ उठाता है? मेरे पूछने पर लोगों ने बताया कि इसका और कोई काम नहीं है। केवल घूमा करता है। न तो नौकरी करता है और न कोई व्यवसाय।

यह सुनकर मुझे और आश्चर्य हुआ। मैं सोचने लगी कि इस हालत में इसको खाना कौन देता है और किस प्रकार यह अपने भोजन का प्रबन्ध करता है। पूछने पर लोगों ने बताया कि इसे खाने की कमी नहीं है। अपनी खूराक

के लिए यह प्रसिद्ध हो चुका है और उन लोगों के पास पहुँच जाता है जो इसे खिलाकर तमाशा देखते हैं।

मैंने मन ही-मन कहा, यह भी खूब है। उस पसेरा महराज को मैंने ध्यान पूर्वक देखा। उसके शरीर में कोई असाधारण बात न थी। डील-डौल भी साधारण था। उसको देखकर उसके निकम्मेपन का परिचय मिलता था। उसके संबंध में यह भी मालूम हुआ कि जब कोई व्यक्ति खिलानेवाला नहीं मिलता तो वह भूखे रहकर अथवा थोड़ा-बहुत खाकर समय काटा करता है। यह बात मेरी समझ में आ गई। इतना अधिक एक दिन भोजन करने के बाद जब उसे एक दिन, दो दिन अथवा तीन दिन भोजन नहीं मिलता या कम मिलता है तो अधिक किया हुआ भोजन उसके शरीर में पचा करता है। यदि ऐसा न होता तो उसे अधिक हानि उठानी पड़ती।

इस प्रकार के मनुष्य कभी कभी देखने में आते हैं। और इन लोगों की कहानियाँ तो प्राय सुनने को मिलती हैं। इस प्रकार के पेटू व्यक्ति बीमार रहकर बहुत शीघ्र मर जाते यदि उन्हें बराबर भोजन मिला करता। जो भोजन मनुष्य का जीवन है इसकी अत्यधिकता या अत्यल्पता उसकी मृत्यु का कारण भी है।

निमंत्रण के भोजन

निमन्त्रणों के अवसरों पर भी प्रायः अनियमित बातें होती हैं। उन अवसरों पर न तो इस बात का ध्यान रखा जाता है कि खाने की कौन-सी वस्तुएँ उपयोगी हैं और कौन-सी अनुपयोगी और न इसी बात पर ध्यान दिया जाता है कि खाने और खिलाने के समय किस प्रकार का व्यवहार होना चाहिए। प्राय॰ गरिष्ठ और हानि पहुँचानेवाला भोजन बनाया जाता है। उन अवसरों पर इस बात का विशेष ध्यान दिया जाता है कि जो चीजें बनायी जायँ, वे स्वादिष्ट हों।

इसका तो सभी समर्थन करेंगे कि निमन्त्रण के बाद खानेवालों में, थोड़ा बहुत अपच सभी को होता है। किसी किसी को उससे हानि भी उठानी पड़ती है। यह अवस्था इस बात का प्रमाण है कि उन अवसरों पर जो भोजन कराया जाता है, अथवा किया जाता है, वह आवश्यकता तथा नियम के विरुद्ध होता है।

निमन्त्रित सज्जनों को अच्छे-से अच्छा और अधिक-से-अधिक भोजन कराना निमन्त्रण देनेवाले महाशय अपना कर्तव्य समझते हैं। अच्छे भोजन की परि-

भाषा उनकी समझ में स्वादिष्ट भोजन है। वह भोजन कहाँ तक हितकारी है, इसे वे न सोचते हैं और न सोचना जानते हैं। अपने उस अवसर पर अधिक भोजन खिलाकर, लोग अपनी उदारता का परिचय देते हैं।

भोजन करनेवाले महाशय भी उस उदारता की सराहना करते हैं। उदारता की बात है भी। परन्तु कुछ थोड़ा-सा आश्चर्य भी है। किसी की उदारता से दूसरों को लाभ होना चाहिए। इसे उदारता कहते हैं किन्तु यदि उदार व्यवहारों के कारण किसी को शारीरिक क्षति उठानी पड़े तो उसे उसकी उदारता न कह-कर, दूसरे किन शब्दों में उसे सम्बोधन किया जाय, यह समझ में नहीं आता।

इस प्रकार के अवसरों पर हठपूर्वक अधिक खिलाने की चेष्टा की जाती है। एक तो स्वभावतः लोग अधिक खाते हैं और उसके बाद अधिक खिलाने के लिए प्रयत्न भी किया जाता है। इस प्रयत्न के दो दुष्परिणाम प्रायः देखने में आते हैं। एक तो भोजन करनेवाले, अधिक खाकर अपनी अस्वस्थ अवस्था का अनुभव करते हैं और दूसरे भोजन की सामग्री का बुरी तरह से अपव्यय होता है। ये दोनों अवस्थाएँ अत्यन्त दुखपूर्ण हैं। स्पष्ट बात यह है कि इसमें न तो उदारता है और न किसी प्रकार की बुद्धिमानी। जो कुछ है, उसमें मूर्खता का आवरण ही अधिक है। यही कारण है कि मूर्ख समाज में इस प्रकार के दृश्य अधिक देखने में आते हैं।

त्योहारों पर

त्योहारों की बात भी कम आश्चर्यपूर्ण नहीं है। यहाँ पर मैं यह नहीं बताना चाहती कि त्योहार किस अभिप्राय से होते हैं। बताना मैं यह चाहती हूँ कि उन अवसरों पर भोजन की जो व्यवस्था होती है, वह केवल परिवार के लोगों को बीमार बनाने का कार्य करती है।

शिक्षित परिवारों में आज अनेक प्रकार के परिवर्तन हो रहे हैं किन्तु जहाँ अच्छी शिक्षा नहीं है, स्त्रियों और पुरुषों को जहाँ पर शारीरिक ज्ञान नहीं है, वहाँ पर जो कुछ होता है, वह शरीर और स्वास्थ्य के प्रति पूर्ण रूप से अन्याय है। पहली बात तो यह है कि त्योहारों पर जितना भोजन बनता है, वह सब का सब गरिष्ठ, दुष्पाच्य और हानिकारक होता है। दूसरी बात यह है कि इतना अधिक बनता है, जो कई-कई दिनों तक बासी खाया जाता है। बासी भोजन

स्वास्थ्य के सर्वथा विरुद्ध है। इस प्रकार त्योहारों पर भोजन का जो प्रबन्ध होत
है वह प्रायः शरीर के स्वास्थ्य को बिगाड़ने का काम करता है। परिवारों
लोग प्राय. बीमार पड़ते हैं। अस्वस्थ तथा रोगी होने पर जब पूछा जाता है
सहज ही उसका उत्तर मिलता है और कोई बात नहीं है। कल-परसों त्योहार
खाने पीने की कुछ गड़बड़ी हो गई है। इसीलिए कल रात से बुखार हो गया।

सुननेवाले महाशय इसके उत्तर में कह उठते हैं, 'अच्छा ठीक है, कं
हर्ज की बात नहीं है, सब ठीक हो जायगा।' इस प्रकार त्योहारों के बाद प्रा
लोगों को कुछ-न-कुछ शारीरिक कष्ट होता है। इसका कारण यह है कि
अवसरों पर जो भोजन बनता है, वह स्वभावत खानेवालों को रोगी बनाता है
इतना ही नहीं, इस प्रकार के हानिकर भोजन जब कई-कई दिनों तक बासी ख
जायँगे तो उनका परिणाम भयानक होना ही चाहिए। यह सब इसलिए हो
है कि हमको और हमारे परिवार के लोगों को इस बात का ज्ञान नहीं है
हमारा भोजन क्या है और वह किस प्रकार का होना चाहिए।

सम्बन्धियों के साथ

सम्बन्धियों के साथ स्नेह और प्रेम होना स्वाभाविक है। इस स्नेह अ
प्रेम का प्रदर्शन किस प्रकार और कैसे होता है, इसे भी संक्षेप में देख लेने
आवश्यकता है। ऐसे बहुत कम लोग होंगे जो किसी आपद-काल में सम्बन्धियों
सहायता करते हों, उनकी विपत्ति को अपनी विपत्ति समझते हों और उ
सहायक बनकर, उनके कष्टों का निवारण करते हों। मैं यह तो नहीं कह सक
कि लोग ऐसा नहीं करते, परन्तु मैं यह अवश्य कहूँगी कि ऐसे लोग कम होते

सम्बंधियों के साथ जितना स्नेह होता है, उसका पूरा परिचय खाने-पीने
समय दिया जाता है। हठ करके अधिक खिलाया जाता है। इन्कार करने
भी आग्रह किया जाता है और उस आग्रह में प्रायः खाने-पीने की वस्तुएँ न
होती हैं। इस प्रकार के दृश्य प्रायः देखने में आते हैं। और अधिकतर
परिवारों में इस प्रकार की बातें अधिक होती हैं जहाँ पर शिक्षा का अभाव होता

यहाँ पर इन बातों के विस्तार की आवश्यकता नहीं है और न मैं विस
देना ही चाहती हूँ। मेरा अभिप्राय यह है कि लोग खाने-पीने के अवसरों
जिस उदारता और ममता का परिचय देते हैं, वह शत्रुता का काम करती

अनावश्यक और अधिक भोजन किसी को भी बीमार बनाता है। बीमार बनाना खिलाने-पिलाने का उद्देश्य नहीं होता। इसलिए शिक्षित स्त्रियों और पुरुषों को इस बनावट और हानिकारक परिपाटी से घृणा करना चाहिए।

भोजन की विचित्रता अनेक प्रकार से हमारे समाज में है। इसका कारण अज्ञानता के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। यह मूर्खता केवल हमहीं तक सीमित नहीं है। आज से कुछ पहले, सम्पूर्ण मानव-समाज में इसका विस्तार था। परन्तु बढ़ती हुई शिक्षा ने मूर्खता के इस अंधकार को दूर करने का काम किया है और यह भी निश्चित है कि समाज में शिक्षा जितनी ही बढ़ती जायगी, इस प्रकार की बातों का उतना ही लोप होता जायगा।

भोजन के साथ स्त्रियों का अधिक संबंध है। उनको इन बातों का सबसे अधिक ज्ञान होना चाहिए किंतु दुर्भाग्य से स्त्रियाँ ही अधिक असावधानी करती हैं। इसका कारण यह है कि उनको इन बातों का ज्ञान नहीं है।

समाज की ये सभी बातें आज बदल रही हैं। नव शिक्षित लड़कियों में नवीन विचार प्रवेश कर रहे हैं। और दिन पर दिन भोजन की जानकारी उनमें बढ़ती जा रही है। स्कूलों की शिक्षा में भोजन का ज्ञान सम्मिलित किया गया है। इससे भी समाज का बहुत लाभ हो रहा है।

भोजन का उद्देश्य यह है कि उसके द्वारा शरीर को स्वास्थ्य मिले। जीवन-शक्ति की वृद्धि हो और प्रत्येक स्त्री-पुरुष दीर्घायु लाभ करे। यदि भोजन का यथोचित ज्ञान नहीं है तो ये सभी बातें विरुद्ध हो जाती हैं और उसके परिणाम-स्वरूप शरीर रोगी बनता है। हमारे जीवन में भोजन का बहुत बड़ा महत्व है। इसलिए उसका यथोचित ज्ञान सभी के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

हमारे भोजन के पदार्थ

भोजन के साथ हमारे जीवन का जितना घनिष्ट संबंध है उतना कदाचित किसी दूसरे के साथ नहीं है। फिर भी, उसके संबंध में हम सभी को कितना ज्ञान है, इस विषय में विचार करने पर बहुत बड़ा आश्चर्य होता है।

खाने-पीने के संबंध में अज्ञान अवश्य। केवल साधारण श्रेणी के स्त्री-पुरुषों की ही नहीं है, वरन् मैंने जहाँ तक अनुभव किया है सभी प्रकार के लोगों को उसके संबंध में अपरिचित पाया है। जिन्हें शिक्षा नहीं मिली, उनका अपरिचित होना स्वाभाविक है। परंतु उन स्त्री-पुरुषों को भी, भोजन के संबंध में, मैंने अनजान पाया है, जिन्होंने बड़ी-से-बड़ी शिक्षा प्राप्त की है।

जीवन की खोज में मनुष्य आज जहाँ पहुँचा है, उसके भोजन की सीमा बहुत विशाल और विस्तृत हो गई है। हमारे खाने-पीने की वस्तुएँ बहुत हैं और प्रकृति ने उन्हें बड़ी संख्या में उत्पन्न किया है। इतना ही नहीं, एक और भी विशेषता है। भोजन की उपयोगी वस्तुएँ सरलता के साथ प्राप्त की जा सकती हैं। यदि उनका यथोचित ज्ञान हो। मुझे अनेक बार समझने और जानने का अवसर मिला है कि जो वस्तुएँ हमारे शरीर और जीवन में उपयोगी सिद्ध हुई हैं, उनका सम्पर्क साधारण श्रेणी के मनुष्यों के साथ अधिक है, परन्तु उनको उन वस्तुओं का ज्ञान नहीं है इसलिए उन पदार्थों से उनको कुछ लाभ नहीं होता।

हमारे भोजन के अधिकांश पदार्थ देहातों में उत्पन्न होते हैं, जिनको देहात के रहनेवाले सभी श्रेणी के लोग सरलता से भोजन के काम में ला सकते हैं। परंतु वे उनका उपयोग नहीं करते और इसलिए नहीं करते कि उनको उन वस्तुओं का ज्ञान नहीं है।

मुझे जब कभी किसी गाँव में जाने का अवसर मिला है तो मैंने अनेक चीजों को उपयोगी पाया है। वे वस्तुएँ हमारे भोजन में अच्छा स्थान रखती हैं। परन्तु गाँव के निवासी उनका उपयोग नहीं करते। इसका कारण यही है कि उनको, उनके संबंध में कुछ जानकारी नहीं है। भोजन के संबंध में आज अनेक प्रकार की खोजें हुई हैं। खोज के पश्चात् जो कुछ ज्ञान हुआ है, उसका ज्ञान मनुष्य को तब तक नहीं हो सकता, जब तक उसके संबंध में जानकारी प्राप्त करने के लिए, विशेष रूप से प्रयत्न न किया जाय। इसका अर्थ यह है कि भोजनादि का विषय आज जीवन का साधारण विषय नहीं है।

पेट भर लेना भोजन नहीं है

पेट भरना और बात है और भोजन करना दूसरी बात है। यदि पेट भरना ही हमारे भोजन का कार्य है, तब तो उसके लिए विशेष छानबीन की आवश्य-

कता नहीं है। खाने-पीने की बहुत सी चीजें हैं और किसी से भी पेट भरा जा सकता है। परन्तु इस प्रकार का खाना जो पेट भरने में गिना जाता है। उससे कितना लाभ होता है और कितनी हानि, इसका विवेचन नहीं होता।

जो लोग गरीब हैं, वे किसी प्रकार पेट भर लेना जानते हैं। उनसे यदि कुछ कहा जाता है, तो वे सहज ही कह बैठते हैं, हम लोग गरीब आदमी हैं। जो कुछ मिल गया, उसी को खाकर पेट भर लेते हैं। यह तो बड़े आदमियों का, रुपयेवालों का काम है कि वे अच्छे-से-अच्छा भोजन करें। हमें तो भगवान ने गरीब बनाया है। इसीलिए जो कुछ मिल जाता है, उसी से पेट भर लेते हैं।

यह बात सही है कि गरीबों और अमीरों के भोजन में अन्तर होता है। गरीब आदमी साधारण भोजन करके अपना काम चलाते हैं किंतु जिनके पास रुपये-पैसे का कोई अभाव नहीं है, वे भोजन में अधिक खर्च करते हैं। परन्तु अधिक खर्च करने से ही भोजन का मूल्य बढ़ जाता है, ऐसी बात नहीं है। भोजन की उपयोगिता केवल इसी बात में नहीं है कि अधिक खर्च करके भोजन की व्यवस्था की जाय। उपयोगी भोजन उसी को कहा जा सकता है जो शरीर के स्वास्थ्य और उसकी शक्ति के लिए लाभकारी होता है। इस दृष्टि से सम्पत्तिशालियों का भोजन प्रायः उपयोगी नहीं होता। उनके भोजन की अनुपयोगिता को मैं भली भाँति जानती हूँ और जो कुछ जानती हूँ, उसके आधार पर यह कहना अनुचित नहीं है कि उनका भोजन साधारण श्रेणी के लोगों से भी अधिक हानिकारक होता है। यद्यपि यह बात सभी सम्पत्तिशालियों के सबंध में नहीं कही जा सकती। शहरों में रहनेवाले शिक्षा-प्राप्त सम्पत्तिशाली भोजन की उपयोगिता को बहुत-कुछ पहचानने लगे हैं और आवश्यक तथा उपयोगी भोजन की वस्तुओं से लाभ उठाने लगे हैं।

गरीबों और निर्धनों की अवस्था बहुत-कुछ आश्चर्यजनक है; यह बात सत्य है कि अपनी निर्धनता के कारण उन्हें पेट भर कर ही जीवित रहना पड़ता है। परतु यह बात पूर्ण रूप से सत्य नहीं है। जीवन के अनेक अवसरों पर वे जिस प्रकार सम्पत्ति को पानी की तरह बहाते हैं, उसे देखकर विस्मय होता है और मैं प्रायः सोचने लगती हूँ कि ये निर्धन स्त्री-पुरुष अपने खाने-पीने के संबंध में इतने उदासीन क्यों रहते हैं। बात कुछ और है। भोजन की उपयोगिता रुपये

पैसे से अधिक संबंध नहीं रखती। मेरा तो अनुभव यह है कि जो लोग भोजन के संबंध में, अवहेलना से काम लेते हैं, वे बहुत कुछ भोजन-संबंधी बातों में अज्ञान होते हैं। रुपये-पैसे का अभाव ही उनकी अवहेलना का कारण नहीं होता। यदि उपयोगी भोजन को महत्व दिया जाय तो प्रत्येक मनुष्य उसकी व्यवस्था कर सकता है।

अनुपयोगी भोजन

भोजन के सम्बंध में बहुत सी बातें जानने के योग्य हैं। जो जितना ही जानता है, वह उनसे उतना ही लाभ उठाता है। खाने की बहुत-सी वस्तुएँ हैं। सभी के गुण और स्वभाव प्राय. एक, दूसरे से भिन्न हैं। सभी पदार्थ एक-सा काम नहीं करते और एक ही काम नहीं करते। इसलिए हमें किस पदार्थ से अथवा किस प्रकार के भोजन से क्या लाभ उठाना चाहिए, यह जानना प्रत्येक स्त्री-पुरुष का कार्य है।

हमारे शरीर की उपमा मशीन के साथ दी गई है जिस प्रकार किसी मशीन में अनेक प्रकार के छोटे बड़े कल-पुरजे काम करते हैं, ठीक उसी प्रकार हमारे शरीर में, भीतर से लेकर बाहर तक बहुत से अवयव काम करते हैं। रेलगाड़ी के सबंध में बहुत सी बातें लोग जानते और समझते हैं। उसका भोजन कोयला और जल है। इन्हीं दो चीजों के बल पर रेलगाड़ी चलती है कोयला और पानी उसकी खूराक है। केवल इतना ही जानने से काम नहीं चलता। रेलगाड़ी के इंजन से ठीक-ठीक काम लेने के लिए उचित मात्रा में कोयला और पानी दिया जाता है। कोई भी कोयला उसके लिए उपयोगी नहीं होता। यह सभी जानते हैं कि पत्थर का कोयला ही उसके काम में आता है। पत्थर का कोयला ही इंजन को पूरी शक्ति पहुँचाता है। यदि पत्थर के कोयले के स्थान पर, लकड़ी का कोयला काम में लाया जाय तो रेलगाड़ी का काम न चलेगा। इंजन अपना काम न कर सकेगा और न वह अपनी हालत में रह सकेगा। इसका कारण यह है कि उसकी खूराक पत्थर का कोयला है। वह उसे जितनी ताकत देता है, लकड़ी का कोयला उतना नहीं दे सकता। रेलगाड़ी के इंजन से काम लेनेवालों को इस बात का ज्ञान होता है। इसीलिए वे पत्थर के कोयले के स्थान पर कभी लकड़ी के कोयले से काम नहीं लेते।

मोटरकार से भी सभी लोग परिचित हैं। उसकी खूराक पेट्रोल है। पेट्रोल

एक प्रकार का तेल होता है। कोई दूसरा तेल उसमें काम नहीं दे सकता। पेट्रोल के स्थान पर यदि रेंडी का तेल अथवा मिट्टी का तेल प्रयोग में लाया जाय तो कार की मशीन काम न कर सकेगी। रेंडी का तेल अथवा मिट्टी का तेल जलाने के काम में आता है, वह मोटरकार की खूराक नहीं है।

दूसरी मशीनों की भी यही दशा है। जिस मशीन की जो खूराक होती है, उसी से उसका काम चलता है। किसी दूसरी चीज से उसका काम नहीं चलाया जा सकता। छोटी और बड़ी अनेक प्रकार की मशीनें होती हैं। सभी के काम करने में कुछ वस्तुएँ काम आती हैं। जिनके द्वारा उन मशीनों को शक्ति मिलती है, वही उनकी खूराक बन जाती है। प्रायः सभी मशीनों की अलग-अलग आवश्यकता होती है। इसीलिए कोई एक ही तेल सभी मशीनों में काम नहीं देता।

हमारे शरीर की भी यही अवस्था है। जो लोग कहने लगते हैं कि पेट भरने के लिए कुछ भी चाहिए, उनकी बातों से ज्ञात होता है कि खाने के सभी पदार्थ एक ही काम करते हैं। इसीलिए प्रायः लोग इस बात पर विश्वास करते हैं कि पेट भरने के लिए कुछ भी होना चाहिए। परन्तु हमारे शरीर की आवश्यकता इस प्रकार की नहीं है। भोजन की कोई भी वस्तु पेट में ठूँस देने से दो खराबियाँ पैदा होती हैं। पहली यह कि उपयोगी भोजन न मिलने से शरीर को जो शक्ति और सहायता मिलनी चाहिए, वह नहीं मिलती। और दूसरी यह कि शरीर के भीतर और बाहर काम करनेवाले छोटे और बड़े अंग-प्रत्यंग विकृत होते हैं। इन दोनों बातों को सामने रखकर यह आवश्यक है कि शरीर को उपयोगी और आवश्यक भोजन दिया जाय।

शरीर की प्रत्येक अवस्था भोजन का परिणाम है

ऊपर की पंक्तियों में जो विवेचना की गई है, उससे इस बात का निर्णय हो जाता है कि शरीर का जो भोजन है, हमें उसी की व्यवस्था करनी चाहिए। इन बातों को सामने रखकर यदि हम मनुष्य की शारीरिक अवस्थाओं का अध्ययन करें तो हमको अनेक प्रकार की बातों का ज्ञान होता है। और उनसे भोजन की उपयोगिता और अनुपयोगिता सिद्ध होती है।

सभी मनुष्यों की शारीरिक अवस्थाएँ एक-सी नहीं होतीं। उनके संबंध में ध्यान देने से भिन्न-भिन्न बातें ज्ञात होती हैं। किसी का शरीर अधिक स्थूल है,

किसी का बहुत दुबला पतला है। किसी को पाचन-क्रिया की शिकायत है और कोई प्रायः बीमार बना रहता है। किसी का स्वास्थ्य अच्छा है और किसी का बिगड़ा हुआ है। इस प्रकार की जितनी बातें देखने को मिलती हैं, उन पर विचार करने की आवश्यकता है। मनुष्य के शरीर की बनावट प्राय एक-सी है। सभी की आवश्यकताएँ एक, दूसरे से मिलती जुलती हैं। फिर इस विभिन्नता का कारण क्या है? यह एक साधारण प्रश्न है, जिसे सभी को जानना चाहिए।

शरीर की जितनी अवस्थाएँ देखने में आती हैं, उन सबका कारण एकमात्र भोजन ही है, वही मनुष्य को रोगी और नीरोग बनाता है। भोजन से ही शरीर को शक्ति मिलती है और यदि उपयोगी भोजन प्राप्त न हो तो शरीर दिन पर दिन दुर्बल होता जाता है। इसी प्रकार अधिक मुटापा का कारण भी भोजन ही है। कितने ही लोग देखने में स्वस्थ और सुदर मिलते हैं और कितने ही इसके विरुद्ध पाये जाते हैं। इन सभी अवस्थाओं का कारण भोजन ही होता है। यह निश्चित है।

जिसने हमारे शरीर की रचना की है, उसने किसी को दुर्बल और किसी को स्वस्थ नहीं बनाया। शक्ति और स्वास्थ्य प्राप्त करना हमारा काम है और शरीर को अयोग्य, निर्बल तथा असमर्थ बना देना भी हमारे ऊपर निर्भर है। इन सभी बातों का सम्बन्ध हमारे भोजन के साथ है। शरीर की जितनी भी वाञ्छनीय अथवा अवाञ्छनीय परिस्थितियाँ हैं, उन सबका एक मात्र कारण भोजन है।

जिनको शरीर का सुख प्राप्त नहीं है, और जिन्हें उसका एक-न-एक विकार सदा चिन्तित और उदासीन बनाए रखता है, वे प्रायः अपने दुर्भाग्य को कोसा करते हैं। उनका विश्वास है कि भगवान ने जिसको जैसा बना दिया है, उसको उसी पर सन्तोष करना चाहिए। इस प्रकार के स्त्री-पुरुषों की धारणा एकदम मिथ्या होती है। यदि वे अपने दुर्भाग्य को कोसना बन्द कर दें और प्रयत्न करके शरीर को स्वस्थ बनाने की चेष्टा करें तो उनके जीवन सुखी बन सकते हैं। जिनके जीवन में इस प्रकार की कोई भी चिन्ता हो, उन्हें विश्वासपूर्वक भोजन के सम्बन्ध में उचित और आवश्यक ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। मैं अत्यन्त सहानुभूति के साथ उन्हें विश्वास दिलाती हूँ कि वे अपनी इच्छा के अनुसार शारीरिक सुधार और परिवर्तन कर सकेंगे।

खाने की वस्तुओं का चुनाव कैसे किया जाय ?

पहले यह लिखा जा चुका है कि खाने की वस्तुएँ बहुत हैं और वे सभी अलग-अलग काम करती हैं। शरीर को सभी से किसी एक ही तत्व की प्राप्ति नहीं होती। किसी से कुछ मिलता है और किसी से कुछ। इस बात को कभी न भूलना चाहिए कि हमारे शरीर की आवश्यकताएँ अनेक प्रकार की हैं और इन आवश्यकताओं की पूर्ति केवल भोजन से होती है। खाने के पदार्थों से शरीर को जो कुछ मिलता है, उनमें दो प्रधान हैं। कुछ भोजन ऐसे हैं जो शरीर में हड्डियों, पुट्ठों और अगों को पुष्ट बनाने तथा शक्ति देने का काम करते हैं और कुछ भोजन अग्नि पैदा करने के लिए ईंधन का काम करते हैं।

इस प्रकार हमारे भोजन की दो प्रधान प्रकृतियाँ हैं। इन दोनों आवश्यकताओं के लिए विभिन्न प्रकार के पदार्थ हैं। जो सभी आवश्यकता के अनुसार प्रयोग में आते हैं। उनके गुण भिन्न-भिन्न हैं। उपयोगिता भी एक दूसरे से भिन्न है। शरीर की आवश्यकता को सामने रखकर भोजन की व्यवस्था करना बुद्धिमानी का कार्य है। यदि किसी का शरीर लगातार दुर्बल हो रहा है, तो उसे समझ लेना चाहिए कि हम जो कुछ खाते हैं, उसका या तो ठीक-ठीक परिपाक नहीं होता और परिपाक न होने के कारण शरीर को रक्त, मांस और वीर्य नहीं प्राप्त होता अथवा जो पदार्थ हमारे भोजन में आते हैं, उनमें उन तत्वों का अभाव है, जिनसे शरीर दिन-पर-दिन दुर्बल होता जाता है।

इसी प्रकार स्थूलकाय स्त्री-पुरुषों को भी अपने भोजन की सामग्री पर ध्यान देना चाहिए। स्थूलता के दो प्रधान कारण हैं, अधिक चरबी पैदा करनेवाले भोजन और परिश्रम का अभाव। खाने पीने की कुछ वस्तुएँ ऐसी हैं, जिनसे शरीर को चरबी अधिक मिलती है और यदि अधिक परिश्रम न किया जाय, तो स्थूल-काय हो जाना स्वाभाविक है। जो लोग अपने शरीर की स्थूलता को कम करना चाहते हैं, उन्हें चरबी देनेवाले भोजन या तो एकदम बन्द कर देना चाहिए अथवा बहुत कम कर देना चाहिए। साथ ही शारीरिक परिश्रम उनके लिए अत्यन्त आवश्यक है। इस प्रकार भोजन के परिवर्तन से शरीर की परिस्थितियों को सरलता से बदला जा सकता है।

शरीर में विकार उत्पन्न होने के दो प्रमुख कारण हैं। पहला उपयोगी भोजन

इस आवश्यकता को सभी जानते हैं। उसके बिना न मनुष्य जीवित रह सकता है और न कोई पशु-पक्षी तथा कीड़ा-मकोड़ा। कहने का अभिप्राय यह है कि जीवन का सबसे अधिक संबंध वायु के साथ है।

तीसरी आवश्यकता सूर्य के प्रकाश की है। हमारे जीवन में सूर्य की धूप सभी प्रकार उपयोगी सिद्ध हुई है। सूर्य का प्रकाश न होता तो अन्धकार होता। प्रकाश का अभाव हमारे जीवन के क्षय का कारण है और प्रकाश हमें जीवन देता है। सूर्य के प्रकाश से सभी लोग लाभ उठाते हैं। उसके अभाव और प्रभाव को, छोटे और बड़े सभी जानते हैं। परन्तु हमारे जीवन के साथ उसका किस प्रकार सबंध है और उसके बिना जीवित रहना क्यों असम्भव है, इसका ज्ञान सभी को नहीं है। इसीलिए स्पष्ट रूप से उसके जानने की जरूरत है।

जल, वायु और धूप-तीनों का जीवन के साथ घनिष्ट सबंध है। इतना घनिष्ट, जितना सम्भव हो सकता है। स्वास्थ्य और जीवन के लिए इन तीनों की इतनी अधिक आवश्यकता है, जितनी और किसी की नहीं। इन तीनों की महत्वपूर्ण आवश्यकता का सबसे अधिक प्रमाण यह है कि प्रकृति ने सृष्टि रचना में सबसे साधारण स्थान उनको दिया है। सम्पूर्ण विश्व में इन तीनों की व्यापकता अधिक है। प्रकृति ने इनके अभाव के लिए कोई समय और संयोग नहीं रखा। जीवन के साथ इनका समावेश इतना अधिक है, जिससे कभी कहीं उनकी कमी का ज्ञान नहीं होता। उन तीनों की आवश्यकता और महानता का यह एक बड़ा प्रमाण है।

जिस प्रकार खाने और पीने के पदार्थ हमारे जीवन की रक्षा करते हैं, उसी प्रकार का जीवन और सरक्षण हमें जल-वायु और धूप के द्वारा मिलता है। इसीलिए उनकी गणना हमारे भोजन के पदार्थों में है। प्रकृति ने उनकी उत्पत्ति अधिक से अधिक की है। फिर भी एक सहज ही प्रश्न यह है कि उन तीनों के किस रूप से हमारा जीवन प्रभावित है? किस प्रकार हमें उन तीनों के द्वारा अधिक से अधिक लाभ पहुँच सकता है और किन अवस्थाओं में उनकी अशुद्धता और अनुपयोगिता हमारे स्वास्थ्य और जीवन के लिए हानिकर हो सकती है।

जिस प्रकार खाने और पीने के पदार्थों में हमें उनकी विशुद्धता और उपयोगिता का ध्यान रखना पड़ता है, ठीक उसी प्रकार और उससे भी अधिक जल,

जल पीकर हमको अपनी प्यास बुझानी पड़ती है। प्यास लगने पर यदि जल न पिया जाय तो भोजन के परिपाक होने में बड़ी रुकावट पड़ती है इसके अतिरिक्त शरीर में जल के और अनेक उपयोग होते हैं। भोजन के द्वारा शरीर को जो पुष्टिकारक तत्व प्राप्त होते हैं, वे शरीर के सभी भागों में न पहुँच सकें, यदि शरीर को बड़ी मात्रा में जल प्राप्त न हो। जल का प्रवाहित होना स्वभाविक गुण है। शरीर के भीतर अनेक प्रकार की रगें और नसें हैं। इनकी बनावट पतली नली के समान होती है। इन्हीं में रक्त प्रवाहित होकर शरीर के सभी अगों में पहुँचता है।

अधिक मात्रा में जल शरीर के भीतर पहुँचकर रक्त को सम्पूर्ण शरीर में पहुँचाने का कार्य करता है। इस प्रकार हमारे शरीर में जल के अनेक प्रकार के उपयोग होते हैं। इसीलिए जल की अधिक मात्रा शरीर में पहुँचना अत्यन्त आवश्यक होता है।

हमारे शरीर में जल के इतने ही कार्य नहीं है। ऊपर से लेकर भीतर तक शरीर के साथ जल का बहुत सबध है। जल की जो उपयोगिता ऊपर बताई गई है, वह केवल उस जल से होती है जिसे प्यास लगने पर मनुष्य पिया करता है। उसके द्वारा शरीर के भीतर अनेक प्रकार के कार्य होते हैं, जैसा कि ऊपर बताया गया है। जल के साथ शरीर के ऊपरी भाग का बहुत सबध है। जल के द्वारा शरीर के ऊपरी भाग की जिस प्रकार स्वच्छता होती है, वह किसी दूसरे पदार्थ के द्वारा नहीं हो सकती। शरीर के ऊपर एकत्र मल और विकार को धोने का कार्य केवल जल ही कर सकता है। उसे सम्पूर्ण शरीर को चेतना प्राप्त होती है।

जल की एक बड़ी विशेषता यह भी है कि उसके द्वारा हमारे शरीर और उसके प्रत्येक अग को स्फूर्ति प्राप्त होती है। यदि विशुद्ध और शीतल जल से शरीर को धोने और स्नान करने का अवसर न मिले तो शरीर में शिथिलता उत्पन्न होने लगती है। अगों की स्फूर्ति मारी जाती है और क्षण-क्षण पर शरीर में दुर्बलता का आभास होता है। इस प्रकार जल हमारे शरीर को विशुद्ध और शक्तिशाली बनाने का कार्य करता है। स्वास्थ्य प्राप्त करने के लिए जल अत्यन्त उपयोगी पदार्थ है।

जल में रोग नाशक शक्ति होती हैं। उसके द्वारा विकारों का नाश होता है। जिन कारणों से रोग उत्पन्न होते हैं, जल उनको दूर करने का काम करता है। और शरीर को निर्विकार बनाकर स्वास्थ्य और जीवन देता है। इस प्रकार शरीर

वायु और सूर्य के प्रकाश के संबंध में हमको ध्यान देने की आवश्यकता है। इनके संबंध में सावधान और सचेत न रहने से हमारा स्वास्थ्य और जीवन सहज ही संकट में पड़ जाता है।

साधारण श्रेणी के स्त्री पुरुषों की ही बात नहीं है, मैंने तो आमतौर पर लोगों को इनके संबंध में भूलें करते देखा है। अशिक्षित स्त्री पुरुषों की असावधानी देखकर आश्चर्य नहीं होता, विस्मय तो उस समय होता है, जब शिक्षित जन इनके संबंध में बड़ी बड़ी भूलें करते हैं। प्रकृति का अत्यन्त स्पष्ट सिद्धान्त यह है कि विशुद्ध वायु और सूर्य के प्रकाश के बिना जीवित रहना कठिन हो जाता है। इसी आधार पर उनका अभाव होने पर हमारे जीवन में अनेक प्रकार के रोगों का आक्रमण होता है। आश्चर्य तो यह है कि उसके बाद भी लोग जीवन के सत्य को नहीं पहचानते और औषधियों की सहायता से रोगों का निवारण करने की कोशिश करते हैं। इसलिए सबसे पहले इस बात के जानने की आवश्यकता है कि स्वच्छ और विशुद्ध वायु न केवल हमारा अत्यन्त आवश्यक भोजन है, वरन् जीवित रहने की सबसे पहली सामग्री है।

शरीर में जल का भाग और उसका उपयोग

हमारे शरीर में जल का विशेष महत्त्व है। इसका कारण है। हमारे शरीर, की रचना में जल का भाग अधिक है। शरीर में जितना रक्त होता है। उसमें नब्बे प्रतिशत जल का भाग होता है और तीन चौथाई मांस होता है। रक्त और रसों में जल का जो भाग होता है, उसी के द्वारा हमारे शरीर के प्रत्येक भाग में पुष्टिकारक तत्वों का प्रवेश होता है। और शरीर के अशुद्ध अंशों को लेकर रोमकूपों से बाहर होता है, इसे पसीना कहते हैं। पेशाब के मार्ग से भी शरीर के अवाञ्छनीय अंशों को निकालकर शरीर को विशुद्ध बनाने का काम करता है। प्यास लगने पर पानी का पीना इसलिए आवश्यक होता है कि उसके द्वारा पाचन-क्रिया का कार्य होता है और किया हुआ भोजन अनेक बार पचने के बाद जो भाग मल के रूप में शेष रह जाता है, उसको निकालने का काम करता है।

शरीर को स्वस्थ रखने की दृष्टि से जल का अधिक पीना आवश्यक है। प्रकृति ने इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए प्यास उत्पन्न की है। जब हमको जल की आवश्यकता होती है, उस समय हमें प्यास लगती है और शीतल

के ऊपरी भाग के साथ जल के अनेक संबंध हैं।

जल के इन महान गुणों का अनुभव करके प्राचीन अनुभवी विद्वानों ने हिन्दुओं में स्नान करने की व्यवस्था को स्थान दिया था। यह व्यवस्था आज तक हिंदू-जाति में चली आ रही है। स्नान को धार्मिक संस्कार के साथ, जोड़ा गया था। उसका कोई दूसरा अभिप्राय न था। शरीर को स्वास्थ्य और शक्ति देने के लिए स्नान अत्यन्त आवश्यक है, यही समझकर उसके साथ एक अनिवार्य संबंध जोड़ा गया था।

चिकित्सा में जल की विशेषता

शारीरिक स्वास्थ्य के लिए जल के सैकड़ों प्रयोग हैं। उसके द्वारा शरीर नीरोग बनता है, विकारों का नाश होता है। शक्ति उत्पन्न होती है और स्वास्थ्य की वृद्धि होती है। जल वास्तव में अमृत के समान शरीर की रक्षा करता है।

नवीन अनुसंधान के अनुसार, जल चिकित्सा के काम में भी आता है। उसके इस महत्व को बहुत प्राचीन काल से चिकित्सक स्वीकार करते आये हैं। परन्तु इधर उसके महत्व के संबंध में और भी नवीन खोज की गई है। पश्चिम देशों के अनेक विद्वानों ने कितनी ही पुस्तकें लिखी हैं। उन पुस्तकों में जल के द्वारा शरीर के प्रत्येक रोग का निवारण करने की युक्तियाँ बताई गई हैं। इस प्रकार आधुनिक समय में जल-चिकित्सा का महत्व दिन पर-दिन बढ़ने लगा है।

जर्मनी के प्रोफेसर लुई कूने ने सबसे पहले जल के इस महत्व को पहचाना था। वे ही जल चिकित्सा के आविष्कारक माने जाते हैं। प्रोफेसर लुई कूने ने जल-चिकित्सा के द्वारा भयानक से-भयानक रोगों के दूर करने में जिस प्रकार सफलता पाई थी, उसका वर्णन उन्होंने स्वयं किया है और अपनी सफलता से प्रोत्साहित होकर जर्मनी में उन्होंने जल-चिकित्सा का बहुत बड़ा अस्पताल खोला था। उस अस्पताल में बहुत दूर-दूर से लोग चिकित्सा कराने आते थे। उसकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि जो पुराने-से पुराने और भयानक से भयानक रोग असाध्य समझे जाते थे, जिनको दूर करने में बड़े-से-बड़े डाक्टर अपना साहस छोड़ बैठते थे, उन असाध्य रोगों को निवारण करने में प्रोफेसर लुई कूने को असाधारण सफलता मिली थी, और अपनी उस सफलता के कारण ही समस्त संसार में उनको अमर कीर्ति प्राप्त हुई थी।

प्रोफेसर लुई कूने के बाद योरप के कितने ही विद्वानों का ध्यान जल के महत्व की ओर आकर्षित हुआ। फल यह हुआ कि अनेक प्रकार की नयी-नयी खोजें की गईं और जल के महत्व पर न जाने कितने लेख और ग्रन्थ लिखे गये। आज संसार में जल-चिकित्सा का महत्व क्रमशः बढ़ रहा है। सबसे बड़ी बात यह है कि चिकित्सक, वैद्य, डाक्टर और हकीम स्वयं जल के इस महत्व को स्वीकार करने लगे हैं। यह कहना अनुचित न होगा कि संसार के अधिक शिक्षा प्राप्त स्त्री-पुरुषों ने जल चिकित्सा पर अधिक विश्वास प्रकट किया है और दूसरी चिकित्साओं से उनका विश्वास लगातार कम होता जा रहा है।

हमारे देश में भी जल-चिकित्सा का महत्व बढ़ रहा है। बहुत दिन पहले महात्मा गांधी ने प्रोफेसर लूई कूने की प्रशंसा की थी और उनकी जल-चिकित्सा पर बहुत कुछ लिखा था। महात्मा गांधी स्वयं जल-चिकित्सा के पक्षपाती थे और प्रायः उसकी प्रशंसा किया करते थे।

हमारे देश में आज जल-चिकित्सा नयी चीज नहीं है। कितने ही विद्वानों ने उसके सम्बन्ध में अनुभव किये हैं। विदेशी भाषाओं में, उसके सम्बन्ध में प्राप्त साहित्य का अध्ययन किया है और उसे अत्यन्त उपयोगी पाने के कारण उसका प्रचार किया है। अब तो इस देश के अनेक बड़े-बड़े शहरों में जल-चिकित्सा के औषधालय खुल गये हैं और उनमें केवल जल की सहायता से असाध्य-से असाध्य रोगों की चिकित्सा होती है।

विषयान्तर हो जाने के भय से यहाँ पर उन बातों पर अधिक प्रकाश नहीं डाला जा सकता, जिनके द्वारा रोगों को दूर करने में जल सहायक होता है। यहाँ पर संक्षेप में इतना ही बता देना पर्याप्त होगा कि रोगों का निवारण करने में जल कितनी बड़ी शक्ति रखता है। इसके सम्बन्ध में अधिक जानने की जिनमें अभिरुचि उत्पन्न हो, उन्हें जल-चिकित्सा पर लिखी हुई उपयोगी पुस्तकों का अध्ययन करना चाहिए। उनके द्वारा विस्तारपूर्वक सभी बातें जानने को मिलेंगी।

विशेष अवस्थाओं में जल के दैनिक प्रयोग

जल की विशेषता के सम्बन्ध में यह बात सदा स्मरण रखने के योग्य है कि जल में विकारों को दूर करने की अद्भुत शक्ति है। जल के प्रयोग से सरलता-पूर्वक उनको निवारण किया जा सकता है। यदि लोग औषधियों का आश्रय

छोड़कर, जल की उपयोगिता को जानने की चेष्टा करें और उनसे लाभ उठाने का प्रयत्न करें तो शरीर को नीरोग रखने में उससे बड़ी सहायता मिल सकती है। इसके सम्बन्ध में जितनी ही जानकारी प्राप्त की जायगी और विश्वास किया जायगा, उतना ही लाभ होगा।

सभी प्रकार के लोगों को अपाचन का कष्ट रहा करता है। जो लोग परिश्रम नहीं करते और जिन्हें भोजन-सम्बन्धी बातों का अधिक ज्ञान नहीं है, वे प्राय. किसी न किसी रोग के शिकार रहते हैं। उनकी इस बीमारी का कारण भोजन होता है। खाने पीनेवाली वस्तुओं का ठीक परिपाक न होने और मल के विसर्जन में बाधा पड़ने पर रोगों का उत्पन्न होना स्वाभाविक है। उसके लिए सबसे पहले खाद्य पदार्थों पर ध्यान देना चाहिये और साथ ही जिनको पाचन की शिकायत हो उन्हें अधिक मात्रा में जल पीना चाहिये।

विशुद्ध जल भोजन को पचाने और शरीर से मल निकालने में अद्भुत चिकित्सा का काम करता है। इसलिए भोजन के पहले और उसके पश्चात् अनेक बार जल पीने का अभ्यास डालना चाहिये। इससे उन्हें बहुत कुछ लाभ होगा और मल की रुकावट से पैदा होनेवाली गरमी सरलतापूर्वक शरीर से बाहर निकल सकेगी।

जिनके शरीर में प्राय: गरमी बनी रहती है, उन्हें अधिक मात्रा में जल पीना अत्यन्त आवश्यक होता है। इसलिए कि जब भोजन का ठीक-ठीक परिपाक नहीं होता और मलाशय में मल की रुकावट होती है, उसी अवस्था में मल की गरमी बढ़ती है। उससे प्राय मुँह सूखा करता है, चित्त अशान्त रहता है। भूख भी बहुत कम लगती है। इसका अर्थ यह होता है कि शरीर में विकारों की वृद्धि हो रही है। अतएव भोजन में रुकावट करना चाहिए। गरिष्ठ भोजन के स्थान पर हल्का और सुपाच्य भोजन लेना चाहिए। साथ ही शुद्ध और शीतल जल अधिक पीना चाहिए।

जिनको मल-विसर्जन की शिकायत रहती है, उन्हें प्रात काल सोकर उठने पर कम से कम एक गिलास शीतल जल पीना चाहिए। कोष्टबद्धता की अवस्था में कई बार जल पीना आवश्यक है। इससे मल की खुश्की दूर होती है और आँतों को मल के निकालने में सहायता मिलती है।

आजकल शहरों में चाय पीने की प्रथा बहुत बढ़ गई है। इससे मल शरीर से बाहर निकलने में रुकावट होती है। चाय के कारण पाचन-क्रिया में भी बाधा पड़ती है, इसलिए जिनको कोष्ठबद्धता की शिकायत हो, उन्हें चाय का पीना बंद कर देना चाहिए और प्रातःकाल कई बार जल पीने का अभ्यास डालना चाहिए।

प्रायः स्त्री-पुरुषों में झूठे विश्वास देखे जाते हैं। मैंने साधारण तौर पर स्त्री-पुरुषों को यह कहते हुए सुना है कि सवेरे बिना कुछ खाये-पिये पानी न पीना चाहिए। इस प्रकार के झूठे विश्वास प्रत्येक अवस्था में हानिकारक होते हैं। सवेरे कुछ खाकर पानी पीने का नियम ही भ्रमपूर्ण है। उस समय किसी को भूख नहीं लगती। जो लोग भूख अनुभव करते हैं, वे अपने आपको और साथ ही दूसरों को धोखा देते हैं। इस प्रकार की भूख पड़ी हुई आदतों का परिणाम है। यह भूख, वास्तविक भूख नहीं होती। लोगों में सवेरे कुछ खाने का जो नियम पाया जाता है, उसे जलपान कहते हैं। जल-पान का अर्थ केवल पानी पीने से है। उसमें किसी प्रकार भोजन के पदार्थों का मिश्रण न होना चाहिए।

जल-पान के समय यदि कोई ठोस पदार्थ न खाया जाय और केवल शुद्ध और शीतल जल पिया जाय, तो वह बहुत लाभकारी होता है। स्वास्थ्य के लिए यह अत्यन्त उपयोगी है। इसके द्वारा भूख की वृद्धि होती है। भोजन पचाने-वाली अग्नि प्रदीप्त होती है और शरीर नीरोग होता है। लोगों को चाहिए कि जल-पान के समय किसी प्रकार का खाद्य-पदार्थ काम में न लावें और शुद्ध तथा शीतल जल का प्रयोग करें। जल-पान का वास्तव में यही अर्थ होता है।

सवेरे जल-पान करने के सम्बन्ध में एक बात और जान लेने योग्य है, जिनको प्रातःकाल जल पीने की आदत नहीं है, उनको आरम्भ में जल पीने में अरुचि मालूम होती है और अरुचि के कारण वे पानी पी नहीं पाते। ऐसा होना स्वाभाविक है। परन्तु इसका ख्याल न करना चाहिए। बहुत थोड़े दिनों के अभ्यास से यह अरुचि, रुचि के रूप में बदल जाती है और कुछ दिनों के बाद ऐसी आदत पड़ जाती है, जिससे मनुष्य प्रातःकाल उठते ही बिना जल पिये नहीं रह सकता। आदतें जैसी डाली जाती हैं, वैसी ही वे पड़ जाती हैं। उनका बनाना और बदलना अपना काम होता है।

इस प्रकार शरीर की प्रत्येक आवश्यकता के साथ जल का अनिवार्य सम्बन्ध

है। हमारे शरीर में जल का भाग अधिक है। इसीलिए हमको जल की अधिक आवश्यकता भी है शरीर के भीतर कम मात्रा में जल के पहुँचने से अनेक प्रकार की व्याधियाँ और पीड़ाएँ उत्पन्न होती हैं. इसका अर्थ यह है कि शरीर की ओर से स्वभावत. जल की माँग होती है। जब उसकी पूर्त्ति नहीं होती तो उसकी कठोर माँग हमारे सामने आती है। उसे प्यास कहते हैं। यह माँग ऐसी होती है, जिसकी अवहेलना नहीं की जा सकती। फिर भी, यदि किसी अवस्था में प्यास को रोकने की ही आवश्यकता पड़ती है तो उससे हमें कितना बड़ा कष्ट होता है, इसे प्रत्येक मनुष्य जानता है।

संस्कृत भाषा में जल शब्द का पर्यायवाची शब्द 'जीवन' है। जल हमारे शरीर की एक साधारण आवश्यकता है, जिसे रोका नहीं जा सकता। उसके रोकने से अनेक प्रकार के रोगों की उत्पत्ति होती है और उसकी पूर्त्ति से रोग-विकार नष्ट होते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि स्वास्थ्य और जीवन के लिए भोजन के साथ-साथ जल की कितनी अधिक आवश्यकता हमको होती है।

इसी आधार पर यह समझा जा सकता है कि भोजन के पदार्थों में भी जो कुछ मनुष्य खाता है, उसमें जल की मात्रा ही अधिक होती है। भोजन के अतिरिक्त जो जल पिया जाता है, उसकी मात्रा भोजन से अतिरिक्त अधिक होती है। परन्तु जानने की बात यह है कि हमारे भोजन के ठोस पदार्थों में भी जल की मात्रा ही अधिक रहती है।

मनुष्य के भोजन में आलू का अधिक प्रयोग होता है। आलू में तीन-चौथाई भाग जल का होता है। खाने के अनाजों में भी, जो बिल्कुल सूखे होते हैं, पानी का आठवाँ भाग होता है। अण्डे में तीन चौथाई से भी अधिक जल होता है। और टमाटर में अधिकांश जल ही होता है। शाकों और फलों में जल की अधिकता होती है। दूसरी तरकारियों में भी जल का भाग अधिक पाया जाता है।

भोजन से अलग जो पानी पिया जाता है, वह तो अधिक होता ही है, किन्तु खाने की वस्तुओं में भी अधिकाश भाग हमें जल का ही मिलता है। एक बात और स्मरण रखने की है। खाने के सभी पदार्थ उस समय तक अधिक उपयोगी होते हैं, जबतक वे पूर्ण रूप से सूख नहीं जाते और सूखने के पहले उनमें जल की मात्रा अधिक होती है। इससे सिद्ध होता है कि प्रत्येक अवस्था में जल

हमारे स्वास्थ्य और जीवन में विशेष स्थान रखता है।

जो जल हमारे लिए इतना जीवनप्रद है, वह सर्वथा विशुद्ध और शीतल होना चाहिये। गंदा जल अनेक प्रकार की बीमारियों का कारण होता है। ज्वर, मियादी बुखार, अतिसार, कालरा तथा अन्य भयानक बीमारियाँ अशुद्ध और हानिकारक जल से उत्पन्न होती हैं। छोटे-छोटे रोगों में जल की गंदगी का बहुत बड़ा सम्बन्ध होता है। लोग इस ओर ध्यान नहीं देते। मैंने तो प्रायः स्त्री-पुरुषों को गन्दे तालाबों और नालियों का पानी पीते हुए देखा है। उनको इस बात का ज्ञान नहीं होता कि इस गदे जल से हमारे शरीर में अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। फोड़ा-फुन्सियों के पैदा होने में इस गंदगी का बहुत बड़ा हाथ होता हैं।

इसलिए जल की शुद्धता और ताजगी पर बहुत ध्यान देने की आवश्यकता है। साधारण घरों में जो पानी रखा जाता है, उसे ढककर नहीं रखा जाता। इससे वह गंदा होता रहता है। यह गंदगी बच्चों से लेकर बूढ़ों तक, सभी के शरीरों में अनेक प्रकार के विकार उत्पन्न करती है। जल जितना ही शुद्ध, स्वच्छ और ताजा होगा, शरीर को उससे उतना ही लाभ पहुँचेगा।

वायु हमारे जीवन का प्राण है

प्रकृति ने अपनी रचना में जल, वायु और सूर्य की धूप का अधिक आश्रय लिया है। इन तीनों में वायु और धूप का महत्व अधिक है। यही कारण है कि पौधों और वृक्ष से लेकर, समस्त जीवधारियों तक, वायु प्राणों के रूप में व्यवहृत होता है।

यह विवेचना, केवल कल्पना के रूप में नहीं है। वास्तविक सत्य है। कोई भी पौधा और वृक्ष वायु के बिना अपने जीवन की रक्षा नहीं कर सकता। जीवनधारियों में कीड़ों, पतिंगों से लेकर, पशु-पक्षियों और मनुष्यों की आवश्यकता तो और भी अधिक है। वायु के अभाव में क्षणभर काटना कठिन हो जाता है। इसीलिए वायु को प्राणों के नाम से उल्लेख किया गया है।

एक मिनट में हमको अनेक बार साँस लेनी पड़ती है। यदि हम साँस लेना रोक दें तो जी घबराने लगता है और मालूम होता है कि हमारे प्राण जा रहे हैं। हमारे जीवन में वायु की कितनी बड़ी आवश्यकता और विषेषता है, इसका यह प्रमाण है।

है। हमारे शरीर में जल का भाग अधिक है। इसीलिए हमको जल की अधिक आवश्यकता भी है शरीर के भीतर कम मात्रा में जल के पहुँचने से अनेक प्रकार की व्याधियाँ और पीड़ाएँ उत्पन्न होती हैं, इसका अर्थ यह है कि शरीर की ओर से स्वभावत. जल की माँग होती है। जब उसकी पूर्त्ति नहीं होती तो उसकी कठोर माँग हमारे सामने आती है। उसे प्यास कहते हैं। यह माँग ऐसी होती है, जिसकी अवहेलना नहीं की जा सकती। फिर भी, यदि किसी अवस्था में प्यास को रोकने की ही आवश्यकता पड़ती है तो उससे हमें कितना बड़ा कष्ट होता है, इसे प्रत्येक मनुष्य जानता है।

संस्कृत भाषा में जल शब्द का पर्यायवाची शब्द 'जीवन' है। जल हमारे शरीर की एक साधारण आवश्यकता है, जिसे रोका नहीं जा सकता। उसके रोकने से अनेक प्रकार के रोगों की उत्पत्ति होती है और उसकी पूर्त्ति से रोग-विकार नष्ट होते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि स्वास्थ्य और जीवन के लिए भोजन के साथ-साथ जल की कितनी अधिक आवश्यकता हमको होती है।

इसी आधार पर यह समझा जा सकता है कि भोजन के पदार्थों में भी जो कुछ मनुष्य खाता है, उसमें जल की मात्रा ही अधिक होती है। भोजन के अतिरिक्त जो जल पिया जाता है, उसकी मात्रा भोजन से अतिरिक्त अधिक होती है। परन्तु जानने की बात यह है कि हमारे भोजन के ठोस पदार्थों में भी जल की मात्रा ही अधिक रहती है।

मनुष्य के भोजन में आलू का अधिक प्रयोग होता है। आलू में तीन-चौथाई भाग जल का होता है। खाने के अनाजों में भी, जो बिल्कुल सूखे होते हैं, पानी का आठवाँ भाग होता है। अण्डे में तीन चौथाई से भी अधिक जल होता है। और टमाटर में अधिकांश जल ही होता है। शाकों और फलों में जल की अधिकता होती है। दूसरी तरकारियों में भी जल का भाग अधिक पाया जाता है।

भोजन से अलग जो पानी पिया जाता है, वह तो अधिक होता ही है, किन्तु खाने की वस्तुओं में भी अधिकांश भाग हमें जल का ही मिलता है। एक बात और स्मरण रखने की है। खाने के सभी पदार्थ उस समय तक अधिक उपयोगी होते हैं, जबतक वे पूर्ण रूप से सूख नहीं जाते और सूखने के पहले उनमें जल की मात्रा अधिक होती है। इससे सिद्ध होता है कि प्रत्येक अवस्था में जल

हमारे स्वास्थ्य और जीवन में विशेष स्थान रखता है।

जो जल हमारे लिए इतना जीवनप्रद है, वह सर्वथा विशुद्ध और शीतल होना चाहिये। गंदा जल अनेक प्रकार की बीमारियों का कारण होता है। ज्वर, मियादी बुखार, अतिसार, कालरा तथा अन्य भयानक बीमारियाँ अशुद्ध और हानिकारक जल से उत्पन्न होती हैं। छोटे-छोटे रोगों में जल की गंदगी का बहुत बड़ा सम्बन्ध होता है। लोग इस ओर ध्यान नहीं देते। मैंने तो प्रायः स्त्री-पुरुषों को गन्दे तालाबों और नालियों का पानी पीते हुए देखा है। उनको इस बात का ज्ञान नहीं होता कि इस गंदे जल से हमारे शरीर में अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। फोड़ा-फुन्सियों के पैदा होने में इस गंदगी का बहुत बड़ा हाथ होता है।

इसलिए जल की शुद्धता और ताजगी पर बहुत ध्यान देने की आवश्यकता है। साधारण घरों में जो पानी रखा जाता है, उसे ढककर नहीं रखा जाता। इससे वह गंदा होता रहता है। यह गंदगी बच्चों से लेकर बूढ़ों तक, सभी के शरीरों में अनेक प्रकार के विकार उत्पन्न करती है। जल जितना ही शुद्ध, स्वच्छ और ताजा होगा, शरीर को उससे उतना ही लाभ पहुँचेगा।

वायु हमारे जीवन का प्राण है

प्रकृति ने अपनी रचना में जल, वायु और सूर्य की धूप का अधिक आश्रय लिया है। इन तीनों में वायु और धूप का महत्व अधिक है। यही कारण है कि पौधों और वृक्ष से लेकर, समस्त जीवधारियों तक, वायु प्राणों के रूप में व्यवहृत होता है।

यह विवेचना, केवल कल्पना के रूप में नहीं है। वास्तविक सत्य है। कोई भी पौधा और वृक्ष वायु के बिना अपने जीवन की रक्षा नहीं कर सकता। जीवन-धारियों में कीड़ों, पतिंगों से लेकर, पशु-पक्षियों और मनुष्यों की आवश्यकता तो और भी अधिक है। वायु के अभाव में क्षणभर काटना कठिन हो जाता है। इसीलिए वायु को प्राणों के नाम से उल्लेख किया गया है।

एक मिनट में हमको अनेक बार साँस लेनी पड़ती है। यदि हम साँस लेना रोक दें तो जी घबराने लगता है और मालूम होता है कि हमारे प्राण जा रहे हैं। हमारे जीवन में वायु की कितनी बड़ी आवश्यकता और विषेषता है, इसका यह प्रमाण है।

लौटता है और फेफड़े उसे तुरत-से-तुरंत बाहर फेंकने का काम करते हैं। यदि फेफड़े ऐसा न करें और वह जहरीली गैस शरीर से तुरत बाहर न निकल जाय तो वह हमारे बीमार हो जाने का तुरंत कारण बनेगी। यह गैस हमारे शरीर के भीतर रक्त का-विषैला अंश है।

यह विषैली गैस पेड़ों और पौधों के काम आती है। और पेड़ तथा पौधे इस विषाक्त अंश को लेकर, हमारे लिए जो वायु छोड़ते हैं, उसमें सम्पूर्ण रूप से आक्सीजन होता है। इसका यह अर्थ होता है कि हमारी निकाली हुई विषैली गैस अथवा वायु पेड़ और पौधे लेकर जीवित रहते हैं। और उसके बदले वे जो वायु उत्पन्न करते हैं, वही हमारे शरीर में प्राणों का संचार करता है।

मनुष्य की तरह, पशु भी जहरीली गैस छोड़ते हैं, और आक्सीजन वाले वायु को अपने काम में लाते हैं। पहाड़ों का वायु हमारे लिए अत्यन्त शुद्ध स्वास्थ्यजनक और जीवन देनेवाला होता है। किंतु जहाँ पर आदमी अधिक होते हैं अथवा पशु बाँधे या रखे जाते हैं, वहाँ का वायु विषैला होता है। उस विषैले वायु से हमारे शरीर में तुरंत विकार उत्पन्न होते हैं और हमारे शरीर में भयानक पीड़ा पैदा करते हैं। यदि लगातार इसी प्रकार का दूषित और विषैला वायु मिलता रहे तो फिर हमारे नीरोग रहने का और कोई साधन नहीं रह जाता।

विषाक्त वायु का प्रकोप

विशुद्ध वायु हमारे शरीर के विकारों और रोगों को दूर करने में हमारी सहायता करता है। इसलिए शरीर की प्रत्येक अवस्था में विशुद्ध और स्वस्थ वायु का मिलना आवश्यक होता है। प्रकृति का यह नियम है। परन्तु इस प्रकार के स्त्री-पुरुष बहुत कम मिलते हैं, जिनको प्रकृति के इस नियम का ज्ञान होता है। इस सत्य का ज्ञान न होने के कारण प्रायः लोग उलटा व्यवहार करते हैं।

मैंने अधिकांश अवसरों पर देखा है कि रोगी को बन्द कमरे में रखा जाता है। कमरे की खिड़कियाँ और दरवाजे बन्द रखे जाते हैं। अनेक अवसरों पर छोटी-छोटी कोठरियों में मैंने बीमार स्त्री-पुरुषों को पाया है। इन कोठरियों और बन्द कमरों का वायु इसलिए स्वभावतः दूषित हो जाता है कि उनमें ताजे वायु के आने जाने का कोई रास्ता नहीं रहता।

और स्वच्छ वायु के पहुँचने के द्वार नहीं रहते तो रोगी का कमरा, विषैली गैसों का कमरा बन जाता है और उसके विषाक्त प्रभाव से रोगी के साथ-साथ दूसरे लोग भी बीमार होने लगते हैं। इसलिए न तो रोगी का कमरा चारो ओर से बन्द होना चाहिये और न रोगी के पास स्त्री-पुरुषों की भीड़ होनी चाहिये। इससे लाभ होने की अपेक्षा हानि अधिक होती है।

अधिक भीड़ मे और सिनेमा थियेटर में लोगों को ताजी और स्वास्थ्य-जनक वायु के स्थान पर दूषित और विषाक्त वायु ही लोगों को मिलता है। यही कारण है कि उन स्थानों मे बैठने के कारण प्रायः लोगों के मस्तक में वेदना उत्पन्न हो जाती है। यह सब दूषित गैस का प्रभाव है।

सूर्य की किरणों में जीवन-शक्ति उत्पन्न करने की क्षमता

विश्व की रचना मे प्रकृति ने जिन विशेष तत्वों से काम लिया है, उनमें तीन हैं: वायु जल और सूर्य की किरणें। जल और वायु के साथ हमारे जीवन का कितना घनिष्ट संबंध है, इस पर लिखा जा चुका है। यहाँ पर सूर्य की किरणों की उपयोगिता पर प्रकाश डालना है।

सूर्य की किरणों को साधारण रूप मे धूप के नाम से संबोधन किया जाता है। इस धूप में जीवन उत्पन्न करने की शक्ति है। धूप के द्वारा रोग-कीटाणु मरते हैं। विकारों का क्षय होता है। स्वास्थ्य की वृद्धि होती है। इस प्रकार सूर्य के प्रकाश और उसकी किरणों से समस्त प्राणियों को जीवन मिलता है।

कीड़े-पतिंगों से लेकर, पशुओं, पक्षियों और मनुष्यो तक, सभी को अनिवार्य रूप से सूर्य का प्रकाश मिलना चाहिए। धूप के अभाव में विकार उत्पन्न होते हैं। मल और विकार रोग के कीटाणु पैदा करते हैं और अधिक दिनों तक धूप का अभाव जीवन के क्षय का कारण होता है। इसके सम्बन्ध में यदि जानने और समझने की चेष्टा की जाय, तो उन सभी बातों की खोज होती है, जो स्पष्ट रूप से हमें बताते हैं कि सूर्य की किरणो के साथ हमारा कितना अधिक संबंध है।

अपने दैनिक जीवन में हमे नित्य ही अनेक प्रकार की घटनाएँ देखने को मिलती हैं, जिनसे सूर्य के प्रकाश और उसकी किरणो के प्रभाव का महत्व मालूम होता है। खेत जब बोये जाते हैं और उनमें छोटे-छोटे पौधे उगते हैं तब उनको सूर्य के प्रकाश और किरणों की आवश्यकता होती है। कई

रखी जाती हैं। इस प्रकार की वस्तुएँ वायु और सूर्य की किरणो को पाने के बाद ही अच्छी रह सकती हैं। यदि उनके रखने मे असावधानी होती है तो वे वस्तुएँ बिगड़ने लगती हैं और यदि उन्हें खुली वायु और धूप मे नहीं रखा जाता तो बहुत थोड़े समय मे खाने अथवा पीने के अयोग्य हो जाती हैं।

इस प्रकार की वस्तुओं में अनेक प्रकार के अचार और खटाइयाँ हैं। इन वस्तुओं को इस प्रकार बनाकर रखा जाता हैं कि वे कुछ दिनो तक चल सकें और खाने के काम मे आ सकें। समझदार स्त्रियाँ अथवा इनके व्यवसायी इन बातों का ज्ञान रखते हैं। इन बनी हुई वस्तुओं को वायु और धूप मिलने की आवश्यकता होती है। इसके सम्बन्ध मे सावधानी रखने से ही वे अच्छी अवस्था में रह सकती हैं। यदि इसमें भूल की जाती है तो बहुत थोड़े समय में इस प्रकार की बनी हुई चीजे खराब होने लगती हैं। उनमे फफूँदी लग जाती है और थोड़े समय के बाद वे खाने मे अरुचिपूर्ण हो जाती हैं। इसलिए आवश्यकता के अनुसार उन्हें खुली वायु में रखना पड़ता है और उनमें धूप पहुँचानी पड़ती है। यह खराबी जब आरम्भ होती है यदि उसी समय उन वस्तुओं को धूप पहुँचाई जाती है तो वे बिगड़ने से बच जाती हैं और पुनः अपनी वास्तविक अवस्था में आ जाती हैं। इस प्रकार की सावधानी से बराबर उनकी रक्षा करनी पड़ती है।

वायु और धूप के अभाव में ठीक यही अवस्था हरे अनाजों और मसालों की होती है। इन पदार्थों को यदि धूप और वायु न मिले तो वे बिगड़ने और सड़ने लगते हैं। उनमें अनेक प्रकार के कीटाणु पैदा हो जाते हैं। हरे अनाजों के बिगड़ने में बिल्कुल देर नहीं लगती। इसलिए आवश्यकता के अनुसार उनको वायु और धूप पहुँचानी पड़ती है और उन्हें बिगड़ने से बचाना पड़ता है।

शाक और भाजी तथा फल और भी अधिक धूप और वायु की आवश्यकता रखते हैं। इन वस्तुओं को यदि किसी बद बरतन में रखा जाय तो वे बहुत शीघ्र बिगड़ जायँ और एक-दो दिन के बाद ही वे खाने के अयोग्य हो जायँ, इसलिए उन्हें ऐसे ढंग से रखना पड़ता है कि जिससे उनको वायु और प्रकाश बराबर मिलता रहे और वे खराब न हो सकें। इसकी बड़ी आवश्यकता होती है।

जाता है। इसलिए इन खराबियों से बचाने के लिए एक ही उपाय है और वह यह कि थोड़े-थोड़े दिनों के बाद रखे हुए कपड़ों को धूप में सुखाये।

सूर्य की धूप न मिलने के कारण दूसरी वस्तुओं की भी यही अवस्था होती है। आलमारियों में लदी हुई पुस्तकों को कभी-कभी हलकी धूप देनी पड़ती है। यदि ऐसा नहीं किया जाता तो उनमें सील पैदा हो जाती है और दीमक लग जाने से पुस्तकें खराब हो जाती हैं। उनकी इस दुरवस्था को बचाने के लिए धूप देना आवश्यक हो जाता है। यही बात उन सन्दूकों की होती है, जिनमें अनेक प्रकार की वस्तुएँ रखी रहती हैं। धूप न मिलने के कारण सन्दूकों की अवस्था अच्छी नहीं रहती। यदि समय-समय पर उन सन्दूकों को खोलकर धूप में रख दिया जाता है तो उनमें रखी हुई वस्तुएँ खराब नहीं होतीं।

इस प्रकार, जहाँ कहीं देखा जाय, सूर्य की धूप की उपयोगिता ज्ञात होती है। उसका अभाव निर्जीव और सजीव सभी प्रकार के पदार्थों में दोष उत्पन्न करता है। इसी को जीवन का क्षय कहते हैं। सूर्य की धूप मिलने से किसी प्रकार का दोष नहीं उत्पन्न होता। इसीलिए सूर्य की किरणों में जीवन-उत्पादक शक्ति स्वीकार की जाती है।

यह अवस्था साधारण वस्तुओं की होती है। मानव-जीवन का सूर्य के इन गुणों के साथ बहुत घनिष्ट सम्बन्ध है। इतना घनिष्ट सम्बन्ध है कि धूप के अभाव में हमारा जीवन ही कठिन हो जाता है। सूर्य की किरणों की इस उपयोगिता को एक ओर रखा जाय और दूसरी ओर मानव-जीवन की परिस्थितियों को रखकर, उन पर विचार किया जाय तो स्पष्ट रूप से इस बात का ज्ञान होगा कि जिन्हें सूर्य का प्रकाश और उसकी धूप नहीं मिलती, उनकी क्या दशा होती है।

धूप के साथ हमारे जीवन का आश्रय

सूर्य की किरणों पर हमारा जीवन किस प्रकार आश्रित है, उसकी आलोचना हमारी आँखों में सूर्य की धूप का महत्व और भी बढा देती है। सूर्य की किरणों से हमें जीवन और भोजन दोनों प्राप्त होते हैं। इनका सम्बन्ध इस प्रकार है—

१—सूर्य की किरणों से हमारा शरीर स्वतंत्ररूप से उन तत्वों को प्राप्त करता है, जिनसे हमारा शरीर स्वास्थ्य, शक्ति और जीवन उपलब्ध करता है।

२—हमारा जीवन जिन पौधों और वृक्षों पर निर्भर है, उन वृक्षों और

पौधों का जीवन सूर्य की किरणों पर आश्रित है।

३—हमारे शरीर में जितने भी विकार उत्पन्न होते हैं और जो हमें निर्बल तथा निर्जीव बनाते हैं, सूर्य की किरणों के द्वारा उनका विनाश होता है।

मनुष्य एव पशुओं को पेड़ों और पौधों से भोजन मिलता है। पेड़ और पौधे प्रोटीन (पोषक तत्व), फैट (चर्बी), कारबोहाइड्रेट और विटामिन पैदा करते हैं। पौधों और पेड़ों की पत्तियों, जड़ों और फलों के द्वारा मनुष्य को इन पोषक तत्वों की प्राप्ति होती है। जड़ों के द्वारा हमें जो खनिज लवण प्राप्त होता है, हमारे भोजन के लिए वह अत्यन्त आवश्यक है।

सूर्य की किरणों से मनुष्य को जो पोषक और जीवन तत्व प्राप्त होते हैं, उसके दो साधन हैं। पहला यह कि सूर्य की किरणें स्वय हमारे शरीर में जीवन-शक्ति उत्पन्न करती हैं और विकारों का विनाश करती हैं और दूसरा साधन है, फल, फूल और पत्तियाँ। इन फलों और पत्तियों में सूर्य की किरणों से मिलनेवाले पोषक तत्व और जीवन तत्व एकत्र होते हैं और ये सब आहार के रूप में हमारे शरीर तथा जीवन में प्रवेश करते हैं। इन शक्तियों को हम स्वय भी प्राप्त करते हैं और पेड़ों तथा पौधों के द्वारा भी पाते हैं। शारीरिक विकास, क्षय की पूर्ति और कार्य करने की शक्ति के लिए, हमारे लिए अत्यन्त आवश्यक है प्रोटीन्स, फैट्स कारबोहाइड्रेटस, खनिज लवण और विटेमिन्स। इस प्रकार सूर्य मे महान् शक्ति उत्पादन करने की अद्भुत शक्ति है और उसकी किरणों में विकारों का नाश करने, रोगों को निर्मूल करने तथा स्वास्थ्य और शक्ति उत्पन्न करने की महान क्षमता है।

सूर्य की किरणे, हमारे शरीर मे अनेक विटेमिन्स उत्पन्न करती हैं, उनमें विटेमिन डी हमारे शरीर की हड्डियों को सुदृढ़ और विकसित करने के लिए अत्यन्त उपयोगी है। जो बच्चे नंगे बदन सूर्य की किरणों में स्वतन्त्रतापूर्वक खेलते और दौड़ते हैं, उनके शरीर पुष्ट होते हैं, शक्ति की वृद्धि होती है और रक्त शुद्ध होता है। परन्तु जो बच्चे धूप से बचाकर रखे जाते हैं और जिनके शरीर पर स्वतन्त्रतापूर्वक सूर्य की धूप नहीं पड़ती, वे निर्बल, रोगी और अयोग्य हो जाते हैं। इस प्रकार के बच्चों का प्रायः अस्वस्थ रहना बिलकुल स्वाभाविक होता है। शरीर को रों तथा रोगों से बचने एव उसे स्वस्थ और शक्ति

पूर्ण बनाने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि जिन पदार्थों में विटेमिन डी के तत्व पाए जाते हैं, उनको आहार मे विशेष रूप से प्रयोग मे लाया जाय और प्रतिदिन नियमित रूप से सम्पूर्ण शरीर को सूर्य की धूप मिलने की व्यवस्था की जाय।

सूर्य की धूप से हमारे शरीर मे जो विटेमिन डी के तत्व उत्पन्न होते हैं, वे न केवल हड्डियों को निर्बल होने से बचाते हैं, वरन् उनके द्वारा फेफड़ों, रगों और शरीर के रक्त मे स्फूर्ति उत्पन्न होती है। इसके द्वारा शक्ति की वृद्धि होती है और स्वास्थ्य प्राप्त होता है।

सूर्य की धूप का सेवन करने के लिए यह भी समझ लेने की आवश्यकता है कि कड़ी धूप अधिक समय तक हानिकारक होती है। इसलिए सूर्य की किरणों का स्नान नियमित रूप से और आवश्यकता के अनुसार ही होना चाहिए। इसके सबध मे सावधानी से काम न लेने पर मस्तक-पीड़ा अथवा अन्य पीड़ाओं के उत्पन्न होने का सहज ही संशय होता है। इसीलिए सिर को धूप से सुरक्षित रखकर अधिक कड़ी धूप से शरीर को भी बचाने की आवश्यकता होती है।

स्त्रियों और बच्चों के रोगी शरीर

सूर्य की किरणों के सबध में ऊपर जितनी विवेचना की गयी है, उससे हमे उनकी उपयोगिता और आवश्यकता का ज्ञान होता है। हमारे देश मे विशेष रूप से स्त्रियाँ सूर्य की इस विशेषता से वचित रहती हैं। इसका अभाव उन स्त्रियों के जीवन मे और भी अधिक होता है जो सम्पत्तिशालियों के घरो मे जन्म लेती हैं और विवाह के बाद जाती हैं। इस प्रकार के घरो मे लड़कियो और स्त्रियो के साथ विशेष रूप से परदा की व्यवस्था की जाती है और उस परदे का परिणाम यह होता है कि उनको न तो स्वच्छ और उपयोगी वायु मिलती है और न सूर्य की किरणें प्राप्त होती हैं।

लड़कियों और स्त्रियों के जीवन में स्वतंत्रता के इस अभाव ने अत्यन्त दयनीय अवस्था उत्पन्न कर दी है। यह परदा उनकी रक्षा के लिए है, परन्तु अत्यन्त दुख की बात यह है कि उनके जीवन की साधारण स्वतंत्रता भी इसके द्वारा नष्ट हो जाती है। फल यह होता है कि जो वायु और धूप हमारे जीवन के लिए अत्यन्त उपयोगी और आवश्यक है, उससे भी उन्हें निराश होना पड़ता है।

से न मिलने के कारण, शरीर के विकास में बाधा पड़ती है और उनको स्वास्थ्य और शक्ति नहीं मिल पाती।

यह अवस्था धनिक परिवारों के लड़कों और लड़कियों की होती है। यही कारण है कि इस प्रकार के बच्चे देखने में पीले दिखाई देते हैं। यह पीलापन शरीर में ठीक उसी प्रकार का क्षयकारी दोष है, जिस प्रकार बहुत दिनों से बन्द बर्तनों में रखा हुआ अनाज, धूप और वायु न मिलने के कारण विकृत हो जाता है। आश्चर्य की बात तो यह है कि उस रखे हुए अनाज अथवा दूसरे सामान को भी लोग कभी-कभी धूप और वायु दिखाने की आवश्यकता समझते हैं। परन्तु धनिक घरों की स्त्रियों और लड़कियों के जीवन में उसकी भी आवश्यकता नहीं मानी जाती!

निर्धन घरों और साधारण श्रेणी के परिवारों में यह अवस्था नहीं होती। उनके बच्चे और स्त्रियाँ इस आवश्यकता से वंचित नहीं रखी जातीं, यही कारण है कि साधारण घरों का स्वास्थ्य और आरोग्य, धनिक परिवारों की अपेक्षा सन्तोषजनक पाया जाता है।

शरीर का पीलापन रक्त-विकारों का परिचय देता है। रक्त का अभाव शरीर में प्रायः उसी अवस्था में होता है जब शरीर को विटेमिन डी की आवश्यकता अधिक होती है। इसी प्रकार छोटे बच्चों को सूखा रोग (Ricket) हो जाता है। इसका कारण भी शरीर में विटेमिन डी का अभाव है। इस प्रकार जितने भी विकार और रोग उत्पन्न होते हैं, वे सभी आवश्यक तत्वों के अभाव में ही होते हैं।

धूप-स्नान

सूर्य की किरणों का हमारे जीवन के साथ जो गम्भीर सम्बन्ध है, उसकी मीमांसा हो चुकने के बाद यह आवश्यक मालूम होता है कि उसके प्रयोगों पर कुछ प्रकाश डाला जाय। इसके सम्बन्ध में यह जान लेने की आवश्यकता है कि शरीर को स्वस्थ और नीरोग रखने के लिए जिन नवीन चिकित्साओं का आविष्कार हुआ है, उनमें धूप-स्नान भी एक है। धूप स्नान-चिकित्सा के द्वारा शरीर के सभी रोगों को निर्मूल किया जाता है। धूप स्नान का सम्बन्ध प्रकृति के साथ अधिक है और प्रकृति स्वयं रोगों का निवारण करती है। इसलिए

जिन रोगों में धूप का जादू के समान प्रभाव पड़ता है, वे इस प्रकार हैं:—

१—रक्त-विकार और उससे उत्पन्न होनेवाले रोग।

२—चर्म रोग।

३—छूतवाले रोग।

४—फोड़ा-फुंसी, घाव और नासूर आदि।

५—बच्चों का सूखा रोग।

६—छोटी अवस्था में बच्चों की शारीरिक निर्बलता, रगों और हड्डियों की कमजोरी।

७—गठिया, श्वास से सम्बन्ध रखनेवाले अनेक प्रकार के रोग। जिनके शरीर में चरबी की मात्रा अधिक हो गयी है, उनके लिए धूप स्नान लाभकर है।

बच्चों से लेकर बूढ़ो तक सभी के शरीर में धूप-स्नान का प्रभाव पड़ता है और उससे लाभ होता है। इस स्नान को चिकित्सा का रूप दिया गया है और उसके सम्बध में अनेक उपयोगी पुस्तकें लिखी गई हैं। जो लोग उसके सबंध में विस्तारपूर्वक जानना चाहते हैं, उन्हें उन पुस्तकों को मँगाकर पढ़ना चाहिए। धूप-स्नान लेने के सम्बन्ध में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि खुले अंगों पर, सिर और आँखों को छोड़कर, सूर्य की किरणें पड़ें। इसलिए पहले पीठ के बल लेट जाना चाहिए। जमीन यदि गर्म मालूम हो तो दरी बिछा लेनी चाहिए। उसके बाद पेट के बल लेटकर पीठ की ओर किरणों को पड़ने देना चाहिए। इसी प्रकार करवटें बदलकर, सारे शरीर को किरणों का लाभ उठाने देना चाहिए। इस बात का ध्यान रहे कि जितने अग पर सूर्य की किरणें न पड़ेंगी, उस स्थान की रगों का निर्बल होना स्वाभाविक है।

छोटे बच्चों और कुछ बड़ी अवस्था के लड़की-लड़कों को धूप में टहलना-दौड़ना और खेलना बहुत लाभकर होता है। शिक्षित पुरुषों में बदन को ढके रहने की एक प्रथा पड़ गई है। इससे उनके शरीर को सूर्य के द्वारा मिलनेवाली शक्तियों से वंचित होना पड़ता है।

सूर्य की किरणों में अनेक गुण हैं। उसकी शक्तियों से हमें जो पोषक और जीवन तत्व प्राप्त होते हैं, वे हमारे शरीर के लिए अमृत के समान उपयोगी हैं। सूर्य की रश्मियों से शरीर के स्नायु उत्तेजित होते हैं। उनकी शिथिलता दूर होती

भोजन से मिलनेवाले पोषक तत्व

आहार के सम्बन्ध में, पिछले पृष्ठों में अनेक प्रकार की बातें लिखी गयी हैं। उनके द्वारा भोजन की ओर केवल ध्यान आकृष्ट होता है। साथ ही कितनी ही बातों की जानकारी होती है। उसके बाद अब प्रश्न यह है कि मनुष्य जो भोजन करता है उससे उसे क्या मिलता है और उसके जीवन का भोज्य पदार्थों के साथ क्या सम्बन्ध है!

शिक्षा और सभ्यता के प्रकाश में हमारे जीवन की बहुत-सी बातों की खोज की गई है और जो खोज हुई है, उसके द्वारा मनुष्य अपनी आवश्यकताओं वास्तविक रूप को पहचानने लगा है। इस प्रकार मनुष्य अपनी आवश्यकताओं के निकट पहुँचा है। इसका फल यह हुआ है, कि वह पहले की अपेक्षा आज अपने आपको अधिक सुखी बनाने की सामर्थ रखता है।

शिक्षा और सभ्यता से अलग रहने पर भी मनुष्य को अपनी इन बातों का ज्ञान प्रकृति की ओर से मिलता है। उसके स्वभाव में उन सभी बातों का सम्मिश्रण है, जिनके द्वारा वह अपनी आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है। उसके लिए प्रकृति की यह देन है। उदाहरणार्थ यहाँ पर यह कहा जा सकता है कि मनुष्य के भोजन की पूर्त्ति किसी एक पदार्थ से नहीं होती। भोजन के सम्बन्ध में जो अनुसन्धान किये गये हैं, उनसे इस बात का स्पष्ट पता चलता है। जीवित रहने के लिए और शरीर को स्वस्थ तथा शक्तिशाली बनाये रखने के लिए मनुष्य को अनेक प्रकार के पोषक पदार्थों की आवश्यकता पड़ती है। उनकी पूर्त्ति भोजन की किसी एक वस्तु से नहीं होती। अनेक प्रकार की आवश्यकताएँ हैं और उनकी पूर्त्ति भी अनेक प्रकार के पदार्थों से होती है। इस बात का ज्ञान आज के अनुसंधान कराते हैं। इसके सबंध में यदि मनुष्य के स्वभाव की ओर देखा जाय और समझने की कोशिश की जाय तो भी इसी बात का पता चलता है। वह किसी एक ही पदार्थ को खाकर सन्तुष्ट नहीं होता। उसके स्वभाव में भिन्न-भिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों के सेवन की रुचि पाई जाती है। यह विभिन्नता स्वभावतः उसके जीवन में है और इसीलिए है उसकी आवश्यकताओं की पूर्त्ति किसी एक वस्तु से नहीं होती।

(२) इनआरगेनिक (Inorganic), निरामिष।

इन्हीं दो भागों में हमारे समस्त भोजन के पदार्थ विभाजित किये जा सकते हैं। मनुष्य जो भोजन करता है, वे या तो आरगेनिक होते हैं अथवा इनआरगेनिक। भोजन के इनआरगेनिक पदार्थों में सभी प्रकार के शाक, खनिज, पदार्थ अनाज, फल और उनसे उत्पन्न होनेवाली सभी वस्तुएँ मानी जाती हैं और आरगेनिक आहार में सभी प्रकार के मांसाहार, दूध और दूध से बनी हुई वस्तुएँ और अण्डे हैं।

इन दोनों प्रकार के भोजनों को प्राकृतिक और अप्राकृतिक भोजन के नाम से भी पुकारा जा सकता है। मांस, मछली और अण्डे अप्राकृतिक भोजन हैं। फिर भी मानव-समाज में उनका प्रचार और स्थान कम नहीं है। भोजन की वस्तुओं में उनकी भी गणना है और पहले भी रही है। यद्यपि उन्हें अप्राकृतिक रूप दिया जा रहा है।

होटलों में जो लोग भोजन करते हैं, उनको भी दो ही विभागों में बाँटा जाता है और वे दोनों विभाग वेजिटेरियन और नान-वेजिटेरियन कहलाते हैं। जो लोग मांस-मछली और अण्डे से परहेज करते हैं, वे वैजिटेरियन अथवा शाकाहारी कहलाते हैं, और जो लोग मांस-मछली और अण्डे का सेवन करते हैं, वे नान वैजिटेरियन अथवा मांसाहारी कहलाते हैं। इस प्रकार मनुष्य के भोजन के पदार्थ दो भागों में विभक्त होते हैं।

भोजन के पदार्थों से जो पोषक तत्व प्राप्त होते हैं, उनको प्रोटीन कहते हैं। प्रोटीन कई प्रकार की होती है। प्रोटीन देनेवाले पदार्थों में नाइट्रोजन, कारबन, हाइड्रोजन, आक्सीजन और सलफर नाम के पाँच तत्व पाये जाते हैं। विभिन्न प्रकार के पदार्थ भिन्न-भिन्न श्रेणी की प्रोटीन रखते हैं। इसीलिए प्रोटीन की अनेक श्रेणियाँ मानी जाती हैं। जो पदार्थ ऊँची श्रेणी की प्रोटीन रखते हैं वे प्रायः गरिष्ठ होते हैं। अण्डा, दूध, मांस, मछली और मुर्गी में उत्तम श्रेणी की प्रोटीन पाई जाती है। और गेहूँ, कड़े छिलके वाले मेवे, मटर, सेम और लोबिया में साधारण श्रेणी की प्रोटीन पाई जाती है।

आधुनिक शिक्षा का प्रचार जितना ही बढ़ता जाता है, मनुष्य के भोजन में प्रोटीन का उतना ही महत्वपूर्ण स्थान बनता जाता है। और उसके साथ-साथ

मीमासाओं के बाद विद्वानों ने मासाहार का विरोध भी किया था, उस विरोध का मूल कारण इतना ही था कि इस प्रकार का भोजन गरिष्ठ होने के कारण हानि-कारक सिद्ध होता था। इसीलिए उसका साधारण रूप में प्रचार रोकने के लिए धार्मिक निषेध किया गया था। यही कारण है कि आज भी समाज में जो लोग धार्मिक प्रवृत्ति रखते हैं, वे मासाहार से बहुत दूर रहने का न केवल प्रयत्न करते हैं, वरन् उसका नाम सुनकर नाक-भौ सिकोड़ने लगते हैं।

भोजन के जो पदार्थ उत्तम श्रेणी की प्रोटीन देते हैं, वे शरीर को अनेक अंशों में रुग्ण बनाते हैं। इस प्रकार के पदार्थ और उसके द्वारा मिलनेवाली प्रोटीन स्वास्थ्य के लिए साधारण रूप में काम नहीं करती। वह शक्तिवर्धक है किंतु रोग उत्पन्न करने का कारण भी है। जो लोग इस प्रकार का अधिक भोजन करते हैं और प्रायः करते रहते हैं, उनके शरीर और जीवन में स्फूर्ति का सर्वथा अभाव होता है। वे प्रायः आलस्य अनुभव करते हैं। उनके शरीर में वेदना बनी रहती है। उनके मानसिक भावों में उत्साह का अभाव होता जाता है। जहाँ पर वे बैठ जायँगे, वहाँ से उठने की उनकी तबीयत न होगी। इस प्रकार के लोग अधिक देर तक कहीं बैठ न सकेंगे। वे लेटना चाहेंगे। प्रायः उनको अँगड़ाइयाँ आती रहती हैं। इस प्रकार के लक्षणों से समझ लेना चाहिए कि उनके जीवन और शरीर का साधारण स्वास्थ्य खो रहा है, शरीर धीरे-धीरे निर्बल हो रहा है।

दूध में भी उच्च कोटि की प्रोटीन होती है। और इसीलिए अधिक मात्रा में दूध का प्रयोग शरीर में उन सभी दुर्गुणों को उत्पन्न करता है, जो मासाहार के द्वारा पैदा होते हैं। यह बात सभी प्रकार के दूधों के संबंध में नहीं कही जा सकती। गाय, बकरी और भैंस के दूध अपनी अलग-अलग प्रकृति रखते हैं सभी प्रकार के दूधों में प्रोटीन होती है। लेकिन उनकी श्रेणी में प्रतिकूलता है।

भैंस का दूध उत्तम श्रेणी की प्रोटीन देता है। किंतु वह साधारण अवस्था में गरिष्ठ होता है। कोई भी गरिष्ठ पदार्थ शरीर के साधारण स्वास्थ्य को बिगाड़ देता है। यह बात सत्य है कि भैंस का दूध जितना शक्तिवर्धक होता है, उतना दूसरे दूध नहीं। किंतु शरीर को रोगी बनाने का कार्य भी उसके द्वारा सहज ही होता है।

बच्चों तथा निर्बल स्त्री-पुरुषों के लिए भैंस का दूध सर्वथा त्याज्य है। बीमारी की अवस्था में इस दूध का अत्यधिक दूषित प्रभाव देखा गया है।

-ही मात्रा मे नहीं होती। किसी मे प्रोटीन अधिक होती है और किसी में बहुत कम। इस प्रकार हरे सागों और फलों मे जो प्रोटीन पाई जाती हैं, वह अत्यन्त विशुद्ध और स्वास्थ्यकर होती है। इसके द्वारा शरीर को कभी कोई हानि नहीं होती।

प्रोटीन के कार्य

भोजन-सम्बन्धी बातों में जितनी ही खोज हो रही है, हमारे भोजन में प्रोटीन का महत्व उतना ही बढ़ता जाता है। प्रायः लोग उन भोज्य पदार्थों को ढूँढ़ने का काम करने लगे हैं, जिनमें प्रोटीन होता है। प्रोटीन हमारे शरीर में केवल शक्ति ही नहीं बढ़ाता बल्कि जो अंग और अवयव निरन्तर कार्य रहते हैं, उन्हें शक्ति देना और उन अंगों की शिथिलता को दूर करना, क्षय को पूरा करना और नष्ट होनेवाले अगों का निर्माण करना, पोटीन का प्रमुख कार्य है।

पोषक पदार्थों में नाइट्रोजेन का प्रमुख स्थान है। इसके द्वारा रगों और पुट्ठों को शक्ति और सहायता मिलती है। भोजन में नाइट्रोजन देनेवाले पदार्थों का अभाव होने से शरीर के पुट्ठे कमजोर हो जाते हैं। और रगें निर्बल पड़ जाती हैं शरीर के स्वास्थ्य के लिए इनका निर्बल होना अच्छा नहीं होता। इस अवस्था में उन पदार्थों का सेवन करना आवश्यक होता है जिनसे नाइट्रोजेन प्राप्त होता है। ऐसा करने से रगों और पुट्ठों की बढ़ती हुई निर्बलता दूर होती है।

कार्बो हाइड्रेटेस रखनेवाले पदार्थों में हाइड्रोजेन और आक्सीजन के साथ-साथ कारबन (कोयला) का मिश्रण होता है। इनमें कारबन की मात्रा कुछ अधिक होती है। हाइड्रोजेन और आक्सीजन मिलकर जल का निर्माण करते हैं। तीनों के द्वारा कारबोहाइड्रेट्स बनता है और उससे सभी प्रकार के स्टार्च (माड़) तथा सुगर (शक्कर) मिलती है। प्रकृति में अंगूर शक्कर (Grape Sugar or Glucose) की अधिकता है और यह अधिकतर फलों, खाद्य-पदार्थों और वनस्पतियों में पाई जाती है। सुगर के साथ, स्टार्च का निकटवर्ती संबंध है। इसीलिए स्टार्च भी फलों, अनाजों और वनस्पतियों में पाया जाता है। भोजन में शक्कर (Sugar) की अधिकता सदा हानिकारक है, इसलिए इसका ध्यान रखने की आवश्यकता है।

भोजन के अनेक पदार्थों में चर्बी (Fat) पाई जाती है, इससे सभी लोग साधारणतया परिचित हैं। मक्खन, घी, पशुओं की चर्बी के अतिरिक्त वनस्पति

से तैयार किये जानेवाले सभी प्रकार के तेल चर्बी का काम करते हैं। कुछ फलों से भी तेल तैयार किये जाते हैं, जैसे मूँगफली का तेल, नारियल का तेल लाही, सरसों का तेल, बादाम का तेल, जैतून का तेल आदि चर्बी की पूर्ति करते हैं। और यह चर्बी भोजन में सम्मिलित होकर शरीर में अनेक प्रकार के रसों का निर्माण करती है। इसके साथ-साथ शरीर में चर्बी एकत्र और सचित रह-कर, भविष्य में आवश्यकता के समय काम आती है।

भोजन की सामग्री प्रोटीन, कारबोहाइड्रेट्स और फैट (चर्बी) के द्वारा ही परिपूर्ण नहीं होती। उसमें नमक और कुछ अन्य खनिज वस्तुओं का होना आवश्यक है। उसी अवस्था में भोजन अपना पूरा काम करता है। खनिज पदार्थों में आयरन, (लोहा) सलफर (गन्धक), मैगनेशियम का (एक प्रकार की धातु) कैलशियम (चूना), फासफोरस और पोटेशियम पाया जाता है। आयरन, लाल कोष (Red cells) बनाने का काम करता है। कैल-शियम हड्डियों और दाँतों को सुदृढ़ और नीरोग बनाने का काम करता है। फासफोरस से मस्तिष्क को स्फूर्ति प्राप्त होती है। नमक भोजन को पचाने और मल को त्याग करने तथा शरीर से बाहर निकालने में सहायता करता है। शरीर की रक्षा और निर्माण के लिए जिन खनिज पदार्थों की आवश्यकता होती है वे सब हरे सागों और अनाजों के छिलकों से पाए जाते हैं।

शरीर को पोषक तत्व देनेवाले अनेक पदार्थ मिलकर मनुष्य के भोजन की पूर्ति करते हैं। इन पदार्थों में एक पदार्थ का भी अभाव, शारीरिक क्षति और क्षय का कारण होता है। भोजन में उनका सम्मिश्रण ऐसे ढंग से होना चाहिये कि किसी की अधिकता और किसी का अभाव न रहे। अभाव और अधिकता दोनों ही हानिकारक होती हैं। हमारे शरीर की रचना में प्रकृति का यह नियम है और इसीलिए, उस नियम के अनुसार, सभी पोषक तत्वों और पदार्थों के मिलने पर स्वास्थ्य का सगठन होता है।

प्रोटीन, का उपयोग और कार्य

सम्पूर्ण जीवन में मनुष्य ने अपनी आवश्यकताओं की खोज की है और उसी के अनुसार भोजन-सम्बन्धी उपयोगी बातों का सदा पता लगाया गया है। हमारी समस्त जानकारी उसी का आधार है। इतना होने पर भी हमारे

भोजन के सम्बन्ध में जो आधुनिक वैज्ञानिक अनुसन्धान हुए हैं, उनसे समाज को बहुत लाभ हुआ है।

नवीन अनुसन्धान के अनुसार भोजन के पदार्थों में हमें जो तत्व प्राप्त होते हैं और जिनसे हमारे शरीर का पालन-पोषण तथा विकास होता है, उनमें दो प्रमुख हैं: प्रोटीन और विटेमिन। इन्हीं दोनों को प्राप्त करने के लिए हमें भोजन करना पड़ता है और भोजन हमारे जीवन का आश्रय है। इन दोनों तत्वों के सम्बन्ध में आवश्यक ज्ञान प्राप्त करना, प्रत्येक मनुष्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है। ज्ञान और आवश्यक जानकारी न होने के कारण स्वास्थ्य और जीवन का सुख उठाना, हमारे लिए सम्भव नहीं है। इसलिए यदि हम चाहते हैं कि जीवन का सुख हमें प्राप्त हो, तो भोजन के पदार्थों का ज्ञान होना हमारे लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक है। यहाँ पर प्रोटीन के सम्बन्ध में पूर्ण विवरण और आवश्यक बातों का परिचय देने की चेष्टा की जायगी। उसके बाद, विटेमिन्स पर आगामी प्रकरण में लिखा जायगा।

भोजन की वस्तुओं में जो अंश हमारे शरीर के काम आता है, उसे अंग्रेजी में प्रोटीन कहते हैं, हिन्दी में इन शब्दों की रचना अभी तक प्रारम्भिक अवस्था में है। इसीलिए भिन्न-भिन्न लेखकों ने विभिन्न नामों से प्रोटीन को हिंदी में व्यक्त किया है। हमारे शरीर में प्रोटीन के जो कार्य होते हैं, उनको सामने रखकर उन्हें पोषक तत्व कहा जा सकता है और अनेक हिन्दी लेखकों ने प्रोटीन का यह अर्थ लगाया है।

प्रोटीन का परिचय

सभी प्रकार की खाद्य वस्तुओं में प्रोटीन एक-सी नहीं होती। उसकी उपयोगिता एक दूसरे के साथ विभिन्नता [illegible] उनकी कई श्रेणियाँ हैं। सभी प्रकार की प्रोटीन में पाँच [illegible]

१—कारबन (कोयला)
२—हाइड्रोजन (जलांश)
३—नाइट्रोजन
४—आक्सीजन
५—सलफर (गन्धक)

हमारा शरीर विभिन्न प्रकार के कोषों (Cells) से बना है। ये कोष इतनी अधिक संख्या में होते हैं, जिनकी संख्या बताई नहीं जा सकती। भिन्न-भिन्न प्रकार के कोष जिन तत्वों से बनते हैं, उनमें नाइट्रोजन विशेष रूप से होता है। ये कोष बराबर नष्ट होते रहते हैं और उनके स्थान पर नवीन कोष बनते रहते हैं। इनका अभाव शरीर में दुर्बलता और निश्चेष्टता उत्पन्न करता है।

भोजन की विभिन्न वस्तुओं में प्रोटीन मिलती है और वह कई प्रकार की होती है। सभी प्रकार की प्रोटीन दो भागों में विभाजित की जाती हैः—

१—पशु पक्षियों से मिलनेवाली प्रोटीन

२—निरामिष भोज्य पदार्थों से मिलनेवाली प्रोटीन

मांसाहारी मनुष्यों की संख्या बहुत है। मांसाहार में पशुओं और पक्षियों का मांस प्रयोग में लाया जाता है। इस प्रकार के भोजन से जो प्रोटीन मिलती है, उसे आमिष जातीय प्रोटीन कहते हैं। दूसरे प्रकार की प्रोटीन वृक्षों और पौधों से प्राप्त होती है। इस प्रकार की प्रोटीन को वनस्पतिजन्य प्रोटीन भी कहते हैं। वृक्ष और पौधे, वायु से नाइट्रोजन लेकर अपने फलों पत्तियों तथा दूसरे अवयवों में एकत्र करते रहते हैं। वह एकत्रित और संचित नाइट्रोजन की सामग्री हमें उस समय प्राप्त होती है, जब मनुष्य उन्हें भोजन के रूप में ग्रहण करता है।

मनुष्य के शरीर में प्रोटीन के दो प्रमुख कार्य होते हैं:

१—शरीर के विकास और रचना कार्य

२—शारीरिक अंगों की क्षति-पूर्ति और पुष्टि

शरीर के निर्माण का काम करनेवाली प्रोटीन, खाने की जिन वस्तुओं से प्राप्त होती है, उनको मैंने उपयोगी और कम उपयोगी प्रोटीन देनेवाले खाद्य-वस्तुओं में उपस्थित किया है। इसलिए यहाँ पर यह आवश्यक जान पड़ता है कि प्रोटीन देनेवाली खाने की वस्तुओं का विभाजन कर दिया जाय।

प्रायः सभी खाद्य-पदार्थों में प्रोटीन होता है। किन्तु उपयोगिता के अनुसार खाद्य-पदार्थों को निम्नलिखित चार भागों में बाँटा जाता है।

(१) उपयोगी प्रोटीन देनेवाले खाद्य-पदार्थ—दूध, दही, मट्ठा, पनीर, अण्डे, [illegible], मछली और हरे शाक आदि, चोकर सहित गेहूँ के आटे में [illegible] है, [illegible] उसका अधिक भाग कम

उपयोगी होता है।

(२) कम उपयोगी प्रोटीन देनेवाली खाद्य-वस्तुएँ—गेहूँ का आटा, जौ, चावल, मटर, मसूर, फलियाँ, सेम, लोबिया, दाल, चना, कड़ी छाल के गिरीदार मेवे जैसे बादाम, अखरोट, पिस्ता, काजू, मूँगफली और लाल आलू आदि। इसके सिवा आलू, गाजर, शलजम, चुकन्दर, साबूदाना और सभी प्रकार के फल और तरकारियाँ।

(३) अनुपयोगी प्रोटीन देनेवाली खाद्य वस्तुएँ—मशीन से निकाले हुए चिकने चावल, मैदा, मकई, जुआर आदि।

(४) प्रोटीन रहित खाद्य पदार्थ—शकर, चर्बी, सरसों का तेल, नारियल का तेल, अलसी का तेल आदि।

अब एक बार प्रोटीन देनेवाले भोजन के पदार्थों पर फिर दृष्टिपात करने की आवश्यकता है। सभी प्रकार की पोटीनें हमारे शरीर में दो काम करती हैं। शरीर की रचना और मरम्मत तथा अङ्गों को पुष्ट बनाना। शरीर का रचना-कार्य शैशव अवस्था से लेकर युवावस्था तक होता है। इस अवस्था तक प्रोटीन शरीर में भिन्न-भिन्न अंगों का निर्माण करती है, मास-पेशियों, रगों, पुट्ठों तथा दूसरे अंगों को विकास देती है। युवावस्था के पश्चात् शरीर में प्रोटीन का यह कार्य बंद हो जाता है और शरीर के अन्तर्गत किसी प्रकार की क्षति की पूर्ति करना तथा सभी अगों को शक्ति देकर पुष्ट बनाना प्रोटीन का कार्य होता है।

साइकिल, मोटर साइकिल और मोटरकार को मरम्मत के लिए मरम्मत करने वाली दूकानों या कारखानों में भेजा जाता है और वहाँ पर उनकी मरम्मत होती है। लेकिन हमारे शरीर की मरम्मत प्रकृति के नियमानुसार, अपने आप होती है। हमारे शरीर में यह कार्य प्रोटीन के द्वारा होता है और प्रोटीन हमें अपने भोजन के पदार्थों से मिलती है। जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, जब मनुष्य विश्राम करता है अथवा रात में सोता है, उस समय प्रोटीन अपना काम करती है, कार्य करने से, चलने फिरने से, परिश्रम करने से शरीर के अन्तर्गत कोषों का क्षय होता रहता है, प्रोटीन उनकी पूर्ति करती है। और नवीन कोष बनने के बाद शरीर में फिर उत्साह उत्पन्न होता है शक्ति आ जाती है और जीवन के सभी कार्यों में प्रवेश करने के लिए मनुष्य पुनः उद्यत हो जाता है।

किस प्रकार की प्रोटीन हमारे लिए आवश्यक है ?

ऊपर यह लिखा जा चुका है कि भोजन के किस पदार्थ से, किस प्रकार की प्रोटीन मिलती है और यह भी स्पष्ट हो चुका है कि हमारा भोजन दो प्रकार का होता है। एक आमिष जातीय और दूसरा निरामिष जातीय। आमिष जातीय मांसाहार है और निरामिष जातीय अनाज, फल, फूल, तरकारियाँ शाक आदि हैं।

मांसाहार से जो प्रोटीन मिलती है, वह निरामिष जातीय प्रोटीन से अधिक भिन्न होती है, यह प्रोटीन हमारे शरीर के तत्वों से अधिक अंश में मिलती-जुलती है इसलिए उसकी उपयोगिता प्रोटीन के कार्य के अनुसार, अधिक हो जाती है। साथ ही यह भी स्मरण रखने की बात है कि मांसाहार से मिलनेवाली प्रोटीन सहज ही हानिकारक और उसके बाद वह घातक भी सिद्ध होती है। इसी-लिए सात्विक प्रवृत्ति के लोगों ने, उसका बहिष्कार कर रखा है। सभी प्रकार की प्रोटीन एमीनो एसिड (Amino acids) के लगभग अठारह टुकड़ों से बनती है। ये सभी एक दूसरे से भिन्न होते हैं। किन्तु मिलकर प्रोटीन की रचना करते हैं ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार अनेक प्रकार के अक्षरों से शब्द और अनेक प्रकार के शब्दों से वाक्य बनते हैं।

भोजन के पेट में पहुँचते ही, उससे मिलनेवाली प्रोटीन, अनेक विभिन्न टुकड़ों में बँटकर आँतों में पहुँच जाती है। ये टुकड़े अन्यान्य विभागों में विभाजित होते हैं और शरीर की आवश्यकता के अनुसार अपना कार्य आरम्भ करते हैं। कुछ प्रोटीन ऐसी होती है जो अधिक सुगमता के साथ अपना कार्य करती है और कुछ इसके विरुद्ध होती है। इसी प्रकार के गुणों के कारण, वह उपयोगी तथा कम उपयोगी प्रोटीन की श्रेणियों में विभाजित की गयी है। वृक्षों और पौधों से जो प्रोटीन मिलती है वह हमारे शरीर से बहुत कुछ विभिन्नता रखती है। इसीलिए उसमें से कुछ कम उपयोगी के नाम से निर्धारित की जाती है और कुछ बिल्कुल अनुपयोगी पाई गई है।

शरीर की आवश्यकता के अनुसार यह अत्यन्त आवश्यक है कि हमारा भोजन अधिक प्रोटीन रखता हो और उनमें उपयोगी प्रोटीन का सामञ्जस्य हो। इसलिए कि उपयोगी प्रोटीन की भी अच्छी मात्रा होने से, शरीर के अन्तर्गत कम उपयोगी एवम् अनुपयोगी प्रोटीन को भी प्रोत्साहन मिलता है। श्रेणी-विभा-

जन में प्रोटीन की श्रेणियों से भी किसी को भ्रम न होना चाहिए। शरीर में जहाँ उपयोगी प्रोटीन की आवश्यकता है, वहाँ कम उपयोगी अथवा अनुपयोगी प्रोटीन का महत्व होता है। यह बात अवश्य है कि उनके, प्रयोग से शरीर को लाभ उठाने के लिए यह आवश्यक होता है कि हमें उपयोगी प्रोटीन मिले और अच्छी मात्रा में मिले। सभी प्रकार की प्रोटीन का सम्मिश्रण और सामञ्जस्य ही हमारे शरीर के लिए उपयोगी सिद्ध होता है।

इसलिए यह आवश्यक नहीं है कि उत्तम श्रेणी की प्रोटीन अर्थात् उपयोगी प्रोटीन को ही अपना आधार बनाया जाय। यह कभी न भूलना चाहिए कि हमारे शरीर को सभी प्रकार की प्रोटीन की आवश्यकता है। अतएव यह बहुत आवश्यक है कि सभी प्रकार की प्रोटीनों का योग हमें प्राप्त हो। यदि साधारण श्रेणी की प्रोटीन अथवा अनुपयोगी प्रोटीन की आवश्यकता की पूर्ति, उपयोगी प्रोटीन के द्वारा की जायगी तो उसे प्राप्त करने के लिए अधिक व्यय करना पड़ेगा और उसके बाद भी शरीर की आवश्यकता की पूर्ति उस रूप में न हो सकेगी जिस रूप में हलकी प्रोटीन या अनुपयोगी प्रोटीन के द्वारा हो सकती थी। ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार प्यास में जल की उपयोगिता है, उसकी पूर्ति दूध के द्वारा करने से एक अनावश्यक अपव्यय अपने ऊपर लेना पड़ेगा, फिर जल का जो काम होता है, उसे दूध न कर सकेगा।

उपयोगी प्रोटीन का अभाव

कम उपयोगी प्रोटीन और अनुपयोगी प्रोटीन से उपयोगी प्रोटीन की कमी की पूर्ति नहीं होती। ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार उपयोगी प्रोटीन से दूसरी प्रकार की प्रोटीन मिलकर शरीर की आवश्यकताओं को पूरा करती है। इसलिए उपयोगी प्रोटीन का अभाव शरीर के लिए हानिकारक तथा घातक सिद्ध होता है।

भोजन के जिन पदार्थों में उपयोगी प्रोटीन मिलता है, उनको प्राप्त करने में अधिक व्यय करना पड़ता है। दूध, दूध से बनी हुई वस्तुएँ, फल, शाक, मास और अण्डे आदि सभी पदार्थ महँगे होते हैं। यही कारण है कि सभी श्रेणी के लोग उनको प्राप्त करने में असमर्थ होते हैं। इसके लिए अधिक धन की आवश्यकता पड़ती है। भोजन करना नित्य का कार्य है और दिन में कई बार भोजन करना पड़ता है। इसलिए महँगी वस्तुओं को खरीद कर भोजन में प्रयोग करना,

उन्हीं का काम होता है, जिनके पास रुपये-पैसे का अभाव नहीं होता।

उत्तम श्रेणी की प्रोटीन अर्थात् उपयोगी प्रोटीन उत्तम भोजनों से ही मिलती है। उसके लिए प्रतिदिन व्यय करना पड़ता है। जो नहीं व्यय कर सकते और जिनके पास रुपये-पैसे का अभाव होता है, वे अपनी असमर्थता के कारण, इच्छा और आवश्यकता के अनुसार, भोजन नहीं करते। वरन् समय और सयोग के अनुसार, जिस प्रकार का भोजन उन्हें मिलता है, उसी पर उनको सतोष करना पड़ता है।

यह अवस्था जिन लोगों की होती है, समाज में प्रायः उन्हीं की सख्या अधिक होती है। उनको उपयोगी भोजन नहीं मिलता। उपयोगी भोजन न मिलने के कारण, उपयोगी प्रोटीन से उन्हें वचित रहना पड़ता है। जीवन की यह दुरवस्था हानिकारक होती है।

उपयोगी प्रोटीन न मिलने का एक और भी कारण होता है। उन लोगों की सख्या बहुत कम होती है, जो लोग भोजन का महत्व जानते हैं और इस बात का ज्ञान रखते हैं कि हमें किस प्रकार का भोजन मिलना चाहिए। इसको न समझने के कारण, अधिकाश स्त्री पुरुषों को उत्तम श्रेणी की प्रोटीन से वञ्चित रहना पड़ता है।

ऐसे स्त्री-पुरुषों की संख्या कम नहीं है जिनका काफी धन अनावश्यक कार्यों में व्यय होता है ऐसे लोगों को कभी किसी ने अपने भोजन में व्यय करते हुए न देखा होगा। उनके पास रुपये पैसे का अभाव नहीं होता। अभाव होता है ज्ञान का—जानकारी का। ऐसी बात नहीं है कि वे शरीर का सुख न चाहते हों। सभी के हृदय में स्वास्थ्य और शक्ति प्राप्त करने की अभिलाषा होती है। सभी शारीरिक क्षति और अभाव से वे पीड़ित रहते हैं। परन्तु वे इस बात का ज्ञान नहीं रखते कि उन्हें किस प्रकार का भोजन करना चाहिए।

यह बात कभी न भूलनी चाहिए कि प्रोटीन अनेक प्रकार की होती है और अनेक प्रकार की प्रोटीनें, हमारे शरीर में अनेक प्रकार के काम करती हैं। न तो हमारी आवश्यकताएँ एक हैं, और न सभी प्रकार की प्रोटीनें एक सी होती हैं। विभिन्न प्रकार की प्रोटीनों से हमारे शरीर की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। यह प्रकृति का नियम है। इसीलिए प्रकृति ने हमारे स्वभाव को

ऐसा बनाया है, जिससे हमारा किसी एक ही वस्तु को सदा खाकर रह सकना और जीना कठिन है।

मकान की इमारत को बनाने के लिए अनेक प्रकार की सामग्री की आवश्यकता होती है। उसका बनना किसी एक ही वस्तु से सम्भव नहीं होता। इसी प्रकार शरीर की आवश्यकता है। प्रोटीन हमारे शरीर में वही काम करती है, जो काम इमारत बनाने की सामग्री, इमारत बनाने में करती है। इमारत का सुदृढ सुन्दर और स्थायी बनना उसकी सामग्री पर निर्भर है। यदि ईंट, सीमेंट तथा उसकी अन्य सामग्री उत्तम श्रेणी की नहीं है तो इमारत न तो सुन्दर बन सकेगी और न सुदृढ तथा स्थायी।

ठीक इसी प्रकार हमारे शरीर की अवस्था है। उत्तम श्रेणी की प्रोटीन न मिलने के कारण शरीर की शक्तियाँ क्षीण होती हैं। उसके अंग-प्रत्यंग निर्बल होते जाते हैं। स्वास्थ्य का अभाव होता जाता है। यह सब इसलिए कि जिस प्रकार की प्रोटीन मिलनी चाहिए, उसका सर्वथा अभाव है।

उपयोगी प्रोटीन की अधिकता

इसमें संदेह नहीं कि उत्तम श्रेणी की प्रोटीन से ही शरीर को स्वास्थ्य मिलता है, शक्ति की वृद्धि होती है और जीवन का सुख प्राप्त होता है। परन्तु यह भी स्मरण रखने की बात है कि अधिक मात्रा में प्राप्त होनेवाली प्रोटीन अत्यन्त घातक सिद्ध होती है। जिन स्त्री-पुरुषों को उत्तम श्रेणी की प्रोटीन अधिक प्राप्त होती है और जिनके भोजन नियमित रूप से उपयोगी प्रोटीन अधिक मात्रा में पहुँचाते हैं, उनकी शारीरिक अवस्था अत्यन्त करुणापूर्ण होती है। इसलिए यह अवस्था चिन्तनीय है।

जीवन के जो तत्व हमारे लिए इतने आवश्यक हैं कि जिनके अभाव में हमें स्वास्थ्य और शक्ति से हाथ धोना पड़ता है, वे हानिकारक और घातक कैसे हो जाते हैं, यह बात सर्वथा समझने योग्य है। इसको स्पष्ट करने के पहले मैं एक बात बताना चाहती हूँ कि जिनको उत्तम श्रेणी की प्रोटीन अधिक मात्रा में मिलती है। उनकी आयु दिन-पर-दिन क्षीण होती रहती है। पहलवानों और सम्पत्तिशालियों की आयु प्रायः अधिक नहीं होती। इसका कारण यही है कि लगातार बहुत दिनों तक उनको जिस प्रकार का भोजन मिलता है, उससे उनको उत्तम

प्रोटीन निरन्तर प्राप्त होती है और वह उनके शरीर में एकत्र होती रहती है।

अधिक मात्रा में प्रोटीन का मिलना आवश्यक नहीं है। शरीर को उतनी ही प्रोटीन मिलनी चाहिए जितनी शरीर में खपकर पचती रहे। खपत कम होने के कारण जब उसकी आय अधिक होती है तो वह एकत्र होकर आँतों में सड़ने लगती है और उसके सड़ने से विष उत्पन्न होता है। इस विष का रक्त के साथ सम्पर्क होने से रोग उत्पन्न होते हैं और उसका दुष्परिणाम किसी भी समय अस्वाभाविक मृत्यु के रूप में देखने में आता है।

इस अवस्था में प्रोटीन का महत्व स्पष्ट रूप से समझना आवश्यक है। उसका अभाव हमारे जीवन का अभाव है और उसकी अधिकता हमारे जीवन के क्षय का कारण है। इसलिए उसका सदुपयोग होना चाहिए, दुरुपयोग नहीं।

यहाँ पर एक बात और भी स्पष्ट कर देने की है। हानिकारक और घातक प्रोटीन अधिकतर रूप से वही होती है जो आमिष जातीय भोजनों से प्राप्त होती है। दालों, तरकारियों और हरे शाकों से जो प्रोटीन मिलती है, वह अधिक होने पर भी न तो हानिकारक होती है और न विशेष रूप से घातक।

स्वस्थ और सुगठित शरीर

माता-पिता की शारीरिक परिस्थितियों का प्रभाव सन्तान के शरीर पर पड़ता है, यह ठीक है। किन्तु सन्तान का स्वास्थ्य और शारीरिक गठन केवल इतने पर ही निर्भर नहीं है। जन्म के साथ शरीर की जो परिस्थितियाँ होती हैं। वे प्रायः बदल जाती हैं। जिन स्त्री-पुरुषों का शरीर निर्बल दूषित होता है, उनकी संतान कभी-कभी स्वास्थ्य और शारीरिक गठन में सुडौल देखी जाती है। इसी प्रकार जिन स्त्री-पुरुषों का स्वास्थ्य और शारीरिक विकास अच्छा होता है, उनकी संतान स्वस्थ रूपों में, कभी-कभी अद्भुत पाई जाती है। इसका कारण क्या है!

भोजन के पदार्थों का वैज्ञानिक विश्लेषण स्पष्ट रूप से बताता है कि जन्म के समय माता-पिता की शारीरिक परिस्थितियाँ सन्तान के शरीर में काम करती हैं। किन्तु उसके बाद उसके शरीर का विकास, आरोग्य जीवन और शरीर का निर्माण, उसके भोजन पर निर्भर होता है। यदि भोजन का क्रम आवश्यकता के अनुसार ठीक न रहा तो शरीर के स्वास्थ्य और विकास में बाधाओं का उत्पन्न हो जाना स्वाभाविक है।

शरीर और भोजन की इन परिस्थितियों का अध्ययन करने के बाद, स्वीकार करना पड़ता है कि हमारे शरीर को जो प्रोटीन मिले, वह न तो बहुत अधिक हो और न बहुत कम। उसकी अधिकता से शरीर में रोगों का क्रम आरम्भ होता है और कोई न कोई रोग उत्पन्न होता ही रहता है। इसके साथ साथ प्रोटीन का अभाव शरीर के विकास में बाधाएँ उत्पन्न करता है। दीन-दुर्बल स्त्री-पुरुषों की शारीरिक अवस्था को देखकर कोई भी हँस सकता है। किन्तु हँसने की बात नहीं है। उनकी शारीरिक दुरवस्थाओं का कारण उनके भोजन की दुरवस्था है।

प्रोटीन के सम्बन्ध में दो बातें स्मरण रखने योग्य हैं। पहली यह कि प्रोटीन की अधिकता शरीर को रोगी बनाती है और जीवन का क्षय करती है। दूसरी यह कि प्रोटीन की मात्रा कम होने से शारीरिक विकास अनेक त्रुटियों के साथ होता है, शरीर की गठन मारी जाती है, मासपेशियों की उन्नति में बाधा उत्पन्न होती है और शक्ति का अभाव रहता है। इन सभी बातों का प्रभाव यह पड़ता है, कि मनुष्य को स्वास्थ्य के लिए रोना पड़ता है, यौवन का सुख मिट जाता है और जवानी में ही बुढापा घेर लेता है। इस प्रकार की दुरवस्थाओं से बचने के लिए अत्यन्त आवश्यक है कि भोजन की आवश्यकता और उपयोगिता पर ध्यान दिया जाय और उसकी आवश्यक बातों से लाभ उठाया जाय।

खाद्य वस्तुओं की प्रोटीनों का विवरण

खाद्य पदार्थ	पोषक तत्व प्रतिशत	खाद्य पदार्थ	पोषक तत्व प्रतिशत
गेहूँ	१५	भुनी मूँग की दाल	२५
गेहूँ का आटा	१२	उरद	२६
मैदा	११	लोबिया	२१
जौ	१२	खेसारी (चवरी)	२८
गेहूँ की भूमी	९	दालें (सभी प्रकार की)	२१
मकाई	१०	आलू	[illegible]
जुआर	१४	रतालू	[illegible]
बाजरा	१०		
चावल	—		

खाद्य पदार्थ	पोषक तत्व प्रतिशत	खाद्य पदार्थ	पोषक तत्व प्रतिशत
चना	२१	सूरन	१
चने की दाल	२४	प्याज	१½
हरे मटर	४	लहसुन	[illegible]
सूखे मटर	२२	शलजम	१
अरहर	२८	कच्चा कटहल	८½
मसूर	२५	मटर की फली	६
मूँग हरी	२४	बैंगन	१
मूँग काली	२२	भिण्डी	२
कुम्हड़ा	१	गन्ना	१½
गोभी, बन्दगोभी	१ से २	नारियल की गिरी	६
लौकी	१	,, का पानी	१½
परवल	१	अनार	१
टिण्डा	२	अनन्नास	½
कच्चा केला	१½	रसभरी	१
टमाटर	१	आड़ू	½
मेथी	३	इमली	१½
कटहल के कोये	१३	सन्तरा	१
पका आम	१	नीबू	½
लँगड़ा आम	२	तरबूज	¼
सेव	½	खरबूजा	½
अगूर	½	अञ्जीर	४½
पका केला	२	अखरोट	१५½
लीची	१	बादाम	२४
नासपाती	½	पिस्ता	२२
पपीता	१	किशमिश	२½
सिंघाड़ा	१	मुनक्का	२

खाद्य पदार्थ	पोषक तत्व प्रतिशत	खाद्य पदार्थ	पोषक तत्व प्रतिशत
जामुन	१		
छुआरा	१½	मलाई	२½
सूखा नारियल	६	पनीर	३१
खजूर	२	छेना	२१½
मूँगफली	२६	बकरे का मास	२४
मूँगफली भुनी	२४	भेड़ का मांस	१६
खोबानी	५½	हिरन का मांस	१९½
आलू बुखारा	३	सुअर का मास	२०
स्त्री का दूध	३	मुर्गी का मास	२३
गाय का दूध	४	बतक का मास	२०½
भैंस का दूध	४½	कबूतर का मांस	२२
बकरी का दूध	३½	मुर्गी का अण्डा	१३½
भेड़ का दूध	७	बतक का अण्डा	१३
जमा दूध	९½	अण्डे की सफेदी	१३
दही	५	,, ,, जर्दी	१८
मट्ठा	३	मछली	१२ से १८
मक्खन निकाला दूध	३½	जिगर	२½
मक्खन	१½	गुरदे	१६
घी	१	भेजा	१०
शहद	४	चिउड़ा	६
बिस्कुट	१५	पेठा	१८
पाव रोटी	८	भात	५
हाथ की चक्की के पिसे आटे की रोटी	१०	पूरी	७½
लावा	७	कोको	१४
मुर्रा लाई	६	मिर्च	१५½

रखने और रोगों का आक्रमण रोकने के लिए ही वैज्ञानिकों के सामने एक प्रश्न उपस्थित हुआ था और उन्होंने इसी आधार पर इन तत्वों का अनुसधान किया है। समाज में इन बातों का ज्ञान अभी तक उन्हीं लोगों को किसी सीमा तक है जो अधिक शिक्षित हैं। साधारण श्रेणी के लोग प्रायः इसकी जानकारी से अपरिचित पाये जाते हैं। मैंने व्यक्तिगत रूप से समझा है कि शिक्षित लोग निरंतर रोगाक्रान्त होने पर इस तरह की बातों को जानने की चेष्टा करते हैं और इसके संबन्ध में जो कुछ पढ़ने को मिलता है, उसे पढ़कर वे लोग लाभ उठाने का प्रयत्न करते हैं।

विटामिन के प्रयोग

प्रोटीन और विटामिन देने वाले पदार्थ अलग-अलग नहीं होते। भोजन की वस्तुएँ वही होती हैं। उनके अलग-अलग गुण और स्वभाव होते हैं, खाने के पदार्थों के कुछ गुणों से विटामिन नामक तत्वों का लाभ होता है। साधारण रूप में दोनों की उपयोगिता एक-सी है, परंतु सूक्ष्म रूप में उनके कार्य अलग-अलग हैं।

विटामिन के तत्वों को अलग अलग बताने और स्पष्ट करने के पहले यह आवश्यक है कि उनसे सम्बन्ध रखनेवाली सभी तरह की आवश्यकताओं पर प्रकाश डाला जाय। प्रोटीन की तरह, विटामिन भी अनेक तरह की होती हैं, सभी के अलग-अलग कार्य होते हैं। उनको देनेवाले पदार्थ भी भिन्न-भिन्न होते हैं। उनको जान लेने से ही काम नहीं चलता। विटामिन के संबंध में एक अत्यन्त आवश्यक जानकारी यह होनी चाहिए कि जिन पदार्थों में ये तत्व होते हैं, वे सुरक्षित रुप में हमें कैसे मिलें।

विटामिन के सरक्षण का प्रश्न बहुत बड़ा है। साधारणतया लोग अपने भोजन में उन्हीं वस्तुओं को खाते हैं, जिनमें विटामिन होता है किन्तु उनका आवश्यक और यथोचित ज्ञान न होने के कारण उनके लाभ से वञ्चित होना पड़ता है। विटामिन नामक तत्व अत्यन्त सूक्ष्म और कोमल होते हैं। उनके नष्ट हो जाने में देर नहीं लगती। भोजन के पदार्थों के ये तत्व अपने आप नष्ट होते हैं और हमारी अज्ञानता के कारण भी उनका क्षय होता है। इसलिए सबसे पहले यह जान लेने की आवश्यकता है कि विटामिन के नष्ट होने के क्या क्या कारण होते हैं।

सकती है, उससे उसकी रक्षा न की जा सकेगी।

विटामिन का संरक्षण

खाने की सभी वस्तुओं में विटामिन होते हैं, यह बात अवश्य है कि किसी मे उनकी मात्रा कम होती है और किसी में अधिक। इन पदार्थों का विटामिन बहुत अशों में इसलिए नष्ट हो जाता है कि उनको अस्वाभाविक रूप से तैयार किया जाता है। दूध विटामिन के लिए बहुत प्रसिद्ध है किन्तु आग पर पकाने से उसके विटामिन नष्ट हो जायँगे। फलों और तरकारियों की यही अवस्था है। वास्तव में हमारे खाने के सभी पदार्थ सूर्य की धूप में पके होने चाहिए। यदि उसके बाद वे आग पर भी पकाए जायँगे तो दूसरी वस्तुओं का, तेज मसालों का, सम्मिश्रण होगा तो उनके प्राकृतिक गुण नष्ट हो जायँगे।

इसी आधार पर यह बात जान लेनी चाहिए कि ताजी तरकारियों और हरे शाक को आग पर पकाने से उनके उपयोगी तत्व जल जाते हैं। आग पर पकाने से दूध की भी यही दशा होती है। ताजे दूध की अपेक्षा रखे हुए दूध की स्वाभाविकता भी मिट जाती है और उसके वास्तविक तथा प्राकृतिक गुणों से हमें वञ्चित होना पड़ता है। इस प्रकार की सभी वस्तुओं को उनके असली रूप में खाने से ही लाभ होता है।

भोजन को आग पर पकाकर खाने की व्यवस्था वास्तव में व्यर्थ सिद्ध हो चुकी है। लेकिन समाज उसका अभ्यासी हो गया है। फल यह होता है कि हमें उनके मूल तत्वों की प्राप्ति नहीं होती, यही कारण है कि हमारे शरीर में अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते रहते हैं। मशीन के द्वारा तैयार किया हुआ चावल विटामिन के तत्वों को नष्ट कर देता है, इसलिए जहाँ, जिन देशों में अथवा जिस समाज मे इस प्रकार के चावल अधिक खाये जाते हैं, वहाँ बेरी-बेरी नामक रोग अधिक पैदा होता है।

छोटे बच्चों को माता का दूध ही मिलना आवश्यक होता है। माता के दूध के अभाव में गाय अथवा बकरी का दूध दिया जाना चाहिए। इसलिए कि गायों और बकरियों का जो आहार होता है उस आहार के जीवन-तत्व उनके दूध मे पाए जाते हैं और छोटे बच्चों को पुष्ट बनाते हैं। लेकिन आजकल डब्बों में जो दूध आने लगा है, कुछ बड़े परिवारों में बच्चों को वही दिया जाता है।

उस दूध में इन जीवन तत्वों का सर्वथा अभाव होता है। फलस्वरूप वे बच्चे बीमार पड़ते हैं। इसलिए कि उनको वह आहार नहीं मिलता, जिससे रोगों का निवारण होता है!

छोटे बच्चों को सूखा रोग हो जाने का यही कारण है। विटामिन के अभाव में यह रोग पैदा होता है। आवश्यक तत्वों के न मिलने के कारण बच्चों की हड्डियाँ पुष्ट नहीं होतीं। शरीर में शक्ति नहीं पैदा होती। पाचन-शक्ति क्षीण हो जाती है। शरीर दुर्बल पड़ जाता है। पेट बड़ा और मस्तक खाली हो जाता है। इस रोग से छोटे बच्चे बहुत अधिक मरते हैं। विटामिन डी का भोजन तत्व न मिलने से यह अवस्था पैदा होती है।

इसी प्रकार विटामिन ई से स्त्री और पुरुष में सन्तान उत्पन्न करने की शक्ति बढ़ती है। इसके अभाव में पुरुष नपुसक और स्त्री बाँझ हो जाती है। विटामिन ए के अभाव में आँखों का प्रकाश मारा जाता है, उनमें अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं और उसके तत्वों का निरन्तर अभाव होने से रतौंधी आने लगती है।

हमारे खाने के सभी पदार्थ आग पर भूनने, पकाने या तलने से नष्ट हो जाते हैं। शाकों और फलों को कच्ची अवस्था में ही खाने से पर्याप्त मात्रा में जीवन तत्व प्राप्त होते हैं। अनेक प्रकार के फल जैसे सेव, अंगूर, सन्तरा, अनार, अमरूद, नासपाती, जामुन, आम, केला, खीरा, खरबूजा, अनन्नास, तरबूज आदि असली रूप में ही खाने से लाभदायक होते हैं। इसी प्रकार मूली, टमाटर, कटहल, नीबू, बेल, पपीता, ककड़ी, सभी प्रकार की फलियाँ, पोदीना, चने, मटर के साग तथा अन्य वस्तुएँ प्राकृतिक रूप में ही खानी चाहिएँ।

विमामिन ए

शरीर को पुष्ट और सुदृढ़ बनाने में विटामिन ए काम करता है। यह शरीर के अंगों का पोषक है। यह बहुतेरे रोगों से शरीर की रक्षा करता है। इससे नेत्रों का प्रकाश बढ़ता है और इसके अभाव में आँखों के रोग पैदा होते हैं। यदि इसका अभाव अधिक दिनों तक रहता है तो रतौंधी आने लगती है। शरीर के विकास के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है। इसलिए जिन पदार्थों में विटामिन ए पाया जाता है, उनका मिलना बच्चों के लिए आवश्यक होता है।

इसके द्वारा उनके दाँतों के निकलने में सुविधा होती है और दाँत सुदृढ़ बनते हैं। शरीर के कोषों का निर्माण होता है। इसकी कमी होने से शारीरिक अंगों का विकास नहीं हो पाता। इसके अभाव में खाँसी, निमोनियाँ और क्षय जैसे रोगों का जन्म होता है। शोथ, तपेदिक, पेचिश, जलोदर तथा संग्रहणी इसी के अभाव का परिणाम है। बच्चेवाली स्त्रियों को विटामिन ए की अधिक आवश्यकता होती है।

पौधों की पत्तियों में यह विटामिन अधिकता से पाया जाता है और पत्तियों को सूर्य के प्रकाश से यह अधिक प्राप्त होता है। इस प्रकार की पत्तियों को खानेवाले पशुओं के अंगों में यह विटामिन पाया जाता है। गाय, बकरी और भैंस के दूध में इस विटामिन के मिलने का यही कारण है कि उनका भोजन अनेक प्रकार की हरी घास और पत्तियाँ हैं। इसीलिए उनका दूध बच्चों से लेकर, बूढ़ों तक—सभी के लिए उपयोगी होता है।

दूध देनेवाले जो पशु हरी पत्तियाँ और घास नहीं खाते, उनके दूध में विटामिन ए का अभाव होता है। हरे अनाजों में भी यह पाया है। चना, दाल तथा अन्य अनाजों को भिगा देने से उनमें यह विटामिन उत्पन्न हो जाता है। मछली का तेल इसके लिए विख्यात है। इसीलिए वह उपयोगी होता है।

जिन पदार्थों में विटामिन ए मिलता है, वे इस प्रकार हैं:—पालक, बथुआ, टमाटर, गोभी, बंदगोभी, करमकल्ला, आलू नीबू, आम, अमरूद, मटर, मूली, नारंगी, गाजर, सलाद, दूध, मक्खन, घी, दही, मट्ठा, मलाई, शलजम, अनन्नास, केला, सेब, पपीता आदि। चने और मसूर की दालों में यह विशेष रूप से पाया जाता है। गेहूँ में इसकी मात्रा अधिक होती है। मांस में भी कुछ अंशों में यह पाया जाता है। सरसों, तिल, नारियल और गुल्लू के तेल में यह विटामिन नहीं मिलता। मांस के सिवा अण्डों में भी यह विटामिन होता है। श्वेत और लाल वर्ण के कन्दमूलों में इसकी जो मात्रा पाई जाती है, उससे पीले कन्दमूलों में इसकी मात्रा अधिक होती है। जैसे आलू, शलजम, चुकन्दर और मूली की अपेक्षा पीली गाजर तथा शकरकन्द में इसकी मात्रा अधिक होती है।

शारीरिक अंगों के पोषक होने के साथ-साथ यह विटामिन आँखों, आँतों,

फेफड़ों और मूत्राशय तथा ज्ञान-तन्तुओं का सहायक होता है। इसके अभाव में ज़ुकाम पैदा होता है और नाक, कान, गले, फेफड़े, पेट और आँतों के विभिन्न रोग भी इसी के अभाव के परिणाम हैं। मैदा, चिकने चावल, बादाम का तेल, कोकोजम तथा वनस्पति घी में यह विटामिन एकदम नहीं होता।

विटामिन ए देनेवाले पदार्थ यदि तेज आग पर पकाये जाते हैं तो उनके जीवन तत्त्व नष्ट हो जाते हैं किन्तु एक सौ डिगरी तक की गरमी से यह तत्व नष्ट नहीं होता। इसलिए साधारण आँच में कुछ देर तक पकाने से विटामिन ए सुरक्षित बना रहता है। परन्तु उस अवस्था में जब कि उसको ढँककर पकाया जाय।

घी और मक्खन में भी यह विटामिन पाया जाता है। किन्तु तेज आग में पकाने से वह नष्ट हो जाता है। पके दूध की अपेक्षा कच्चा दूध और विशेषकर तुरन्त का दुहा दूध विटामिन ए के लिए अधिक उपयोगी होता है। यदि दूध को पकाना ही हो तो हलकी आँच में कुछ पानी मिलाकर पकाना चाहिए और एक बार उबाल आते ही उसे उतार लेना चाहिए। जो लोग दूध को तेज आँच पर पकाते हैं, वे स्वयं उसको शक्तिहीन बना देते हैं। जिन स्त्रियों को दूध नहीं होता, उन्हें विटामिन ए देनेवाले पदार्थों का सेवन करना चाहिए।

विटामिन बी

विटामिन बी से पाचन-शक्ति बढ़ती है। कोष्ठबद्धता का नाश होता है। भूख बढ़ती है। भोजन में रुचि उत्पन्न होती है। पेट के सभी प्रकार के विकारों को यह दूर करता है। ज्ञान-तन्तुओं के लिए यह उपयोगी होता है। इसके अभाव में बेरी बेरी रोग पैदा होता है। इस तरह के रोग में विटामिन बी देनेवाले भोजन खिलाने से निश्चित रूप से लाभ होता है।

शरीर को नीरोग बनाने में यह विशेष रूप से काम करता है। इसके द्वारा मांस-पेशियों, समस्त स्नायु और त्वचा को शक्ति मिलती है। जिन स्त्रियों के भोजन में विटामिन बी की कमी रहती है, उनके बच्चे निर्बल और रोगी होते हैं।

विटामिन बी देनेवाले पदार्थ ये हैं—गेहूँ, जौ, मटर, दाल, चना, मकाई, अरवा चावल, सोयाबीन, गोभी, गाजर, हरी तरकारियाँ और हरे शाक, टमाटर, प्याज, मूँगफली, अखरोट, पिस्ता, नारियल, पपीता, खजूर, नारङ्गी आदि।

इनके सिवा सेव, अंगूर, लीची, केला, अनार, ताजी अञ्जीर, मुनक्का, बादाम, किशमिश, पोस्ता और खमीर में भी विटामिन बी के कुछ अंश पाए जाते हैं। दूध, मोटा आटा, गोंद, छिलकेदार आलू और नरचा सहित बैंगन में भी यह विटामिन पाया जाता है। जो आटा मशीन में पीसा जाता है, उसमें विटामिन बी नहीं होता और न मशीन से तैयार होनेवाले चावलों में ही होता है। हाथ की चक्की के आटे और ओखली मूसल से कुटे हुए चावल में यह विटामिन मिलता है। मछली और चरबी में यह नहीं होता। मांस में कुछ अंश पाया जाता है। मूँग, मटर और चना को जल में भिगो देने से और उसमें अंकुर निकल आने पर विटामिन बी अच्छी मात्रा में पैदा हो जाता है। आग में पकाने से साधारण रूप में यह नष्ट नहीं होता। शाक और तरकारी को उबालने से उसके पानी के साथ यह विटामिन निकल जाता है। यही बात चावल के माड़ में भी होती है। शाक और तरकारी को उबालने के समय या तो पानी डाला ही न जाय और यदि आवश्यकता हो तो इतना कम डाला जाय कि उससे निकलनेवाला पानी फेंकना न पड़े।

पीले और मुरझाये हुए पत्तों की अपेक्षा ताजे और हरे पत्तों में विटामिन बी अधिक होता है। हमारे देश में अधिकांश लोगों को विटामिन बी से वञ्चित रहना पड़ता है। उसका कारण है:—

१—वे लोग चिकने चावल अपने भोजन में अधिक खाते हैं।

२—जिस आटे की रोटी बनाते हैं, उसका छिलका अथवा भूसी निकालकर अलग कर देते हैं।

३—गेहूँ के आटे के स्थान पर अधिकांश अवसरों पर मैदा काम में लाते हैं।

४—विटामिन बी देनेवाले अन्यान्य पदार्थों का उपयोग आवश्यक मात्रा में नहीं करते।

ऊपर लिखे हुए कारणों से हमारे देश के अधिकांश लोगों को विटामिन बी नहीं मिलता। इस अभाव का दुष्परिणाम उनके शरीर पर पड़ता है। शरीर की रचना और विकास के साथ-साथ सभी अंगों की मरम्मत करना विटामिन बी का मुख्य कार्य है। इस अवस्था में जिसके शरीर में इसका अभाव रहेगा, उसके शरीर की गति ठीक उसी प्रकार की हो जायगी, जिस प्रकार पुरजों के टूटने

और बिगड़ने पर किसी मशीन की कभी मरम्मत न की जाय। इस दशा में न तो वह मशीन अधिक दिन काम दे सकती है और न उन आदमियों के शरीर जिनमें आवश्यक तत्वों के अभाव में कभी सुधार और मरम्मत का कार्य नहीं होता।

जिनको मस्तिष्क से अधिक काम लेना पड़ता है, उनको विटामिन बी देनेवाले पदार्थों का सेवन अधिक मात्रा में करना चाहिए। इससे उनको बड़ी सहायता मिलेगी।

विटामिन सी

हमारे देश में स्कर्वी (Scurvy) नामक रोग की अधिक वृद्धि हो गई है। यह बीमारी एक तरह का रक्त-रोग है। विटामिन सी इस रोग की एक औषधि है। इसलिए कि इसी विटामिन के अभाव में यह रोग उत्पन्न होता है और इसके अभाव की पूर्ति होने पर यह रोग तिरोहित हो जाता है।

विटामिन सी का काम है पाचन क्रिया को उत्तेजित करना। यदि भोजन में इसकी कमी रहती है अथवा अधिक अभाव रहता है तो पाचनशक्ति क्षीण हो जाती है। पेट में विकार उत्पन्न हो जाते हैं और आँतों को रोग ग्रसित हो जाना पड़ता है। विटामिन सी के अभाव में ही हड्डियों के रोग और गठिया वात हो जाता है। दाँत कमजोर होने लगते हैं, उनमें पीड़ा होती है और प्रायः मसूढ़ों में सूजन बनी रहती है, उनसे रक्त आने लगता है और अनेक तरह के विकार पैदा होकर दाँतों के सुख को मिट्टी में मिला देते हैं। पायरिया जैसे दाँतों के भयंकर रोग इसी के परिणाम होते हैं। इसका अभाव पाचन-क्रिया को निर्बल बना देता है और उसके निर्बल होने से सम्पूर्ण शरीर में दुर्बलता दौड़ जाती है।

विटामिन सी के द्वारा रक्त की वृद्धि भी होती है और रक्त-शोधन का कार्य भी होता है। यही कारण है कि इसके अभाव में शरीर रक्त-विकार के कितने ही रोगों से पीड़ित होता है। इसकी कमी से जो रोग उत्पन्न होते हैं। उनकी एक औषधि है और वह यह कि इस अभाव की पूर्ति की जाय। विटामिन सी देनेवाले पदार्थों को आवश्यक मात्रा में सेवन करने से शरीर में जो विकार उत्पन्न होते हैं, वे सबके सब दूर होने लगते हैं।

शरीर में इस तरह के रोग और विकार आवश्यक भोजन के अभाव में उत्पन्न होते हैं। नीबू, कागजी नीबू, मोसम्मी, चकोतरा, बड़ा नीबू, संतरा,

अनन्नास, टमाटर, अगूर, नासपाती, केला, शलजम, पालक, सेव, बदगोभी, पपीता, ककड़ी, खीरा, प्याज, सलाद, भीगे चने और सभी प्रकार के फलों तथा तरकारियों में विटामिन सी अधिक मात्रा में पाया जाता है। नीबू में विशेष पाया जाता है। सूखी तरकारियों और दूध में इसकी मात्रा कम पाई जाती है। गेहूँ, जौ, चावल और मकाई में यह विटामिन नहीं होता। मूँग, चना, मटर में भी इसका अभाव होता है। लेकिन पानी में उनको भिगो देने से और अंकुर निकल आने पर, उनमें विटामिन सी पैदा हो जाता है। इमली, आलूबुखारा, आँवला आम और हरी धनिया में यह अधिक रहता है।

विटामिन सी में स्थिरता नहीं होती। अधिक देर तक संसर्ग में रहने से अथवा आग पर पकाने से यह सहज ही नष्ट हो जाता है। इसीलिए कच्चे फल तरकारियों और हरे अनाजों में ही विटामिन सी विशेष रूप से मिलता है।

विटामिन सी देनेवाले पदार्थों का उपयोग बहुत सावधानी के साथ करने की आवश्यकता है। इस तत्व के विनाश होने में कुछ भी देर नहीं लगती। साधारण क्षार के संयोग से भी वह नष्ट हो जाता है। पकाते समय कम से कम आँच की आवश्यकता होती है। खुले बरतन में पकाने से उसके नष्ट हो जाने में देर नहीं लगती। विटामिन सी भी जल में घुल जाता है। इसलिए साग या तरकारी उबालकर उसका पानी फेंक न देना चाहिए। ऐसा करने से उन वस्तुओं का विटामिन सी उनसे निकलकर पानी के साथ चला जायगा। जो गाएँ और बकरियाँ हरी घास और पत्तियाँ खाती हैं, उनके दूध में विटामिन सी अधिक पाया जाता है। पौधों और वृक्षों की पत्तियों पर सूर्य की जो किरणें पड़ती हैं, उन्हीं से विटामिन सी पैदा होता है। जो फल, फूल और शाक कच्चे खाये जा सकें, तो उनसे यह विटामिन अधिक मिल सकता है। पकाने से उनका विटामिन नष्ट हो जाता है। सूखे पदार्थों, बीजों और अनाजों में इसका अभाव रहता है। इस विटामिन की कमी से शरीर में दुर्बलता, रक्त की कमी और शिथिलता उत्पन्न होती है।

कुछ लोग हरे शाकों और तरकारियों को बनाते समय ऊपर से पानी मिलाते हैं। ऐसा करने से उनमें फीकापन पैदा होता है। उनका विटामिन निकलकर बाहरी पानी में मिश्रित हो जाता है और उस पानी के साथ-साथ उसका विटा-

भिन भी बच जाता है। इसी तरह की तरकारियों का छिलका निकालने की आवश्यकता नहीं होती। जो तरकारियाँ बिना छिलका निकाले हुए न तो बनाई जा सकती हैं और न खाई जा सकती हैं उन्हीं का छिलका निकालना चाहिए। इसलिए कि अनाजों और तरकारियों के छिलकों में विटामिन रहा करता है। आलुओं का छिलके सहित पकाने से उनके विटामिन की रक्षा होती है।

विटामिन डी

दूध, मक्खन, घी, हरी तरकारियों, गाजर, टमाटर, नारियल, पपीता, गेहूँ, मक्का, अण्डा और मछली के तेल में विटामिन डी पाया जाता है। नारियल के तेल और पेनट के तेल में भी यह मिलता है। काड-लिवर तेल में यह अधिक मात्रा में पाया जाता है। किसी तरह के वनस्पति घी में विटामिन डी नहीं होता।

इसके द्वारा शरीर की हड्डियों को दृढ़ता प्राप्त होती है, इसके अभाव से हड्डियाँ निर्बल हो जाती हैं। जिन बच्चों को विटामिन डी नहीं मिलता, उनमें शारीरिक निर्बलता बहुत होती है। जब वे चलते फिरते हैं, तो देखनेवालों को उनकी कमजोरी का ज्ञान होता है।

जिनके शरीर में विटामिन डी की कमी होती है, उनकी अवस्था अपने आप प्रकट होती है। उनके हाथों और पैरों में दुबलापन अधिक आ जाता है और पेट बाहर निकला होता है। दिन में अशान्ति रहती है और नींद बहुत कम आती है। यह हालत बच्चों में देखी जाती है। पूर्ण अवस्था के लोगों में भी इसका अभाव काम करता है। उनको मधुमेह तथा सन्धि-वात जैसे रोग प्रायः पीड़ित करते हैं। जिनके भोजनों में विटामिन डी की पूर्ति होती है, उनके शरीर में इस तरह की न तो निर्बलता उत्पन्न होती है और न उन्हें इन रोगों का ही शिकार बनना पड़ता है।

इस विटामिन के पैदा होने का साधन बहुत कुछ सूर्य की किरणों पर निर्भर होता है। सूर्य की धूप लगने से शरीर में स्वयं विटामिन डी की उत्पत्ति होती है। किसी भी कारण से जिनके शरीर धूप से दूर रहते हैं और धूप पाने का जिनके शरीरों को संयोग नहीं मिलता, उनके जीवन में विटामिन डी का अभाव अधिक रहा करता है।

हमारे देश में पर्दे में रहनेवाली स्त्रियों के शरीर में इस विटामिन की विशेष

कमी रहती है। न तो उनको धूप ही मिलती है और न वे पदार्थ जिनके खाने से इस विटामिन की पूर्त्ति होती है। इसका परिणाम यह होता है कि उन स्त्रियों के शरीर दुबले पतले होकर पीले पड़ जाते हैं। शरीर की अस्थियाँ बिल्कुल निर्बल हो जाती हैं। अपनी इस अवस्था में उनको अनेक तरह के रोगों में जीवन बिताना पड़ता है।

शहरों की अपेक्षा देहातों में रहनेवाले लड़के अधिक स्वस्थ पाये जाते हैं। यद्यपि उनको खाने की सुविधाएँ नहीं होतीं। उनकी अपेक्षा शहरों में रहनेवाले लड़कों के भोजन की व्यवस्था अधिक अच्छी होती है। फिर भी उनको देखते हुए देहातों के लड़के अधिक सुदृढ पाये जाते हैं। इसका कारण यही है कि जो लड़के देहातों में रहते हैं उनके खुले शरीरों पर स्वतन्त्र रूप से सूर्य की किरणें पड़ती हैं और इससे उनके शरीर में विटामिन की उत्पत्ति होती है।

विटामिन डी के अभाव में जिनके शरीर रोगी और निर्बल होते हों, उनको विटामिन डी देनेवाले पदार्थों का सेवन करना चाहिए और सम्पूर्ण शरीर पर सूर्य की हलकी किरणें लेनी चाहिए। इसके साथ-साथ जीवन की उन परिस्थितियों को बदल देना चाहिए जिनके कारण शरीर की दुरवस्था है।

शरीर की हड्डियाँ उसी अवस्था में निर्बल होती अथवा झुक जाती हैं, जब उनको स्वस्थ और सुदृढ बनानेवाले विटामिन प्राप्त नहीं होते। छोटी अवस्था में विटामिन डी का अभाव, जीवन-भर की निर्बलता का कारण होता है। इसलिए उनके जीवन में इन तत्वों का विशेष उपयोग होता है। उस समय उनकी हड्डियों, रगों, नसों तथा विभिन्न प्रकार के अङ्गों के निर्माण का समय होता है। छोटी अवस्था में इन तत्वों की पूर्ति हो जाने के बाद शेष जीवन में उनको केवल सुदृढ बनाए रखने की आवश्यकता पड़ती है। इसलिए युवा और वृद्ध सभी के लिए यह आवश्यक होता है कि वे अपने शरीरों में विटामिन डी की पूर्ति करें और शरीर को निर्बल होने से बचावें।

भोजन में आवश्यकता के अनुसार विटामिन डी के न मिलने से दाँतों में विकार उत्पन्न होते हैं, वे निर्बल होने लगते हैं और बुढापे के पहले ही नष्ट हो जाते हैं। दाँतों के बिगड़ने से शरीर की बहुत बड़ी क्षति होती है। लोग वैद्यों और डाक्टरी की औषधियाँ करते हैं। और बहुत दिनों तक अपने पास

के रुपये-पैसे खर्च करके निराश हो जाते हैं। औषधियों तक ही लोगों की दौड़ होती है। परन्तु उस समय तक कुछ भी लाभ नहीं होता जब तक उनके मूल कारण को दूर नहीं किया जाता।

विटामिन ई

जिन चीजों में विटामिन ई पाया जाता है, उनके सेवन से सन्तान उत्पन्न करने की शक्ति बढ़ती है और उनके अभाव में यह क्षीण होती है। सन्तानहीन स्त्री-पुरुषों को विटामिन ई पर अधिक ध्यान देना चाहिए। समाज में बहुत से स्त्री-पुरुष हैं, जो जीवन-भर सन्तानहीन होने के कारण दुःखी रहते हैं।

इस तरह के लोग प्रायः झूठे प्रलोभनों में पड़े रहते हैं। कितने ही मक्कारों के द्वारा वे ठगे जाते हैं। कभी-कभी अयोग्य डाक्टरों और वैद्यों के हाथों में पड़ जाने से, उन्हें आर्थिक हानि उठानी पड़ती है। यदि वे अपनी इस-आवश्यकता को अनुभव करें और विटामिन ई देनेवाले पदार्थों का भोजन में यथोचित उपयोग करें तो अधिक लाभ हो सकता है।

इस विटामिन के अभाव में प्रायः स्त्रियों को गर्भपात हो जाया करता है। इसके फलस्वरूप उन्हें सन्तान से वंचित होना पड़ता है। स्त्री-पुरुष के जीवन में सन्तान पैदा करने की जो शक्ति होती है, वह विटामिन ई के द्वारा प्रोत्साहित होती है। इसलिए जिनके जीवन में इस प्रकार की लालसा हो, उन्हें इस विटामिन से लाभ उठाना चाहिये।

दूध और नारियल में इस विटामिन की अधिक मात्रा होती है। आटे की भूसी में भी यह विटामिन पाया जाता है। उसे छानकर अलग कर देने से जो भोजन करते हैं, उनमें इस विटामिन का अभाव होता है। हरी साग-भाजी, ताजे दूध, मक्खन, अंकुरा और गेहूँ में भी यह विटामिन मिलता है। इसके सिवा सलाद और अण्डे की जर्दी में भी यह विटामिन होता है। उरद, गोखरू, शकरकन्द, च्यवनप्राश, तालमखाना, छुहे, मलाई, सूखे मेवे, और बिनौले में भी विटामिन ई होता है।

ऊपर जितने प्रकार के जीवन तत्वों का वर्णन किया गया है। वे सभी हमारे शरीर की आवश्यकताओं के लिए उपयोगी हैं। प्रकृति ने स्वस्थ और नीरोग रहने के लिए इन्हें उत्पन्न किया है। निर्बलता और रोगों का आक्रमण केवल

में उसी तरह सम्भव होता है, जिस तरह पहननेवाले कपड़े गंदे और मैले होते रहते हैं। उन वस्त्रों को धोना और धूप में सुखाना एक आवश्यक कार्य होता है। यदि ऐसा न किया जाय तो कुछ इने-गिने दिनों में ही उन वस्त्रों की उपयोगिता नष्ट हो जायगी और यदि वे पहने जायँगे तो उनके द्वारा शरीर में रोग उत्पन्न होंगे। इसीलिए उन्हें धोकर और धूप में सुखाकर उपयोगी बनाये रखने की आवश्यकता होती है।

हमारे शरीर की भी यही अवस्था है, उसकी क्षीणता और दुर्बलता को पूरा करने के लिए प्रकृति ने स्वय व्यवस्था की है। यदि इस व्यवस्था से हम लाभ उठा सकें तो फिर हमारे रोगी और निर्बल होने का कोई कारण नहीं है। प्रकृति की इस व्यवस्था से लाभ उठाने की दृष्टि से ही वैज्ञानिकों ने भोजन सम्बन्धी अनेक अनुसन्धान किये हैं और इस बात का निश्चय किया है कि मनुष्य किस तरह की सावधानी से अपने जीवन में अधिक-से-अधिक दिनों तक स्वस्थ, नीरोग और शक्तिशाली रह सकता है।

विटामिन की रक्षा

हमारे जीवन में प्रोटीन और विटामिन का क्या मूल्य है और हमारे शरीर की आवश्यकताओं के साथ, उन दोनों प्रकार के तत्वों का क्या सम्बन्ध है, इन बातों पर पिछले पृष्ठों में लिखा जा चुका है। अब प्रश्न यह है कि विटामिन के तत्वों की रक्षा कैसे हो?

इस प्रश्न का अभिप्राय यह है कि जिन खाद्य वस्तुओं में सभी प्रकार के विटामिन पाये जाते हैं, वे सब हमारे शरीर को किस प्रकार प्राप्त हों। किसी लेख या पुस्तक में उन तत्वों के सम्बन्ध में पढ़ लेने से ही क्या उन तत्वों का लाभ हमको मिल सकता है? ऐसा नहीं है। गुड़ या शक्कर की मिठास का वर्णन पढ़ लेने से उसकी मिठास का अनुभव नहीं होता और उस समय तक नहीं होता जब तक मनुष्य उसे स्वयं नहीं खाता। विटामिन नामक तत्वों की भी यही बात है। अनजान तो भूलें करते ही हैं किंतु जानकार भी उनसे लाभ नहीं उठा पाते। इसलिए यहाँ पर यह बताना आवश्यक है कि भोजन के पदार्थों में

मिलनेवाले जीवन तत्वों से किस प्रकार लाभ उठाया जा सकता है।

भोजन के सम्बन्ध में अनुसन्धान का कार्य जब से प्रारम्भ हुआ है, मनुष्य के भोजन में एक बड़ा परिवर्तन हो गया है। इसके पहले भी मनुष्य भोजन करते ही थे और भोजन से जो लाभ होना चाहिए वह लाभ उनको होता ही था। यह दूसरी बात है कि उस समय लोग भोज्य पदार्थों की उतनी मीमांसा करना नहीं जानते थे, जितनी लोग आज जानने लगे हैं।

प्राचीनकाल में आज की अपेक्षा लोग अधिक स्वस्थ और नीरोग होते थे। शारीरिक शक्तियाँ भी हमारी अपेक्षा उनमें अधिक मिलती थीं। इसका कारण है। आज का मनुष्य पहले की अपेक्षा अधिक शिक्षित हो गया है और वह जितना ही शिक्षित होता जाता है, प्राकृतिक जीवन से वह उतना ही दूर होता जाता है। वर्तमान शिक्षा और सभ्यता ने मनुष्य को जीवन के सत्य से ही अलग कर रखा है। बड़े से बड़े शहरों का जीवन इतना कृत्रिम हो गया है, जिसका पता लगना कठिन है। इस कृत्रिम जीवन में उसकी सभी आवश्यकताएँ कृत्रिम उपायों से ही पूरी होती हैं।

भोजन के सम्बन्ध में अस्वाभाविकता आ गई है। खाने के जो पदार्थ जिस अवस्था में मिलने चाहिए, नहीं मिलते। अधिक धन व्यय करने पर जो खाद्य-पदार्थ प्राप्त होते हैं, उनकी जीवन शक्ति बहुत कुछ नष्ट हो चुकती है। इसके साथ साथ हमारे जीवन में शुद्ध वायु और सूर्य की धूप की बड़ी आवश्यकता है। इन दोनों से भी अधिकांश नागरिक स्त्री पुरुषों को वंचित रहना पड़ता है। इस प्रकार का कृत्रिम और अस्वाभाविक जीवन हमारी निर्बलता और रोगी जीवन का कारण हो गया है।

प्राचीन काल मे मनुष्य-जीवन की परिस्थितियाँ दूसरी थीं। बहुत बड़े शहरों के स्थान पर वे देहातों में रहा करते थे। खाने की सभी प्रकार की वस्तुएँ वे स्वयं पैदा करते थे और इच्छापूर्वक उन्हें खाकर, सुख और स्वास्थ्य प्राप्त करते थे। मनुष्य-जीवन की परिस्थितियाँ आज बिल्कुल बदल गई हैं। इसीलिए मानव जीवन पहले की अपेक्षा निर्बल और रोगी हो गया है।

रोग पैदा होने पर चिकित्सा की खोज होती है। मनुष्य जितना ही रोगी रहने लगा, उसके सम्बन्ध में उतनी ही खोज होने लगी। वैज्ञानिकों ने निश्चय

किया कि मनुष्य के निर्बल और रोगी होने का कारण उसका अस्वाभाविक और अयोग्य भोजन है। इसी आधार पर अनेक प्रकार के अनुसंधान किये गये।

भोजन के सजीव पदार्थ

पिछले पृष्ठों के पढने से यह तो मालूम हो जायगा कि भोजन के पदार्थों में जो आवश्यक जीवन-तत्व पाये जाते हैं, उन्हीं से हमारे शरीर की रचना होती है और स्वास्थ्य तथा शक्ति प्राप्त होती है। लेकिन इतने ही से काम नहीं चलता। और भी कुछ बातों के जानने की आवश्यकता है। जिनका यहाँ स्पष्ट करना आवश्यक है।

खाने के सभी पदार्थ बाजार से खरीदे जाते हैं। यह तो मालूम हो गया कि हमारे भोजन में किस प्रकार के पदार्थ उपयोगी होते हैं। अब उनके खरीदने का प्रश्न पैदा होता है।

अधिकांश लोग चीजों को खरीदते समय सस्ते भाव पर अधिक ध्यान देते हैं। एक आदमी शाक-भाजी और तरकारी खरीदने जाता है। पूरे बाजार में घूमकर जहाँ सस्ता देखता है, वहीं खरीदता है। वह इस बात पर बहुत कम ध्यान देता है, कि जो चीजें उसे खरीदनी हैं, वे किस प्रकार की होनी चाहिएँ। जो वस्तुएँ अधिक ताजी और उपयोगी होती हैं, वे महँगी मिलती हैं। इसका फल यह होता है कि उनको छोड़कर जिन दूकानों पर उनका भाव सस्ता मालूम होता है, वहाँ पर वह उन्हें खरीद लेता है।

यह निश्चित है कि इस सस्तेपन के कारण वे चीजें उतनी उपयोगी नहीं प्राप्त होतीं, जितनी महँगे दामो में वे मिल सकती थीं। खाने की वस्तुओं के खरीदने में यह एक बड़ी भूल होती है। इस प्रकार की भूल साधारण आदमी और गरीब लोग ही नहीं करते, वे लोग भी इस प्रकार की भूलें करते हैं, जिनके पास पैसे का अभाव नहीं होता। इस भूल से उनको उपयोगी वस्तुओं से वञ्चित रहना पड़ता है और उसका प्रभाव स्वास्थ्य पर पड़ता है।

भोजन सम्बन्धी नवीन खोजों के अनुसार यह तो सिद्ध ही हो चुका है कि हमारे स्वास्थ्य के लिए सभी प्रकार के फल तथा हरी शाक-भाजी अधिक आवश्यक है। इन दोनों वस्तुओं के सम्बन्ध में जन साधारण का विश्वास आश्चर्यजनक है। मैंने स्वय देखा है कि मनुष्य व्यर्थ के मामलों में सैकड़ों और हजारों

रुपये खर्च करता है, परन्तु अपने आपको स्वस्थ और नीरोग रखने के लिए वह कुछ भी खर्च नहीं करना चाहता।

विटामिन का लाभ उठाने के लिए सबसे पहले इस बात की आवश्यकता होती है कि उन वस्तुओं को खरीदकर खाने के काम में लाया जाय जो इन तत्वों को अधिक मात्रा में देती हों। यह सदा स्मरण रखना चाहिए कि जो पदार्थ अधिक पक जाते हैं, अथवा जिन शाकों की पत्तियाँ मुरझा और पीली हो जाती हैं, उनका विटामिन कम हो जाता है। इसलिए यदि उन तत्वों से लाभ उठाना है, तो खरीदने के समय महँगी से न घबराना चाहिए। प्रयत्न इस बात का करना चाहिए कि वे वस्तुएँ जितनी ताजी मिल सकें, उतना ही अच्छा है। उनमें विटामिन अधिक होता है और वे स्फूर्तिवर्द्धक तथा शक्तिशाली होते हैं।

विटामिन सुरक्षित रखने की सावधानी

किस पदार्थ में, किस प्रकार के आवश्यक तत्व पाये जाते हैं, इसको जानने के साथ साथ उन वस्तुओं की अवस्था और पहचान समझना भी आवश्यक होता है, जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है। किसी एक ही वस्तु में समय और अवस्था के अनुसार इस प्रकार के तत्व सजीव और निर्जीव हो जाते हैं। इसके संबंध में सावधानी से काम लेना चाहिए।

यह स्मरण रखने की बात है कि फलों, तरकारियों और अनाजों में जितना अधिक विटामिन उनकी कच्ची अवस्था में होता है, और सजीव होता है, उतना पक जाने, पीले पड़ जाने और कुछ समय तक रखे रहने के बाद मुरझा जाने या सूख जाने पर उसकी मात्रा बहुत कम हो जाती है और जो कुछ रह जाती है, वह निर्बल निर्जीव और स्फूर्ति हीन हो जाती है। इसलिए उनका सेवन उसी अवस्था में अधिक उपयोगी होता है, जब उनके तत्व सजीव और स्फूर्तिपूर्ण होते हैं।

एक दूसरा प्रश्न यह भी सामने आता है कि पदार्थों का विटामिन सुरक्षित कैसे रखा जाय। इसका अर्थ यह है कि सुरक्षित और सजीव अवस्था में ही इस प्रकार के तत्व हमारे शरीर को कैसे प्राप्त हों? मैं जानती हूँ, इसके संबंध में भूलें होती हैं और उन घरों में भूलें होती हैं जिन घरों के लोग इस प्रकार की बातों का ज्ञान रखते हैं और अपनी जानकारी से लाभ उठाना चाहते

हैं। इस प्रकार की भूलों के कारण हैं। अशिक्षा और सामाजिक दुरवस्था के कारण स्त्रियाँ जीवन की बहुत-सी आवश्यक बातों को नहीं जानतीं, उनको जिस प्रकार का जीवन बिताना पड़ता है, उसमें उनको इनसे वंचित रहना स्वाभाविक हो जाता है। इस अवस्था में यदि घरों के पुरुष भोजन-संबंधी ज्ञान रखते भी हैं तो उन्हें उसका पर्याप्त लाभ इसलिए नहीं होता कि स्त्रियाँ उन बातों से अनभिज्ञ होती हैं।

स्त्रियो की यह निर्बलता अधिक हानिकारक सिद्ध होती है। इसलिए कि चीज़ों के रखने और भोजन बनाने का कार्य उन्हीं के हाथों में होता है। हमारे देश में ऐसे बहुत कम पुरुष मिलेंगे जो भोजन बनाना भी अपना काम समझते हैं। वे चीजों को खरीदकर और लाकर घरों में छोड़ देते हैं और जानकारी रखने के कारण इस हिसाब से खाने-पीने की चीजें खरीद कर लाते हैं जिससे भोजन का वास्तविक लाभ उनको मिल सके। परंतु अनजान और अपरिचित स्त्रियों के हाथों में पड़ने से उन वस्तुओं का दुरुपयोग होता है।

जिन बड़े घरों में नौकरों के द्वारा काम होता है और जहाँ पर नौकर ही चीजों को खरीद कर लाने और भोजन बनाने का कार्य करते हैं, वहाँ पर और भी अधिक असावधानी होती है। भोजन का विषय किसी प्रकार की अवहेलना करने योग्य नहीं है। जीवन का सुख और स्वास्थ्य, अधिक अंशों में भोजन पर ही निर्भर है। इसलिए उसके संबंध में उपेक्षा करने से काम नहीं चलता।

जीवन की दूसरी समस्याओं पर जितना ध्यान दिया जाता है, उतना ध्यान भोजन के प्रश्न पर नहीं दिया जाता। इस उपेक्षा का प्रभाव लड़कपन से लेकर जीवन के अंत तक अपना काम करता है। यह बात कभी न भूलनी चाहिए कि इस विषय में जितनी ही जानकारी प्राप्त की जायगी और उसके बाद जितनी अधिक सावधानी से काम लिया जायगा उतना ही अधिक शरीर को सुन्दर सुडौल, सुगठित, सुदृढ़ और स्वस्थ रखा जा सकता है। जीवन का सबसे बड़ा सुख यही है।

चीजों का विटामिन कई प्रकार का होता है। उनके संबंध में यहाँ अलग-अलग बातों पर प्रकाश डाला जायगा।

पानी में विटामिन घुल जाते हैं

विटामिन पानी में घुल जाया करते हैं। यह बात समझ लेने की है। इसको न जानने से उसको खो देना पड़ता है। दूसरी बातों में सावधानी रखने से जहाँ कई बातों में लाभ होता है। वहाँ इसके संबंध में यदि ध्यान न रखा जाय अथवा जानकारी न हो तो उनका लाभ नहीं उठाया जा सकता।

विटामिन अनेक प्रकार के होते हैं। उनके घुलने का क्रम भी अलग अलग होता है। सभी विटामिन नहीं घुल जाते। जो घुलते हैं उनमें भी अन्तर होता है। कुछ देर में घुलते हैं और कुछ शीघ्र घुल जाते हैं। विटामिन बी और सी जल्दी घुल जाया करते हैं, इसीलिए उनके संबंध में ध्यान रखने की आवश्यकता होती है। अन्यथा उनका लाभ नहीं हो सकता।

कुछ तरकारियाँ और शाक-भाजियाँ उबाली जाती हैं। उबालकर उनका पानी फेंक दिया जाता है। ऐसा करने से उनका घुलनेवाला विटामिन, उनसे निकल कर पानी में आ जाता है और जब यह पानी फेंका जाता है तो उनके विटामिन भी उस पानी के साथ चले जाते हैं। इससे बड़ी हानि होती है।

उबालने में भी दो तरीके काम में लाये जाते हैं, हरे शाकों और भाजियों में अधिक पानी होता है। आग पर चढ़ाते ही उनमें अपने आप पानी निकलता है। उस पानी में उनके विटामिन निकलकर अलग हो जाते हैं। यदि वह पानी फेंका गया तो समझ लेना चाहिए कि उन चीजों के खाने से उनके तत्वों का लाभ न हो सकेगा।

जिन चीजों में पानी कम होता है, अथवा बासी हो जाने या सूख जाने के कारण उनमें पानी की मात्रा कम हो जाती है, उनको उबालते समय ऊपर से पानी मिलाया जाता है और उनके उबल चुकने पर उनका पानी फेंक दिया जाता है। इस तरीके से भी उनका विटामिन उनसे निकल जाता है और उनके उपयोगी तत्वों के अभाव में ही हमें उनको खाना पड़ता है। यह तरीका और भी हानिकारक होता है।

इस प्रकार नष्ट होनेवाले विटामिन सुरक्षित रखे जा सकते हैं। चीजों को उबालने के समय यदि ऊपरी जल न मिलाना पड़े तो बहुत अच्छा होता है।

चतुर भोजन बनानेवाला ऐसा ही करता भी है। बिना ऊपरी पानी के भी चीजों को उबाला जा सकता है।

उबालने की प्रत्येक अवस्था में इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उनका पानी फेंकना न पड़े। यदि ऊपर से पानी मिलाना ही हो तो इतना कम मिलाया जाय कि उनके उबलते-उबलने ऊपर से डाला हुआ पानी उन्हीं में खप जाय, हरी चीजों में पानी अधिक निकलता है उसे भी फेंका नहीं जाता, किसी प्रकार उन्हीं में खपा देना पड़ता है। उबलने के समय दो बातों का ध्यान रखना चाहिए पहली बात यह कि आँच बहुत हल्की रहे और दूसरी बात यह कि जिस बरतन में उबाला जाय, उसे ढककर रखा जाय।

बिना ढके उबालने अथवा किसी शाक भाजी या तरकारी को बनाने से भी विटामिन भाप के साथ निकल जाता है इसीलिए बरतन को ढककर उनको उबाला अथवा बनाया जाता है। बरतन को ढकने से एक लाभ और होता है, उबाली जानेवाली अथवा बनाई जानेवाली वस्तु हल्की से हल्की आँच में जल्दी से जल्दी बन जाती है। विटामिन को सुरक्षित रखने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक होता है कि आग पर कम से कम समय के लिए चढ़ाया जाय यदि आग पर न चढ़ाना पड़े और वे वस्तुएँ खाई जा सकें, जैसा कि अनेक चीजों के साथ होता है तो अधिक अच्छा है।

विटामिन के पानी में घुल जाने का एक उपाय और है। उसके संबंध में भी प्रायः सभी घरों में भूल होती है। हरी तरकारी या शाक-भाजी को पानी भरे हुए किसी बड़े बरतन में छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार वे चीजें दिन दिन भर और रात-रात भर पानी में पड़ी रहती हैं। ऐसा करने का अभिप्राय यह होता है, जिससे वे चीजें सूख न जायँ और हरी बनी रहें, लेकिन ऐसा करने वालों को इस बात का ज्ञान नहीं होता कि पानी में घुलनेवाला विटामिन अधिक समय तक पानी में चीजों के पड़े रहने पर घुल जाता है। और वे चीजें बिना विटामिन की रह जाती हैं।

इस प्रकार की वस्तुओं को इतना अधिक न खरीद लेना चाहिए जिससे वे कई-कई दिनों तक घर में पड़ी हुई सूखती और सड़ती रहें। इसका फल यह होता है कि जो आवश्यक तत्व उनसे मिलते हैं, वे या तो बिल्कुल नष्ट हो जाते

है अथवा निर्बल और निकम्मे हो जाते हैं। हरी और ताजी वस्तुएँ अधिक लाभ पहुँचाती हैं। इस बात को कभी न भूलना चाहिए।

आग पर पकाने से विटामिन जल जाते हैं

आग पर भोजन बनाने का ढङ्ग ही गलत है। इसके सबध में जितने अनुसंधान हो रहे हैं, वे सभी भोजन बनाने की इस प्रणाली का विरोध कर रहे हैं। नयी खोजों में बहुत स्पष्ट रूप से यह बताया जा रहा है कि विटामिन नष्ट होने के जितने भी कारण हैं उनमें उन्हें सबसे अधिक नष्ट करनेवाला आग पर पकाने का तरीका है।

नवीन खोजों के अनुसार बिना आग पर पकाये हुए खाने की वस्तुओं का प्रयोग दिन पर दिन समाज में विस्तार पा रहा है। यद्यपि इस प्रकार के लोगों की सख्या अभी तक बहुत थोड़ी है। शरीर को स्वस्थ और रोगों से मुक्त रखने की दृष्टि से यह बहुत आवश्यक है। इसके सबध में, एक स्वतत्र परिच्छेद में कुछ आवश्यक बातें बताई जायँगी।

समाज आग पर पकाकर भोजन करने पर अभ्यासी है। और अभ्यासी है अनादि काल से। इसलिए मैं यहाँ पर उन सभी बातों को स्पष्ट करना चाहती हू जिनके द्वारा भोजन को पकाने में विटामिन के नष्ट होने की कम से कम सम्भावना हो सकती है। समाज की वर्तमान अवस्था में, सर्वसाधारण के लिए यही सभव भी है।

यह बात तो निर्विवाद ही है कि आग पर पकाने से भोजन का सत जल जाता है और उससे, उसके आवश्यक तत्व हमारे शरीर में नहीं पहुँच पाते। इस विश्वास के साथ, इस बात का ध्यान रखने की आवश्यकता है कि भोजन की कोई भी वस्तु तेज आग पर न पकाई जाय।

हलकी आँच पर भोजन बनाने से भी भोजन के विटामिन की किसी प्रकार रक्षा होती है। कुछ विटामिन ऐसे होते हैं जो बहुत कम आँच सहन करते हैं और कुछ तो आग का संसर्ग पाते ही जल जाते हैं। कुछ विटामिन हलकी आँच में नष्ट नहीं होते। इस प्रकार विभिन्न गुण और स्वभाव के विटामिन होते हैं इसलिए इस प्रकार की सावधानी तो रखी जा सकती है कि भोजन बनाने के समय चूल्हे की आग को होली की तरह न जलाया जाय। नहीं तो

भोजन का समस्त आवश्यक सत् जलकर राख हो जायगा। और उसके खाने वालों को रुचिहीन और तत्वहीन निरर्थक भोजन ही खाने को मिलेगा।

लकड़ी के अभाव में भोजन बनाने के काम में पत्थर का कोयला आजकल चल रहा है। शहरों में इसकी अधिकता हो गई है। बड़े शहरों में इसका प्रचार और भी अधिक हो गया है। यह बात सभी को मालूम है कि पत्थर के कोयले की आग सबसे अधिक तेज़ होती है और तेज़ आग अधिक हानिकारक है।

भोजन की चीजों का विटामिन जल जाने अथवा नष्ट हो जाने की सबसे मुख्य पहचान यह है कि चीजों का स्वाद नष्ट हो जाता है। खाने में रुचि नहीं मालूम होती। उनकी अरुचिकर हो जानेवाली अवस्था सत्वहीन अथवा विटा-मिनहीन भोजन का परिचय देती है। कोयले की आग पर जो भोजन बनाया जाता है, वह स्वादिष्ट नहीं होता। रोटी तो इतनी अरुचिकर हो जाती है, जिससे पेट नहीं भरता। दाल, चावल और तरकारियों की भी यही अवस्था है। लकड़ी की साधारण आँच में बनी हुई ये चीजें जितनी प्रिय और स्वादिष्ट होती हैं, उतनी कोयले की आग पर बनी हुई चीजें नहीं होतीं।

होटलों में जो भोजन मिलता है, वह घर की समता इसीलिए नहीं करता कि वह तेज से तेज आँच पर पकाया जाता है। कितने ही लोग अपने घर से बाहर किसी शहर में रहने पर स्वय भोजन नहीं बनाते और अपने खाने-पीने का प्रबंध किसी होटल या भोजनालय में कर लेते हैं। इससे उनका स्वास्थ्य खराब हो जाता है। इस प्रकार के सभी लोग पश्चात्ताप के साथ कहते हैं, होटल या भोजनालय का भोजन भी, कोई भोजन होता है! विवश अवस्था में किसी प्रकार पेट भरना पड़ता है।

इस प्रकार के विकृत भोजन का यही कारण होता है कि वह या तो पत्थर के कोयले पर बनता है अथवा अधिक तेज आग पर पकाया जाता है। यों तो मैं सदा से इस बात को जानती हूँ किन्तु एक परिवार में इसका भयानक परि-णाम मुझे देखने को मिला है। वह परिवार साधारणतया एक बड़ा परिवार था। भोजन पकाने में लकड़ी का खर्च अधिक होता था। लकड़ियाँ दिन-पर-दिन महँगी हो रही थीं।

उस परिवार के लोगों ने लकड़ी का खर्च कम करने के लिए पत्थर के कोयले का प्रबंध किया और उसी की आग पर खाना पकने लगा। दूसरा महीना आरम्भ होते-होते उस घर के दो आदमी बीमार हुए। चिकित्सा में रुपये खर्च किये गये। परन्तु उससे कुछ स्थायी लाभ न हुआ। कुछ दिनों के बाद वे फिर बीमार हुए। उनकी फिर दवायें की गईं। इसके बाद एक एक करके पूरा परिवार बीमारी का शिकार हो गया। किसी स्त्री को दौरा आने लगा, घर के किसी आदमी को ज्वर आरम्भ हो गया। सोलह सत्रह वर्षीय एक अविवाहित युवती को खाँसी की शिकायत हो गई। इस प्रकार छोटे बच्चों से लेकर, बूढ़ों तक—सभी को किसी न किसी बीमारी में आ जाना पड़ा और समूचे घर का स्वास्थ्य चौपट हो गया।

इस दुष्परिणाम का कारण किसी की समझ में न आया। लकड़ी का खर्च बचाने के लिए पत्थर के कोयले का प्रबंध किया गया था। फल यह हुआ कि पाँच सात रुपये की लकड़ी में बचत हुई। परन्तु औषधियों में चालीस पचास रुपये और कभी कभी इससे भी अधिक महीने में खर्च होने लगे। अब भी कोई यह न समझ सका कि सारे परिवार के बीमार रहने का कारण क्या है। बराबर दवा का प्रबंध चलता रहा।

इस अवस्था में लगभग नौ महीने बीत गये। उस परिवार की यह परिस्थिति मेरे सामने उपस्थित हुई। निकट होने के कारण मैं पहले से इसके कारण को जानती थी। जब मुझे इस बात का विश्वास हुआ कि अब उस घर के लोग बताई हुई बातों पर विश्वास करेंगे तो मैंने उन्हें सलाह दी और पत्थर का कोयला उनके यहाँ बंद करवा दिया। मैंने उन्हें कोई औषधि नहीं बताई। केवल भोजन में कुछ परिवर्तन कराए और औषधियों का जो प्रबन्ध था उसे बंद करा दिया।

इस परिवर्तन से एक महीने के भीतर ही कुछ सुधार हुआ। उससे घर के लोगों को मेरी बातों पर अधिक विश्वास हुआ। कुछ दिन और बीत गये। घर से बहुत-कुछ बीमारी हट गई। एक बूढ़े आदमी को अतिसार हो गया था, उसमें कुछ अधिक दिन लगे। घर के शेष आदमी स्वस्थ होकर फिर जीवन बिताने लगे।

जिन घरों में भोजन पकाने के लिए पत्थर का कोयला काम में लाया जाता है, उस घर के लोगों का बीमार रहना स्वाभाविक है। इसके दूषित परिणाम का ज्ञान लोगों को नहीं होता। इसलिए लोग औषधियों का प्रबन्ध करते हैं। और अपने घर का धन चिकित्सकों के घरों में फेंका करते हैं। इस प्रकार के उदाहरण अनेक स्थानों पर देखे जा सकते हैं।

यह तो बताया ही जा चुका है कि भोजन के पदार्थों में जो विटामिन होते हैं उनके विभिन्न प्रकार के तत्व रोगों के आक्रमण से शरीर की रक्षा करते हैं। यदि उन तत्वों का अभाव न हो और वे भोजन के द्वारा आवश्यक मात्रा में शरीर में पहुँचते रहें तो रोगों के उत्पन्न होने का कोई कारण नहीं है। वास्तव में प्रकृति ने हमको नीरोग रखने की व्यवस्था स्वय की है। परन्तु प्रकृति के नियमों का पालन मनुष्य नहीं करता। इसलिए शरीर में रोगों के विकार उत्पन्न होते हैं और यदि भोजन की परिस्थिति मे सुधार न किया गया तो मनुष्य सदा किसी न किसी रोग मे पड़ा रहता है।

भोजन से मिलनेवाले जीवन तत्व रोगों से हमारी रक्षा करते हैं। यदि वे न मिलेंगे तो हमारी रक्षा कौन करेगा। इसके सम्बन्ध मे ऊपर एक परिवार का उदाहरण दिया जा चुका है। एक छोटा सा उदाहरण मैं और देना चाहती हूँ।

एक कृषम परिवार की बात है। उस घर मे एक ही स्त्री थी। और छोटे-बड़े मिलाकर कई आदमी खानेवाले थे। स्त्री भोजन बनाने मे बहुत निकम्मी थी। उसकी यह बात मुझे मालूम न थी।

उस स्त्री का पति प्रायः अतिसार के रोग से बीमार रहता था। औषधियों के प्रयोग से वह कुछ अच्छा हो जाता और दवाएँ बन्द करने पर उसका फिर वही हाल हो जाता था मुझे एक बार उस स्त्री के गाँव में जाने का संयोग हुआ। वहाँ पर मैं कई दिनों तक रही भी।

मैंने स्वयं अपनी आँखों से देखा, उस स्त्री के भोजन बनाने का ढंग बहुत गलत था। बहुत पतली और सूखी लकड़ी मे वह भोजन पकाती थी और इतना अधिक जलाती थी कि उसे देखकर आश्चर्य होता था। आग की तेज लपटों से रोटियाँ जल जाती थीं। भोजन की चीजों का विटामिन जलकर और कोयला होकर, कहाँ चला जाता था, इसका पता लगाना भी असम्भव था। उस स्त्री

की यह दशा देखकर मुझे मालूम हुआ कि उसके पति के निरन्तर अतिसार का कारण क्या है। उसके दूषित भोजन का बुरा प्रभाव लड़कों पर भी पड़ा था और सभी लड़कों को पाचन की बीमारी थी।

इस प्रकार के एक दो नहीं सैकड़ों उदाहरण हैं जिनसे जीवन तत्वों की उपयोगिता का पता चलता है। आग पर भोजन बनाने के समय यदि सावधानी से काम न लिया जाय तो शरीर में विटामिन किसी प्रकार नहीं पहुँच सकते। और उसका फल रोगों का कारण होता है।

भोजन बनाने का कार्य जल्दबाजी में कभी न होना चाहिए। और न उसके लिए तेज आग का प्रयोग करना चाहिए। इसके सम्बन्ध में ऊपर दो उदाहरण दिए जा चुके हैं। हलकी आँच में बना हुआ भोजन रुचिपूर्ण मधुर और लाभदायक होता है। इसके साथ-साथ, एक बात का और स्मरण रखना चाहिए। आग पर पकाते समय जिन चीजों की भाफ निकला करती है, उनका भी विटामिन जल जाता है। इसलिए हलकी आँच में और बरतन को ढककर ही उन्हें सदा पकाना चाहिए।

सूखने पर विटामिन निर्बल हो जाते हैं

भोजन के सभी पदार्थ हरे और ताजे होने पर अधिक उपयोगी होते हैं। इसलिए उनके जीवन तत्व उस समय सजीव और अधिक मात्रा में होते हैं। किन्तु यही चीजें कुछ समय के बाद मुरझा अथवा सूख जाती हैं, तो उनके विटामिन निर्बल और निस्तेज हो जाते हैं। इससे उनकी उपयोगिता कम हो जाती है।

प्रकृति का यह नियम सभी चीजों पर लागू है। भोजन का कोई पदार्थ ऐसा नहीं है, जिसमें इस नियम की सार्थकता न हो। जिस गेहूँ की रोटियाँ हमें रोज ही खाने को मिलती हैं, वह जब खेतों में होता है और जब उसके दाने पुष्ट हो जाते हैं, उस समय उसकी उपयोगिता बहुत अधिक होती है। यदि कुछ दिनों तक नियमपूर्वक उसके कच्चे दाने चबाने और खाने को मिलें तो शरीर की शक्तियाँ अधिक सजीव हो उठती हैं।

फलों में भी यही बात है। खाने योग्य फल पेड़ों से तोड़ने के बाद तुरत जितने उपयोगी और शक्तिशाली होते हैं, उतने वे दो-चार दिन रखे रहने के बाद नहीं रहते। प्राकृतिक नियमों के अनुसार जहाँ खानेवाली चीजें

वर्णन किया गया है, वहाँ स्पष्ट रूप से बताया गया है कि कच्चे और गद्दर फलों में जितना विटामिन होता है, उतना अधिक पक जाने के बाद उनमें नहीं रहता। जिस प्रकार बूढे मनुष्यों की शक्तियाँ क्षीण हो जाती हैं; ठीक उसी प्रकार अधिक पके फलों के विटामिन निर्जीव हो जाते हैं। उनकी यह निर्बलता सूखने पर और भी बढ़ जाती है।

विटामिन से लाभ उठाने के लिए जितने कच्चे और अधपके फल मिल सकें उतना ही अच्छा है। सभी प्रकार के अनाज दूसरे नम्बर के फल कहलाते हैं। जिन अनाजों में विटामिन का अभाव बताया जाता है, उनमें भी जब वे कच्चे होते हैं अथवा पकने पर होते हैं तो विटामिन मिलता है। किन्तु उन अनाजों के सूख जाने पर उनके विटामिन बहुत कम हो जाते हैं अथवा बिल्कुल नहीं रह जाते।

चने की तरह के कई अनाज भिगोकर खाये जाते हैं। गेहूँ भी भिगोकर खाया जा सकता है। इन पदार्थों का विटामिन पानी में भिगोने पर नष्ट नहीं होता। बल्कि उसके मुरझाये हुए तत्व फिर सजीव हो उठते हैं। इसलिए सूखे हुए गेहूँ, चने, मटर और कई प्रकार के दालों के अनाज भिगोकर कच्चे खाए जाते हैं।

विटामिन नष्ट होने के कुछ अन्य कारण

विटामिन नष्ट होने के ऊपर जितने कारण बताये गये हैं, उनके सिवा कुछ दूसरे तरीकों से भी खाने की वस्तुओं का विटामिन नष्ट होता है। जिनके कारण शारीरिक शक्तियाँ निरंतर क्षीण होती रहती हैं और रोगों को पैदा होने का अवसर प्राप्त होता है।

रोटियाँ किसी न किसी अनाज के आटे की बनाई जाती हैं। देहात के निर्धन मनुष्य अधिकांश दिनों में गेहूँ के अतिरिक्त दूसरे अनाजों की रोटी खाते हैं। जो लोग शहरों में रहते हैं, वे किसी भी श्रेणी के लोग क्यों न हों, प्रायः सभी गेहूँ और गेहूँ के आँटे का ही प्रयोग करते हैं।

इन अनाजों को पीसने के लिए हाथ की चक्कियाँ होती हैं। उन्हीं चक्कियों में प्राचीन काल से आँटा पीसने का होता कार्य आया है। परन्तु

दालों और चावलों के बनाने में भी यही बात है। इन कामो में भी मशीनों के बिना अब लोगों का काम नहीं चलता जो चावल मशीनो से तैयार किये जाते हैं, उनका विटामिन साफ-साफ उड़ जाता है। और उनका खाना और न खाना, बराबर हो जाता है।

मशीनों के इस प्रभाव से भोजन का महत्त्व मारा गया है। इसके फलस्वरूप मनुष्य जाति दिन पर दिन निर्बल हो रही है। और समाज मे शारीरिक विकारो तथा रोगों की सख्या दिन पर दिन बढती जा रही है। इन विकारों और रोगों से छुटकारा पाने के लिए लोगों को औषधियों का आश्रय लेना पड़ता है। लेकिन औषधियाँ न तो मनुष्य जीवन को नीरोग बनाती हैं और न शक्ति और स्वास्थ्य देती हैं मनुष्य को उनसे कुछ सतोष मिल जाता है।

आँटा पीसनेवाली मशीनों का प्रचार होने से हाथ की चक्कियों का काम करीब-करीब बन्द हो गया है। पहले यह कार्य घर की स्त्रियों के द्वारा होता था। आज उनके इस कार्य को मशीनें करने लगी हैं। कितने ही लेखकों ने इसके सम्बन्ध मे स्त्रियों को कोसा है। उनका कहना है कि जब से स्त्रियों ने चक्की मे आँटा पीसने का काम बन्द किया, उस समय से वे रोगी रहने लगी हैं।

इस कथन में अतिशयोक्ति है। यदि घरों के भीतर हाथ की चक्की में आँटा पीसने से ही कोई नीरोग रह सकता है तो पुरुषो को भी स्वस्थ और नीरोग रहने के लिए हाथ की चक्की से आँटा पीसना चाहिए। सिद्धान्त तो यही कहता है।

बात वास्तव में कुछ और है। चक्की मे आँटा पीसने से न तो स्त्रियाँ नीरोग रह सकती हैं और न पुरुष। सत्य यह है कि हाथ की चक्की के आँटे में जो विटामिन रहता है, उसके द्वारा बनने वाला भोजन स्वयम् रोगों के निवारण का कार्य करता है। इस आँटे से बनी हुई रोटियाँ खाना मानो स्वास्थ्य की रक्षा करना है। इसके द्वारा स्त्री बच्चे और पुरुष सभी नीरोग रह सकते हैं।

स्त्रियों के आँटा पीसने के कार्य का न तो मैं विरोध करती हूँ और न उसके लिए किसी स्त्री को विवश करना चाहती हूँ। मैं यह जानती हूँ कि परिश्रम से शरीर की रक्षा होती है। फिर वह किसी प्रकार का परिश्रम क्यों न हो। जो स्त्रियाँ घरों में आँटा पीसने का कार्य कर सकती हैं, उन्हें अपने और परिवार

के स्वास्थ्य के लिए ऐसा करना चाहिए। जो नहीं कर सकतीं, वे अधिक मज-दूरी देकर, मजदूरी करनेवाली स्त्रियों से यह काम ले सकती हैं।

लवण, क्षार, अम्लरस और खनिज पदार्थ

भोजन के पदार्थों में कितने ही प्रकार के रस उत्पन्न करने की प्रकृति पायी जाती है। उनके स्वभाव और कार्यों का ठीक ठीक ज्ञान होना बहुत आवश्यक होता है। उनके गुण और कार्य का जितना ही परिचय रहता है, उतना ही उनसे लाभ उठाया जा सकता है।

हमारा जीवन स्वास्थ्य पर निर्भर है और स्वस्थ अथवा रोगी शरीर भोजन का परिणाम होता है। बहुत दिनों तक लोगों में विश्वास बना रहा कि पूर्व जन्म के पापों के कारण मनुष्य को अनेक प्रकार की बीमारियों का कष्ट उठाना पड़ता है। समाज से वह विश्वास आज विदा हो रहा है। यह बात जरूर है कि आज अशिक्षित समाज में झूठी बातों के अनेक विश्वास देखने और सुनने में आते हैं, लेकिन उनका अस्तित्व दिन पर दिन कम होता जा रहा है। भविष्य में आशा की जाती है कि समाज से मिथ्या विश्वास अधिक अंशों में तिरोहित हो जायगा।

आज की शिक्षा में हमारे जीवन के अनेक सत्यांश को सम्मिलित किया गया है। इतना ही नहीं भविष्य में जीवन के सत्य के निकट मनुष्य अधिक पहुँच सकेगा इस प्रकार का मेरा विश्वास है। बढ़ती हुई शिक्षा और जानकारी में मनुष्य अपनी जरूरत की सभी वस्तुओं को पहचान रहा है और उनसे वह लाभ उठाना चाहता है। उसकी यह कोशिश बराबर काम कर रही है।

मनुष्य स्वस्थ और नीरोग जीवन बिताना चाहता है। इसीलिए वह इस कोशिश में है कि उसे पूर्ण स्वास्थ्य किस प्रकार प्राप्त हो सकता है, इसे वह जानना चाहता है। अपनी इस चेष्टा में उसे सफलता मिली है। इस सफलता ने उसके उत्साह और साहस में वृद्धि की है। जीवन की यह वैज्ञानिक विवेचना और खोज मनुष्य को सुखी बनाने का काम करेगी, ऐसा विश्वास है।

खाने के पदार्थों में नमक

लवण का अर्थ नमक से है। लवण कोई दूसरी वस्तु नहीं है। जो नमक नित्य हमारे भोजन में काम आता है, वही लवण यहाँ पर बार बार लिखा जा रहा है। हमारे खाने के पदार्थों में नमक का मिश्रण होता ही है और किन्हीं-किन्हीं में तो उसकी बहुत कम मात्रा होती है। यह नमक शरीर के हित के लिए अत्यन्त आवश्यक है। साधारण रूप में नमक के कार्य इस प्रकार होते हैं :—

१—नमक शारीरिक निर्माण मे काम करता है।

२—पाचन-शक्ति में सहायता करता है और रक्त को शुद्ध करता है।

३—नमक के कारण ही मुख को लाला-ग्रन्थियाँ अधिक काम करती हैं और लार पैदा करती हैं।

४—इसकी सहायता से यकृत, पित्त बनाने का कार्य करता है।

५—भोजन को पचानेवाले आमाशय में जो पाचक रस बनता है, वह नमक के सहयोग से ही तैयार होता है और वह नमक से ही बनता है।

इस प्रकार हमारे शरीर में नमक के अनेक कार्य होते हैं। अन्य वस्तुओं की अपेक्षा नमक की उपयोगिता हमारे शरीर में अधिक है, इसीलिए प्रकृति ने नमक अधिक से अधिक पैदा किया है और खाने के पदार्थों में भी उसको मिश्रित किया है इन वस्तुओं मे नमक के जो अंश पाये जाते हैं, वास्तव में वे हमारे लिए अधिक उपयोगी और काम के हैं। फलों, तरकारियों और खाने की अनेक जड़ों मे नमक की मात्रा अधिक होती है। हमारे भोजन मे शाक-भाजी और तरकारियों का महत्व अधिक है। जिनको भोजन में शाक-भाजी और तरकारियाँ नहीं मिलतीं, उनका रोगी रहना और उनके रक्त का विकृत होना स्वाभाविक है। फलों में भी नमक पाया जाता है और उनका मिश्रित अश शरीर के लिए बहुत लाभकारी होता है। नीबू, अनार, संतरे, कमरख आदि फल अनेक दृष्टियों से बहुत लाभकर सिद्ध हुए हैं।

भोजन में ऊपर से नमक मिलाने की प्रथा स्वाभाविक नहीं है। वास्तव में हमारी आवश्यकता के अनुसार नमक हमें पदार्थों से स्वयम् मिल जाता है। यह जरूरी नहीं है कि भोजन बनाते समय अथवा किसी वस्तु को खाने के समय ऊपर से नमक मिलाया जाय। लेकिन उसकी उपयोगिता के कारण, ऊपर से

कारबोहाइड्रेट्स

शरीर में चर्बी के सिवा अग्नि उत्पादन का काम करनेवाले कुछ और पदार्थ भी होते हैं, उन्हें कारबोहाइड्रेट्स कहते हैं। कारबन (कोयला) हाइड्रोजन (जलांश) और आक्सीजन नामक तीन तत्वों के मिलने से कारबोहाइड्रेट्स बनते हैं। इसमें श्वेतसार मिलता है और गुड़, शक्कर तथा शहद का शर्करा गुण भी इनमें पाया जाता है।

चर्बी के बाद हमारे शरीर में दूसरी श्रेणी के ईंधन, कारबोहाइड्रेट्स हैं। इनमें कारबन (कोयले) का अंश जलता है और शरीर में ताप उत्पन्न करता है। मांस, मछली और पनीर में भी कुछ कारबोहाइड्रेट्स पाया जाता है। दूध में भी लगभग पाँच प्रतिशत शक्कर होती है। इसके सिवा सभी प्रकार के श्वेतसार, अनाजों और फलों से शक्कर प्राप्त होती है।

कई प्रकार के पदार्थों में कारबोहाइड्रेट्स मिलते हैं। उपयोगिता के अनुसार श्रेणीबद्ध करके उनकी सूची नीचे दी जाती है—

१—सफेद और लाल शक्कर, गुड़ और शहद।

२—साबूदाना और मैदा।

३—सभी प्रकार के अनाज चावल, बाजरा, मकई, जौ, गेहूँ, जई आदि।

४—सूखे मेवे।

५—दालें और चना।

६—सोयाबीन, कच्चे छिलकेदार मेवे, सभी प्रकार के बीज, सूखे मटर और सेम लोबिया।

७—आलू, लहसुन, रतालू, जमीकन्द, गाजर, चुकन्दर, प्याज की तरह के कन्द मूल।

८—ताजे फल।

९—हरी पत्ती वाले शाक।

ऊपर लिखी हुई वस्तुओं से हमे कारबोहाइड्रेटस मिलते हैं। हमारे जीवन में इनकी उपयोगिता है। परन्तु उनके लिए किसी एक ही चीज से काम नही चलता। कारबोहाइड्रेट्स प्राप्त करने के लिए उन सभी प्रकार की वस्तुओं को

खाना चाहिए, जिनसे इनके सिवा प्रोटीन, खनिज पदार्थ, विटामिन तथा अन्य उपयोगी पदार्थ भी हमारे शरीर को मिल सकें। गेहूँ, जौ, चावल और मक्का में विशेष रूप से, श्वेतसार या माँड का अंश होता है और फलों से शर्करा मिलती है। ये दोनों मिलकर हमारे शरीर में शक्ति उत्पन्न करते हैं।

कारबोहाइड्रेट्स के कार्य

कारबोहाइड्रेट्स में अनेक वस्तुओं का मिश्रण है। उसकी उपयोगिता भी कई रूप में शरीर के लिए आवश्यक है। उसके कार्य इस प्रकार होते हैं.—

१—हमारे शरीर में कारबोहाइड्रेट्स दूसरी श्रेणी के ईंधन का काम करते हैं।

२—इनसे अग्नि उत्तेजित होती है और शक्ति की वृद्धि होती है।

३—किए हुए भोजन से प्रोटीन और चर्बी का यथोचित रूप में प्रयोग करने के लिए कारबोहाइड्रेट्स शरीर को उत्तेजित करते हैं।

खाने के पदार्थों को पाँच भागों में बाँटा गया है—प्रोटीन, चर्बी, कारबोहाइड्रेट्स, खनिज लवण और अनेक प्रकार के विटामिन। इन पाँचों प्रकार के भोज्य पदार्थों का अनुपात आवश्यकतानुसार होना चाहिए। यदि अनुपात में किसी वस्तु की आवश्यकता से अधिक मात्रा मिलती है तो उससे अनेक खराबियाँ उत्पन्न होती हैं। गृहस्थों में यहाँ अधिक रूप में यह बात देखी जाती है। छोटे बच्चे तो गुड़ और शक्कर की चीजें अधिक मात्रा में खाते ही हैं, जवान और बूढ़े भी इस प्रकार की वस्तुओं का अधिक सेवन करते हैं। इसका फल यह होता है कि उनके शरीर में कारबोहाइड्रेट्स की मात्रा अधिक पहुँचती है और उनका पाचन ठीक-ठीक न होने से आँतों में उनका रह जाना स्वाभाविक हो जाता है। फल यह होता है कि उस बचे हुए भोजन के पदार्थ से आँतों में हानिकारक गैस पैदा हो जाती है और उससे अपच, अतिसार तथा इस प्रकार के अनेक कष्ट उत्पन्न होते हैं। पेट में वायु का विकार भी उत्पन्न हो जाता है।

श्वेतसार और शक्कर की मात्रा देनेवाले भोजनों का सेवन अधिक करने से न केवल आँतों में खराबी उत्पन्न होती है, बल्कि उनके शरीर मोटे हो जाते हैं। दाँतों में रोग उत्पन्न होते हैं और प्रमेह की बीमारी हो जाने का अधिक भय रहता है।

———

मक्खन, घी, चर्बी और तेल

मनुष्य के भोजन में शरीर की आवश्यकताओं के लिए जितनी वस्तुयें होती हैं, उनमें से चर्बी एक है। इसे अंगरेजी में (Fat) कहते हैं। भोजन के पदार्थों में चर्बी का एक आवश्यक स्थान है। परन्तु उसकी उपयोगिता का ज्ञान बहुत कम लोगों को होता है।

चर्बी के दो रूप होते हैं—तरल और ठोस। मक्खन, घी, चर्बी और तेल—चर्बी के मूल पदार्थ हैं। इनमें तेल चर्बी का तरल रूप है। भोजन को पचाने के लिए, पाचन क्रिया के रूप में अग्नि हमारे शरीर में काम करती है। बिना कोयले और ईंधन के आग का काम नहीं चलता। इसलिए हमारे शरीर में ईंधन और कोयले की भी जरूरत है। यह जरूरत भी भोजन की किस्मों से ही पूरी होती है।

यह बात बताई जा चुकी है कि भिन्न-भिन्न प्रकार के भोजन विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। भोजन के पदार्थों के द्वारा हमारे शरीर की जहाँ कितने ही प्रकार की दूसरी जरूरतें पूरी होती हैं, वहाँ कोयले और ईंधन की जरूरत भी उसी के द्वारा पूरी होती है। हमारे शरीर की चर्बी इसी आवश्यकता की पूर्ति करती है।

भोजन की अनेक वस्तुओं में यह चर्बी पाई जाती है। इसके प्राप्त करने के दो साधन हैं। एक तो पशुओं के द्वारा और दूसरा वनस्पति के द्वारा। पशुओं के द्वारा जो चर्बी प्राप्त होती है, वह निम्नलिखत मिलती है—

१—चर्बी देने वाला पशुओं का मांस विशेष।

२—हड्डियों का खोखला भाग।

३—दूध।

४—मक्खन।

५—घी

६—मलाई

७—पनीर

८—जिगर

६—मछली और मछली का तेल

१०—अण्डे का पीला भाग

ऊपर जितने नाम लिखे गये हैं, इनसे जो चर्बी प्राप्त होती है, उसे पशु चर्बी के नाम से सम्बोधन किया जाता है। इसके सिवा दूसरी प्रकार की चर्बी वृक्षों के द्वारा प्राप्त होती है। उसे वनस्पति चर्बी कहा जाता है। यह चर्बी कई छिलकेदार मेवों और बीजों से तैयार की जाती है। इसे वनस्पति तेल भी कहते हैं। ये तेल कई प्रकार के बीजों से तैयार होते हैं।

१—जैतून का तेल

२—बादाम का तेल

३—गरी का तेल

४—मूँगफली का तेल

५—सरसों का तेल

६—बिनौले का तेल

७—तिल का तेल

इन दो प्रकार की वस्तुओं के सिवा चर्बी देनेवाले कितने ही पदार्थ भी होते हैं। परन्तु उनमें इसका अंश कम पाया जाता है। सभी प्रकार की दालों और चनों में चर्बी की अच्छी मात्रा होती है। सोयाबीन में भी चर्बी अधिक पायी जाती है। फलों में चर्बी नहीं के बराबर होती है। शाक-भाजी में भी चर्बी होती है लेकिन बहुत कम। ऊपर लिखा जा चुका है कि चर्बी शरीर की अग्नि को प्रदीप्त करने के लिए ईंधन का काम करती है। इसके सिवा इससे शरीर को शक्ति भी प्राप्त होती है। इस प्रकार चर्बी के द्वारा शरीर के दो प्रकार के काम होते हैं। १—अग्नि का प्रदीप्त करना और २—शरीर को शक्ति पहुँचाना। कारबोहाइड्रेट्स के द्वारा भी इन्हीं दो कार्यों की पूर्ति होती है। परन्तु उतनी नहीं जितनी की चर्बी से। कारबोहाइड्रेट्स की अपेक्षा चर्बी से अग्नि भी अधिक तीव्र होती है और शक्ति भी अधिक प्राप्त होती है।

शरीर में चर्बी के प्रयोग

चर्बी के उपयोग पर संक्षेप में ऊपर की पंक्तियों में लिखा जा चुका है। यहाँ पर उसको और भी स्पष्ट करना है। उसका प्रयोग हमारे जीवन का

आवश्यक अंग है। इसलिए यदि चर्बी का हमारे शरीर में अभाव रहता है तो वह अभाव हमारे स्वास्थ्य को नष्ट करके निर्बलता और बीमारी का कारण होता है।

चर्बी प्रमुख रूप से हमारे शरीर मे ईंधन का काम करती है। वह कोयले की भाँति जलती है। लकड़ी और कोयले के जलने में और चर्बी के जलने में अन्तर होता है। लकड़ी की अपेक्षा कोयला देर तक जलता है और अधिक अग्नि पैदा करता है। कोयले की अपेक्षा चर्बी धीरे-धीरे जलती है। लेकिन कोयले की अपेक्षा चर्बी के द्वारा अग्नि अधिक तेज होती है। इस प्रकार चर्बी के द्वारा हमारी पाचन क्रिया को अधिक शक्ति मिलती है। यही कारण है कि जिनके शरीर में चर्बी होती है अथवा अधिक होती है, उनके शरीर का पाचन कार्य अच्छा होता है।

शरीर के कुछ विशेष स्थानों मे चर्बी एकत्र होती है। सम्पूर्ण शरीर में चर्बी नहीं पायी जाती, यह अपने स्थानों पर एकत्र होती रहती है और आवश्यकता के समय विशेष रूप से काम करती है।

चर्बी का सचय भोजन के पदार्थों से होता है। जिन पदार्थों में चर्बी अधिक होती है, उनके खाने अथवा पीने से शरीर को अधिक चर्बी प्राप्त होती है। जो चर्बी शरीर को मिलती है, वह मिलने के साथ ही जलकर समाप्त नहीं हो जाती। समय और आवश्यकता के लिये, प्रकृति के नियमानुसार उसका सचय भी होता रहता है।

पाचन-क्रिया का कार्य कभी भी बद नहीं होता। स्वस्थ और नीरोग अवस्था मे जो भोजन खाया जाता है, उसके पचाने का कार्य तो होता ही है, लेकिन जिन दिनों में शरीर अस्वस्थ होता है अथवा किसी भयानक रोग के आक्रमण करने पर भोजन करना बंद कर दिया जाता है, उस समय भी पाचन-क्रिया का कार्य बराबर होता रहता है प्रकृति का ऐसा नियम है।

भोजन से मिलनेवाली चर्बी का सचय यदि शरीर में न होता तो बीमारी के दिनों में अथवा उन दिनों में जब भोजन बंद कर दिया जाता है, पाचन-क्रिया का कार्य समाप्त हो जाना चाहिए था। इसलिए कि जैसे बिना ईंधन के चूल्हे की आग अपने आप कुछ देर मे ठण्ढी हो जाती है उसी प्रकार यदि हमारे शरीर मे ईंधन का काम करनेवाले भोजन के पदार्थ न पहुँचें तो अग्नि

क्षीण हो जायगी और कुछ दिनों में वह समाप्त हो जायगी। जीवन में किसी भी समय ऐसा होना अच्छा नहीं होता। इसीलिए प्रकृति ने उसका कार्य निरंतर चालू रखने के लिए इसका प्रयत्न किया है कि स्वस्थ और नीरोग दिनों में जो चर्बी प्राप्त हो, वह खर्च होने के साथ साथ संचित भी होती है। और नवीन चर्बी या पाचन क्रिया की अग्नि को प्रदीप्त करनेवाले दूसरे पदार्थ न मिलें, तो यह एकत्र चर्बी पाचन-क्रिया की आग को सजीव बनाये रखने की चेष्टा करे।

शरीर में त्वचा के अन्तर भाग में चर्बी का संचय रहता है। और वह सम्पूर्ण शरीर की गरमी की उसी प्रकार रक्षा करती है, जिस प्रकार कम्बल ओढ़ लेने से शरीर गर्म रहता है और यह चर्बी शरीर के कोमल अंगों को अनेक प्रकार की हानियों से सुरक्षित रखने का कार्य करती है। उसके द्वारा शरीर की रगें और नसें चैतन्य होती हैं। एवम् सम्पूर्ण शरीर में गर्मी पहुँचाने का काम करती हैं। चर्बी का यह विशेष कार्य है।

चर्बी पौष्टिक नहीं होती

चर्बी शरीर को गर्म रखने और आग पैदा करने का काम करती है। इस आग से पाचन-क्रिया को उत्तेजना मिलती है। लेकिन यह शरीर के लिए पौष्टिक नहीं होती। वनस्पति के द्वारा जो चर्बी या तेल प्राप्त होते हैं, उनकी अपेक्षा पशुओं से मिलनेवाली चर्बी उत्तम श्रेणी की मानी जाती है इसका कारण है। इसलिए कि पशुओं की चर्बी में विटामिन ए अधिक रहता है और विटामिन ए शक्ति और स्वास्थ्य के लिए अधिक उपयोगी है। साथ ही शरीर में पैदा होने वाले रोगों की उसके द्वारा रुकावट होती है। सभी प्रकार के तेल जिन्हें चर्बी भी कहते हैं, या तो विटामिन रखते ही नहीं और यदि उनमें विटामिन होता भी है तो बहुत कम मात्रा में, इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि तेलों के साथ-साथ भोजन में उन वस्तुओं का विशेष रूप से मिश्रण किया जाय, जिनमें सभी प्रकार के विटामिन होते हों। दूध मक्खन और घी में विटामिन ए होता है, परन्तु विशुद्ध रूप में इनका मिलना कठिन हो गया है। घी की अवस्था तो और दयनीय हो गयी है।

प्राचीन काल में घी, दूध और मक्खन की हमारे देश में अधिकता रही है। परन्तु इनका अभाव दिन-पर-दिन हमारे देश में बढ़ता जाता है। जिन पृष्ठों में सभी प्रकार के विटामिन बताये गये हैं, उनमें बताया गया है कि सभी प्रकार के रोगों से शरीर को सुरक्षित रखना विटामिन का कार्य होता है। इस प्रकार के विटामिन विशेष रूप में दूध में और दूध से बननेवाली वस्तुओं में पाये जाते हैं। परन्तु हमारे जीवन में उनका अभाव हो रहा है। यही कारण है कि हमारे देश में अनेक रोगों की वृद्धि हो रही है।

दूध, मक्खन और घी से मिलनेवाली चर्बी अपने कार्य के लिये सर्वोत्तम होती है। किंतु उसी अवस्था मे जब दूध मक्खन तथा घी विशुद्ध रूप में मिल सके। शहरों में दूध घी का व्यवसाय होता है। इस व्यवसाय के कारण खालिस दूध और घी का मिलना एक प्रकार से असम्भव-सा हो गया है। इसलिए कि उनमें व्यवसायियों के द्वारा जिन वस्तुओं का मिश्रण होता है, उनसे घी की उपयोगिता मारी जाती है। इसका परिणाम यह होता है, कि जो लोग दूध और घी नहीं खा सकते, उनको रोगी और निर्बल रहना ही चाहिए। किंतु जो लोग इतना सेवन करते हैं वे भी रोगों से अपने शरीर की रक्षा नहीं कर पाते। इसका एक मात्र कारण यह है कि दूध और घी जैसा मिलना चाहिए वैसा नहीं मिलता। इस अभाव के कारण देश का स्वास्थ्य दिन पर-दिन निर्बल होता जाता है और रोगों की वृद्धि होती जाती है।

दूध, मक्खन और घी के अभाव की पूर्ति दूसरे तरीकों से हो सकती है और वह तरीका केवल यही है कि मास, मछली और अण्डों का सेवन किया जाय। इस अभाव की पूर्ति के लिए अडे, मछली, मछली का तेल और मांसाहार में जिगर उपयोगी है। बहुत-से लोग धार्मिक विचारों के कारण इनका सेवन नहीं करते, मैं यहाँ पर इस बात की विवेचना नहीं करना चाहता कि भोजन की इन बातों से धार्मिक विचारों का कोई सबध है या नहीं। यहाँ पर मेरा यह उद्देश्य भी नहीं है। एक सही चीज की जानकारी लोगों को होनी चाहिए। उससे लाभ उठाना और न उठाना प्रत्येक व्यक्ति का अपना अपना कार्य है।

धार्मिक विचारों के कारण जो लोग मास, मछली और अण्डे का सेवन

नहीं कर सकते, उन्हें चाहिए कि दूध, घी और मक्खन के अभाव की पूर्ति वे तरकारियों के द्वारा करें। हरे पत्तों के शाक, सभी प्रकार के उपयोगी और लाभदायक होते हैं। टमाटर और गाजर इस अभाव की पूर्ति के लिए विशेषता रखते हैं। चना, गेहूँ, मटर तथा इसी प्रकार के कुछ अन्य अनाज भिगोकर और उनके अंकुरित होने पर, केवल खाने से भी बहुत कुछ लाभ होता है। इसमें वे सभी विटामिन आ जाते हैं जिनका तेलों में अभाव होता है। इतना कम होने पर भी, इन साधनों से विटामिन की पूर्ति नहीं होती इसलिए जहाँ तक सम्भव हो सके दूध और दूध से बनी हुई चीजों को भोजन के रूप में सेवन किया जाय।

चर्बी में पौष्टिक शक्ति का अभाव होता है। इसका अर्थ यह नहीं होता कि जिन वस्तुओं में चर्बी पायी जाती है, वे वस्तुएँ शरीर को पुष्ट नहीं बनातीं। ऊपर यह बताया गया है कि चर्बी के लिए दूध और दूध से बनी हुई वस्तुएँ मुख्य हैं और उस अवस्था में जब चर्बी पौष्टिक नहीं होती तो कभी भी यह न समझ लेना चाहिए कि दूध, मक्खन और घी में पौष्टिक गुण नहीं हो सकता। इस प्रकार की भूल करना एक अज्ञानता का काम है। दूध और उससे बनी हुई वस्तुओं में पौष्टिक गुण अधिक मात्रा में होते हैं। पौष्टिक गुणों का अभाव चर्बी में होता है। दूध, मक्खन और घी में अनेक प्रकार के तत्व पाये जाते हैं। चर्बी भी उनमें से एक है। चर्बी अपना काम करती है। दूसरे तत्व अपनी दूसरी उपयोगिता रखते हैं। इस प्रकार का भ्रम उत्पन्न होते हुए मैंने देखा है। साधारण अवस्था में इनको समझने में कभी भूल हो जाती है। इसीलिए यहाँ पर मैंने उसे स्पष्ट कर दिया है।

शरीर में चर्बी के कार्य

किसी भी प्रकार का तेल चर्बी कहलाता है। ऊपर लिखा जा चुका है कि चर्बी के दो रूप होते हैं, तरल और ठोस। तेल वास्तव में तरल चर्बी है। चर्बी और तेल में वास्तविक अर्थ का कोई अन्तर नहीं है। चर्बी कही जाय अथवा तेल। पशुओं से मिलनेवाली चर्बी चाहे वह मांस मछली अण्डे के रूप में हो अथवा दूध, मक्खन मलाई और घी के रूप में हो अधिक उपयोगी और काम की होती है। साधारणतया चर्बी और तेल को लोग अलग अलग

समझते हैं। अण्डे मास और मछली में जो चर्बी होती है, उसे लोग चर्बी समझते हैं और अनेक प्रकार के बीजों से बननेवाली चर्बी को लोग तेल समझते हैं। वास्तव में दोनों प्रकार की चर्बी तेल ही है। कोई भी तेल जलने का मुख्य रूप से काम करता है। किंतु उसके कार्य और भी होते हैं। यही अवस्था शरीर की भी है।

शक्कर, गुड़ और शहद में चर्बी नहीं होती। साधारणतया फलों में चर्बी का अभाव होता है। भोजन के जो पदार्थ प्रतिदिन खाने के काम में आते हैं, उनमें भी चर्बी होती है। सभी प्रकार की दालों, चनें और सोयाबीन नें यथेष्ट चर्बी पायी जाती है। मटर, गेहूँ, चिकने चावलों और साबूदाना में चर्बी बहुत कम होती है। बैंगन, फूल गोभी, पालक, शलजम काहू और गाँठ गोभी में अन्य तरकारियों की अपेक्षा अधिक चर्बी पायी जाती है।

विटामिन और शक्ति प्राप्त करने के लिये शरीर को इस चर्बी की जरूरत होती है। शरीर में चर्बी के जो कोई कार्य होते हैं, वे मुख्य रूप से इस प्रकार है।

१—चर्बी के द्वारा शरीर में कैलशियम के प्रयोग में सहायता होती है, यह कैलशियम शरीर निर्माण के कार्य में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। चर्बी के अभाव में कैलशियम का यथावत काम नहीं होता।

२—वास्तविक भोजन न मिलने के कारण, पेट और आँतों में जो खराबियाँ होती हैं, चर्बी उनसे रक्षा करने का कार्य करती है।

३—पर्याप्त मात्रा में चर्बी के न मिलने से पैरों और टाँगों में सूजन पैदा हो जाती है। पानी के एकत्र होने से ऐसा होता है और ओडीमा जैसे रोगों की उत्पत्ति होती है। हमारे देश में यह रोग आजकल साधारण हो गया है। चर्बी की अधिक मात्रा मिलने से शरीर में उसका प्रभाव काम नहीं करता।

४—अत्यन्त छोटे, जहरीले कीड़ों के काटने से पैदा होनेवाले विषैले प्रभाव को रोकने में चर्बी अद्भुत काम करती है। छूत की बीमारियों से रक्षा होती है। पशुओं की चर्बी केवल इसीलिए ऐसा नहीं करती कि उनमें विटामिन ए होता है। वरन इसलिए भी कि उस चर्बी में यह स्वाभाविक गुण होता है।

चावल, दालें और अनाज

मनुष्य के खाने की बहुत सी वस्तुयें हैं, सभी के गुण और स्वभाव अलग अलग होते हैं। विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों के सम्बन्ध में यथास्थान इस पुस्तक में प्रकाश डाला गया है।

यहाँ पर चावल, दालों और अन्यान्य अनाजों के सम्बन्ध में आवश्यक बातें लिखनी हैं। यों तो मनुष्य समय और सयोग के अनुसार जो कुछ पाता है, उसी को खाकर वह अपना काम चलाता है। खाने की बहुत सी चीजें बेबसी अवस्था में खायी जाती हैं। इसका अभिप्राय यह है कि जब उचित और योग्य भोजन का अभाव होता है तो उस समय जो कुछ प्राप्त होता है, उसी को भोजन मान लिया जाता है।

यदि विवशता न हो तो मनुष्य स्वादिष्ट और उपयोगी भोजनों की इच्छा रखता है। दूध, मट्ठा से लेकर शाक-भाजी, फल और सभी प्रकार के अनाज खाने के काम में आते हैं। शाकों और फलों की अपेक्षा अनाज सस्ता पड़ता है। इसीलिए सर्व-साधारण का सामान्य भोजन अनाज ही गिना जाता है।

खाने के अनाजों में भी भिन्न-भिन्न प्रकार के पदार्थ होते हैं। कुछ अनाजों से रोटी बनायी जाती है और कुछ अनाजों की दालें बनती हैं। इन अनाजों की अलग-अलग श्रेणियाँ हैं। भोजन पकाने में वे अलग-अलग चीजें काम करती हैं। अधिकाश अनाज तीन कामों में आते हैं—रोटी बनाने में, चावल बनाने में और दालों के बनाने में। रोटी बनाने के जितने अनाज होते हैं, उनमें भी परस्पर भिन्नता है। एक अनाज की रोटी दूसरे अनाज की रोटी से कई बातों में अन्तर रखती है। यही अवस्था उन सभी अनाजों की है, जिनको पीसकर आटा तैयार किया जाता है और उस आटे से रोटियाँ बनायी जाती हैं।

दालों और चावलों की भी यही बात है। सभी दालें एक सी नहीं होतीं और न चावल ही एक से होते हैं। जितने चावल होते हैं, गुण और स्वभाव में उनकी उतनी ही किस्में होती हैं। इसी प्रकार सभी प्रकार की दालों में भी अन्तर पाये जाते हैं। यहाँ पर सभी प्रकार के अनाजों के विभिन्न गुणों और स्वभावों पर प्रकाश डालने की चेष्टा की जायगी और अनाजों की एक एक

श्रेणी पर अलग-अलग विवेचना हो जायगी।

खाने के अनाज, जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, कई प्रकार के होते हैं और उपयोगिता के अनुसार उनके अलग-अलग मूल्य होते हैं। साधारण श्रेणी के लोग सस्ते अनाजों को खाकर अपना और अपने परिवार का काम चलाते हैं। जिनके पास रुपये पैसे का अभाव नहीं होता, वे लोग अधिक मूल्य की वस्तुयें खरीद कर उनका सेवन करते हैं। इस प्रकार भोजन के पदार्थों से लाभ उठाना बहुत कुछ रुपये पर निर्भर होता है। परन्तु बहुत सी बातें ऐसी भी हैं जहाँ रुपये-पैसे का अभाव काम नहीं करता। ज्ञान और जानकारी न होने के कारण भोजन के पदार्थों से जो लाभ उठाना चाहिए उसे लोग नहीं उठा पाते। इसलिए स्त्रियों और पुरुषों को समान रूप से इन बातों का ज्ञान और जानकारी होनी चाहिए।

चावल

खाने के जितने भी अनाज हैं, उनमें चावलों का सामान्य स्थान है। सभी देशों में चावल खाये जाते हैं। चावल खानेवालों की सख्या ससार के समस्त स्त्री पुरुषों में आधे से भी अधिक है। भारतवर्ष में एक चौथाई स्त्री पुरुषों का जीवन केवल चावलों पर निर्भर है।

साधारण रूप से चावल सभी देशों में पैदा होता है। जिन स्थानों की प्रकृति उष्ण होती है और पानी की अधिकता होती है, वहाँ चावल की विशेष पैदावार होती है। हमारे देश में मदरास, बम्बई, बंगाल और काश्मीर में चावल अधिक पैदा होता है। बर्मा में भी चावल की उपज अधिक मात्रा में होती है। जहाँ पर चावल की पैदावार अधिक होती है, वहाँ का भोजन विशेष रूप से चावल ही होता है। हमारे देश में बिहारी और बगाली लोग चावल खाने के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं। इसके दो कारण हैं। एक तो वहाँ पर चावलों की पैदावार अधिक होती है और दूसरा कारण जलवायु है। जलवायु के प्रभाव से ही चावलों का भोजन उन लोगों के अधिक अनुकूल होता है।

यू० पी०, पजाब और सी०पी० में भी चावल खाये जाते हैं। लेकिन बिहार और बगाल की तरह नहीं। बिहारी और बगाली चावलों को ही अपना भोजन विशेष रूप से मानते हैं। किन्तु अन्य प्रांतों में ऐसा नहीं है। विशेषकर युक्-

प्रान्त और पंजाब में लोग केवल चावल खाकर नहीं रह सकते। वहाँ का जलवायु कुछ इस प्रकार का है, जिससे बिना रोटियों के लोगों का गुजर नहीं हो सकता।

ऊपर यह बताया जा चुका है कि चावल कई प्रकार के होते हैं। खाने में कुछ चावल फीके और कुछ मीठे तथा स्वादिष्ट होते हैं। जो चावल अधिक स्वादिष्ट और मीठे होते हैं, वे महँगे बिकते हैं। सभी चावलों में पौष्टिक अंश एक से नहीं होते। कुछ चावल तो पौष्टिक भाग में बहुत निर्बल पाये जाते हैं। उनमें उपयोगी प्रोटीन, खनिज, लवण और विटामिन्स का अभाव होता हैं।

चावलों के सम्बन्ध में जो अनुसन्धान किये गए हैं, उनसे निम्नलिखित तथ्य चावलों के सम्बन्ध में माने जाते हैं—

१—अनाजों में जो प्रोटीन होता है, उसके मुकाबले चावलों में कम प्रोटीन पाया जाता है।

२—अनाजों में गेहूँ और मकई की प्रोटीन से चावलों की प्रोटीन मध्यम श्रेणी की होती है।

३—चावलों में विटामिन भी बहुत कम पाया जाता है।

४—चावलों में खनिज लवण की मात्रा बहुत कम होती है, उसमें कैलशियम, फासफोरस और सोडियम की मात्रा बहुत कम होती है।

५—मैदा में विटामिन्स की कमी होती है, लेकिन चिकने चावलों में श्वेत बारीक आटा अथवा मैदा से भी विटामिन कम पाए जाते हैं।

६—सफेद चावलों में विटामिन बी बहुत कम होता है और विटामिन ए, सी, डी, बिल्कुल नहीं पाए जाते।

सभी प्रकार की दालें

रोटी और चावल के साथ दालों का प्रयोग होता है। दालें अलग से बना र अकेली नहीं खाई जातीं। समय और आवश्यकता पड़ने पर वे खायी जा सकती हैं, लेकिन उनका प्रयोग रोटी और चावलों के साथ ही होता है। शाक-भाजी और विभिन्न तरकारियों के साथ भी रोटी और चावल खाये जाते हैं लेकिन दालों का उपयोग अधिक होता है।

कई अनाजों से दालें बनायी जाती हैं। हमारे यहाँ दालों के रूप में सात

बहुत से लोग मांस और अण्डे खाने से परहेज रखते हैं। इसके सिवा, दूध, दूध से बनी हुई वस्तुएँ, अण्डे और मास तथा मासजनित पदार्थ भाव में मँहगे मिलते हैं। निर्धन लोग, पैसों के अभाव में भी उनसे लाभ नहीं उठा सकते। इसलिए सभी श्रेणी के लोग दालों की प्रोटीन से लाभ उठाते हैं।

हमारे घरों में भोजन की वस्तुओं का जिस प्रकार सम्मिश्रण होता है, उससे सभी प्रकार की प्रोटीन एक बड़ी मात्रा में खाने वालों को मिल जाती है। भोजन में रोटी, दाल, चावल, शाक-भाजी या तरकारी, दूध अथवा दूध से बनी हुई दूसरी वस्तुओं का सहज और स्वाभाविक रूप से सहयोग तथा सम्मिश्रण होता है। इन पदार्थों के द्वारा सभी प्रकार की प्रोटीन प्राप्त होती है। किसी एक ही पदार्थ को लगातार खाने से जो प्रोटीन मिलती है, उसकी अपेक्षा शरीर के स्वास्थ्य और आरोग्य के लिए यह अधिक अच्छा है कि कई प्रकार के पदार्थों की प्रोटीन प्राप्त हो। इससे यह होता है कि सभी प्रकार की प्रोटीन मिलकर शरीर के संरक्षण में अधिक काम करती है।

दालों के बनाने का कार्य कई प्रकार से होता है। दालें स्वयम् दो रूप में घरों में बनती हैं।, एक तो दली हुई दाल और दूसरी समूची दालें। ऊपर लिखा जा चुका है कि तीन अनाज बिना दले हुए दाल का काम करते हैं। इनके संबंध में यह समझ लेना चाहिए कि दली हुई दालों की अपेक्षा समूचे अनाजों की दालें अधिक उपयोगी और हितकर होती हैं। मेरा यह अभिप्राय नहीं है कि दली हुई दालें न खायी जायँ। दोनों प्रकार से इन दालों का उपयोग होता है। भोजन को रुचिकारक बनाने के लिए भी यह आवश्यक है कि उनको बदल बदल कर बनाया जाय।

दालों का एक रूप और भी है। पानी में भिगोकर और दालों का छिलका निकालकर, जो दालें बनायी जाती हैं, वे धुली हुई दालें कहलाती है। उन्हें धोई हुई दाल भी कहते हैं। मूँग और उरद की दाल धुली हुई बराबर बाजारों में मिलती है। दालों के छिलका निकालने का कार्य घरों पर भी होता है। अधिकांश घरों में धुली हुई दालें बनायी जाती हैं और रुचिपूर्वक घर के लोग उन्हें खाते हैं।

धुली हुई दालों और छिलकेदार दालों के सेवन में अंतर होता है। साधा-

दालों के पकाने के संबध में इस प्रकार की जितनी भी बातें की जाती हैं, वे न केवल निरर्थक होती हैं, बल्कि पूर्ण रूप से हानिकारक होती हैं। मैं बार-बार कहूँगी कि दालों के संबध में ऐसा न किया जाय अन्यथा उनके द्वारा हमें जो पोषक और संरक्षक तत्व प्राप्त होते हैं, वे हमें मिल न सकेंगे। इस प्रकार उनके खाने से जो लाभ हो सकता है, उससे हमें वंचित होना पड़ेगा।

दालों को पकाने के समय, भली प्रकार बीनकर साफ कर लेना चाहिए। इसके बाद उनकी मिट्टी धोने के लिए थोड़े से पानी मे छोड़कर और साधारण तौर पर, मुलायम हाथों से, बहुत थोड़ा-सा मलकर उस पानी को फेंक देना चाहिए। ऐसा करने से दाल की मिट्टी निकल जाती है और वह पकाने के योग्य हो जाती है।

दाल को पकाने के पहले जो लोग उसे भिगोना ही चाहते हों, उन्हें चाहिए कि साधारण तौर पर पानी में धोकर और उसे साफ करके उतने ही पानी में उसे भिगोवें, जिसको फेंकना न पड़े। और आग पर चढ़ाने के समय वही पानी दाल के बनाने में काम आ जाय।

दालों के पकाने का कार्य

भोजन के पकाने के संबध में आवश्यक जानकारी की बातें मैं अन्यत्र इस पुस्तक मे लिखना चाहती हूँ। यहाँ पर कुछ चलती बातो का जान लेना आवश्यक है। इसलिए कि दालों का प्रसग चल रहा है। इसलिए उनके बनाने के संबंध में अत्यन्त सक्षेप में यहाँ कुछ लिखना आवश्यक है।

भोजन से जो पौष्टिक अश खाने वालो को मिलता है, उसके दो आधार हैं। एक तो यह कि उन वस्तुओ से भोजन बनाया जाय जिनमें उपयोगी तत्व प्राप्त होते हों और दूसरे यह कि उनको ऐसे ढग से बनाया जाय, जिससे उनके पौष्टिक तत्वों का क्षय न हो सके।

यह बात कभी न भूलनी चाहिए कि भोजन की उपयोगिता, पदार्थों की उपयोगिता से, बनाने और पकाने पर अधिक निर्भर है। पौष्टिक तत्व खाने के सभी पदार्थों में किसी न किसी रूप में और किसी न किसी मात्रा में होते ही हैं। यदि किसी एक पदार्थ में नहीं होते तो दूसरी वस्तुओं से उनकी पूर्त्ति होती है।

इस अवस्था में भोजन पकाने में अधिक सावधानी से काम लेना चाहिए।

उसे कुछ गर्म करके छोड़ना चाहिए। ठंडा पानी छोड़ देने से दाल में फीकापन आ जाता है और उसके स्वादिष्ट बनने की उतनी सम्भावना नहीं रह जाती, जितनी रहनी चाहिए।

दाल में पानी अधिक होने की अपेक्षा कम होना अच्छा है। यदि दोनों बातें न हों तब तो बहुत ही अच्छा है। पानी का अधिक होना और बनती हुई दाल में से निकालना अथवा तेज़ आँच करके पानी की अधिकता को जलाकर कम करने की कोशिश करना एक भूल करना है।

दाल के बरतन के नीचे अधिक तेज आँच होने से एक और हानि होती है। दाल का पानी खौल खौलकर बाहर गिरता है। यह और भी हानिकारक है। इसके द्वारा उसकी उपयोगिता नष्ट होती है और उसके पोषक अंश उससे निकल जाते हैं। यदि आग की तेजी अधिक नहीं है तो दाल को उबलकर बाहर न गिरना चाहिए।

अधिकांश लोग इस बात का ध्यान नहीं रखते। आग अधिक तेज़ कर देते हैं। दाल का पानी खौलता हुआ बाहर निकला करता है। इससे उसका पानी कम हो जाता है। दाल को गाढ़ी होते देखकर बनानेवाले उसमें पानी और डाल देते हैं। इससे कई प्रकार की हानियाँ होती हैं। उसका जायका भी ख़राब होता है, इसलिए दाल पकाते समय उतनी ही आँच देनी चाहिए, जिससे पकती हुई दाल बाहर न गिरे।

३– पकाते समय दाल के बरतन को ढककर रखना चाहिए, यदि ऐसा नहीं किया जाता और उसकी भाप निकलती रहती है तो उससे दो बातें पैदा होती हैं। एक तो यह कि उसके उपयोगी अंश भाप के साथ निकलकर बाहर चले जाते हैं। और दूसरी बात यह कि दाल के पकने में अधिक समय लगता है।

दालों को पकाने के संबंध में यदि इन तीनों बातों का ध्यान रखा जाय तो बनी हुई दाल सुरुचिपूर्ण तैयार होती है और उसके उपयोगी अंश सुरक्षित रहते हैं। इस प्रकार की दाल खाने से लाभ भी होता है और वह स्वादिष्ट भी मालूम होती है।

भोजन बनाने का कार्य ऊबने और घबराने का कार्य नहीं है। जो लोग ऐसा करते हैं, वे भोजन पकाना नहीं जानते। उनका पकाया हुआ भोजन कभी अच्छा

भी नहीं होता, यह काम धैर्य और संतोष का है।

सुपाच्य और गरिष्ठ दालें

दालों के संबंध में अंतिम जानकारी उनके पाचन के संबंध में है। मैंने लोगों को उनके संबंध में भूलें करते देखा है। इस प्रकार की भूलों का फल मनुष्य के लिए स्वयं घातक होता है।

अमृत के समान भोजन हमारे जीवन की रक्षा करता है और यदि नियमों के विपरीत चलकर भोजन में भूलें की जायँ तो वह विष के समान हमारे लिए घातक सिद्ध होता है। भोजन अमृत भी है और विष भी। यह हमारे ऊपर निर्भर है कि हम उसके किस रूप से लाभ उठावें।

भोजन के जो पदार्थ उपयोगी होने के साथ-साथ जितने ही सुपाच्य होते हैं, वे उतने ही हितकर होते हैं। जिनका पाचन सहज ही नहीं होता, वे निर्बल मनुष्य के लिए प्रायः अहितकर सिद्ध होते हैं।

दालों में अरहर की दाल, चना की दाल और मसूर की दाल पचने में कड़ी होती है। पाचन की दृष्टि से मूँग की दाल सब दालों से अच्छी होती है। उपयोगी तत्वों में भी उसमें किसी प्रकार की त्रुटि नहीं होती। स्वास्थ्य की निर्बलता में यदि भोजन लिया जा सकता है तो उसमें मूँग की दाल का स्थान आवश्यक है। अस्वस्थता के दिनों में कोई भी दूसरी दाल न खानी चाहिए। सभी दालों की प्रकृति भिन्न भिन्न होती है। शरीर की अवस्था, शक्ति और रोगों की प्रकृति को जानकर तथा समझकर भोजन की वस्तुओं का निर्णय करना चाहिए। ऐसा करने से कुछ भी अहित नहीं हो सकता।

अरहर की दाल हितकर तो है किंतु कुछ गरिष्ठ है। स्वास्थ्य ठीक होने पर भी किसी एक ही दाल को रोज खाना अच्छा नहीं है। इससे अरुचि उत्पन्न होती है और एक ही वस्तु अहितकर भी हो सकती है। इसलिए भोजन की वस्तुओं को सदा बदलते रहना चाहिए। दालों के बनाने का कार्य रोज होता है। इसलिए उसे जितनी जल्दी बदलने का क्रम रखा जायगा, उतना ही हितकर होगा।

दालों के हरे अनाज

मटर, चना, अरहर, उरद, मूँग और लोबिया आदि अनाजों में उस समय

प्रोटीन अधिक होता है, जब वे हरे होते हैं, सूखने के बाद इनकी प्रोटीन क्रमश कम होती जाती है। यदि उनके सूखे दाने पानी भिगोकर मुलायम होने पर बिना आग पर पकाए, चबाये या खाये जायँ तो उनसे अधिक प्रोटीन प्राप्त ह सकती है। दालों में नाइट्रोजन का अंश पर्याप्त मात्रा में होता है। इसीलि उनमें प्रोटीन अधिक पायी जाती है।

दालों में उष्णता उत्पादक शक्ति विभिन्न परिमाण में होती है। यह शक्ति प्रत्येक दाल में अलग-अलग मात्रा में होती है। यह माप कैलोमीटर में होती है उनका क्रम इस प्रकार है, मूँग में १५६६, मसूर में १५६०, लोबिया मे १५ मटर मे १५७४, मोठ मे १५६०, सेम में १५६४, उरद मे १६०५, अ में १६१७ और चना मे १६५५ कैलोमीटर उष्णता और शक्ति मानी गयी

अनाज

खाने के अनाज अनेक प्रकार के होते हैं—चावल, गेहूँ, जौ, म बाजरा, जुआर, चना आदि सभी खाने के अनाजो मे गिने जाते हैं। ये अनाज कारबोहाइड्रेटस के प्रमुख साधन हैं और सभी हमारे शरीर में ई का काम करते हैं। इन अनाजों में अन्य आवश्यक तत्वों का अभाव है। इसीलिए यह सभव नहीं है कि केवल इन अनाजों के ऊपर निर्भर रहा जाय। यदि ऐसा किया जाता है और दूसरे पदार्थों से अन्य पोषक सरक्षक तत्वों की प्राप्ति नहीं होती तो कुछ ही समय के बाद शरीर निर्बल लगता है और रोगों के आक्रमण आरभ हो जाते हैं। अनाजों में Chol and Cambu को छोड़कर सभी में चर्बी का अभाव होता है। Chole और Cambu ही अनाजों में दो चीजें ऐसी हैं। जिनमें चर्बी अच्छे रि में पायी जाती है। कुछ अनाजों में प्रोटीन खनिज लवण और विटामिन जाते हैं, किंतु उन सभी में कुछ खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। जैसे लोहा, सोडियम, फासफोरस आदि। इन अनाजों में विटामिन ए, सी और की बहुत कमी होती है। चावलों और श्वेत गेहूँ के आँटे में भी विटामिन बहुत थोड़ी मात्रा पायी जाती है। सभी प्रकार के अनाजों में विटामिन ई परिमाण में मिलता है।

अनाजों में गेहूँ, जौ, मकाई, बाजरा, जुआर आदि के आटे की रोटी

ती है, रोटी के लिए गेहूँ का आटा सर्वोत्तम होता है। इस आँटे में लस gluten) अधिक होता है, इसीलिए उसकी रोटी बनाने में आसानी होती । चना, बाजरा, जुआर और मकाई के आटे में लस की बहुत कमी होती है। सीलिए उससे रोटी बनाने मे कठिनाई होती है। चावल के आटे से रोटी नहीं नायी जा सकती, उसका कारण यह है कि उसमे लस का बिल्कुल अभाव ता है। इसलिए चावल साफ करके और धोकर उबाल लिए जाते हैं और स रूप मे वे होते हैं, उसी रूप मे उन्हें खाया जाता है।

हमारे देश मे जिन अनाजों की रोटियाँ बनायी जाती हैं, उनमें गेहूँ अधिक सिद्ध है और शहरो मे अधिकाश रूप मे उसी का प्रयोग होता है। सम्पन्न रिवारों में रोटी बनाने के लिए गेहूँ का आँटा ही काम मे आता है। उसकी नी हुई रोटियाँ खाने में स्वादिष्ट और मीठी होती हैं। सभी अनाजों की अपेक्षा हूँ के आँटे मे (gluten) अधिक होती है। इसके सिवा यदि गेहूँ और सका आटा स्वाभाविक रूप मे काम मे लाया जाय तो उससे प्रोटीन, चर्बी, रबोहाइड्रेटस, खनिज लवण और विटामिन्स प्राप्त होते हैं। गेहूँ मे विटामिन विशेष रूप से मिलता है।

गेहूँ की रोटी के साथ साथ, दाल, तरकारी, दूध और दूध से बनी हुई कोई वस्तु और फलों का प्रयोग बहुत लाभदायक होता है। जो लोग रोटियों के य पर्याप्त दूध या दूध से बनी हुई दूसरी चीजों का सेवन नहीं करते एवं तरकारियों का भोजन में अभाव रहता है, उनके शरीर प्रायः रोगी रहते । उसका कारण यह है कि गेहूँ के आटे में न तो पर्याप्त विटामिन ए होता है, र न उपयोगी प्रोटीन ही पायी जाती है। इसके सिवा कुछ खनिज लवण भी में यथोचित मात्रा मे नहीं पाये जाते।

गेहूँ का आटा ताजा अच्छा होता है। कुछ लोग पिसाकर रख छोड़ते हैं र कितने ही दिनों तक उसे खाया करते हैं। इससे उसकी उपयोगिता में बहुत र पड़ता जाता है लाभ की दृष्टि से यह आवश्यक है कि पिसा हुआ आटा उना ताजा होगा, उतना ही वह स्वादिष्ट, खाने में मधुर और हितकर होगा। ारों में मिलनेवाला आटा अच्छा नहीं होता, प्रायः यह अधिक दिनों का ा हुआ और रखा हुआ मिलता है। पुराना आटा खाने में अरुचिकर हो

जाता है और उसके विटामिन्स भी नष्ट हो जाते हैं। खाने की वस्तुओं में को
भी चीज़ ताजी लाभकर होती है, जितनी ही वह पुरानी होती जायगी, उतनी ह
उसकी शक्ति घटती जायगी।

हमारे देश में कितने ही स्थानों पर लोग आटे के साथ दूध, अथवा दूध रे
बनी हुई चीजों, हरी तरकारियों और फलों का सेवन करते हैं। इस प्रकार के
लोग डील डौल में लंबे-चौड़े, मज़बूत और शक्तिशाली पाये जाते हैं।

भोजन में मैदा का भी प्रयोग होता है। यह मैदा गेहूँ के आटे से तैया
किया जाता है, आटे की मशीनों में बारीक से बारीक पीसकर मैदा बनाया जा
है। इसकी तैयारी का काम हमारे देश में भी होता है और दूसरे देशों से भ
हमारे देश में यह आता है जो बाजारों में बिकता है। पूड़ी-कचौड़ी से ले
अनेक वस्तुएँ उसके द्वारा बनायी जाती हैं। कुछ लोग कभी-कभी मैदा की रो
भी बनाकर या बनवाकर खाते हैं। मैदा सदा गरिष्ठ होता है। इसमें विट
की मात्रा बहुत कम हो जाती है। लस अधिक होने के कारण उससे जो ची
बनायी जाती हैं, ये सभी देखने मे बहुत सुंदर लगती हैं। लेकिन शरीर के लि
सर्वथा हानिकारक होती हैं। मैदा जितना ही पुराना होगा, उतना ही
कारक होगा।

गेहूँ मे जो उत्तम कोटि की प्रोटीन होती है, वह और खनिज ल
का अधिकांश भाग एवम् विटामिन्स उस समय नष्ट हो जाते हैं, जब उसका
तैयार किया जाता है। इस अवस्था में मैदा (Whit flour) गेहूँ
आटे के मुकबिले मे अत्यन्त निर्बल और अनुपयोगी होता है। इतना ही न
बल्कि इसकी उपयोगिता चावल, बाजरा Cholam, Cambu और जौ
अपेक्षा भी बहुत कम होती है। गरिष्ठ और पोषक तत्वों के अभाव के
मैदा विशेष रूप से शरीर को रोगी बनाने का काम करता है। फिर भी हम
देश में इसका प्रयोग एक बड़े परिमाण मे होता है। मैंने देखा है कि गरीब
से लेकर पैसेवालों तक प्रायः अधिकांश घरों में मैदा के द्वारा खाने पीने
अनेक चीजें बनायी जाती हैं। मैंने यह भी देखा है कि यदि समय पर मैदा
मिल सके तो लोग एक बड़ा अभाव अनुभव करते हैं।

मैंने प्रायः सोचा है कि एक अयोग्य और हानिकारक वस्तु के संबंध में

कि ऐसा करने का कारण क्या है? वास्तव में सर्वसाधारण को इन वस्तुओं की वास्तविकता का ज्ञान नहीं होता, केवल इसीलिए उसका इतना अधिक प्रचार समाज में पाया जाता है। यदि लोगों को इसका ज्ञान हो तो वे ऐसी भूल न करें।

गेहूँ, ताप-उत्पादक भोजन का पदार्थ है। शीत प्रदेशों के लिए भोजन में गेहूँ का प्रयोग बहुत आवश्यक है। शीतकाल में गेहूँ या गेहूँ का आटा आवश्यक है। इसके द्वारा न केवल उष्णता उत्पन्न होती है। बल्कि गेहूँ शक्तिवर्द्धक भी है। प्रोटीन की किस्मों में गेहूँ में उपयोगी प्रोटीन (Suitalo Proteen) की कमी होती है। चावल के साथ गेहूँ के आटे रोटियाँ या चपातियाँ खाना आवश्यक है इसलिए कि उसके आटे में विटामिन बी अधिक होता है और चावलों में इसकी बहुत कमी होती है। इसलिए उस कमी की पूर्ति करने के लिए यह आवश्यक है कि आटे का प्रयोग किया जाय। यदि ऐसा न किया जायगा तो बेरी बेरी रोग का आक्रमण होना अधिक संभव होता है। गेहूँ के आटे की रोटियाँ इस रोग का निवारण करती हैं।

गेहूँ के आटे के बाद पोषक चीजों में दूसरा स्थान बाजरे का है। बाजरे में जो प्रोटीन होता है, वह बिल्कुल उसी कोटि की नहीं होता, जिस कोटि का गेहूँ का प्रोटीन होता है। बल्कि बाजरे में विटामिन ए और बी दोनों की अधिकता होती है। इसीलिए विटामिन बी के अभाव में होनेवाले रोगों से बाजरा खानेवालों की रक्षा होती है।

जमीन की मिट्टी के अनुसार कभी-कभी बाजरे के गुणों में अन्तर पड़ जाता है। जिस जमीन में बाजरा बोया जाता है, यदि उसकी मिट्टी निर्बल होती है तो उसमें पैदा होनेवाला बाजरा पोषक तत्वों में निर्बल हो जाता है। इस अवस्था में उसके खानेवालों को उन लाभों से वंचित रहना पड़ता है, जो लाभ अच्छे बाजरे के खाने से मिल सकते हैं। बाजरा अकेला भी, यदि वह अच्छी श्रेणी का होता है तो पौष्टिक गुणों में उपयोगी माना जाता है। उसके साथ दूध और दूध से बनी हुई चीजें, मछली, हरे शाक और फलों का खाना बहुत लाभकारी है।

भारतीय भोजन की त्रुटियाँ और उनका सुधार

भोजन करने की समस्या, मनुष्य-जीवन की एक प्रमुख समस्या है। इसमें संदेह नहीं, कि हमारे जीवन में अनेक समस्याएँ हैं। लेकिन उनका अस्तित्व उसी समय तक है, जब तक हमारा जीवन है। इस अवस्था में जिस समस्या से हमारे जीवन का सबंध है, वही हमारे जीवन की—मनुष्य जीवन की—सबसे बड़ी समस्या हो सकती है।

मनुष्य के जीवन की, उसके प्राणों की रक्षा, उसके भोजन से होती है। इतना ही नहीं, भोजन के साथ कुछ और भी रहस्य है। हमारे लिए इतना ही आवश्यक नहीं है कि हमको भोजन मिले, आवश्यक यह है कि हमको भोजन मिले, हमारी आवश्यकता के अनुसार।

जिस भोजन से हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती, उससे यदि बहुत थोड़े समय के भीतर जीवन का क्षय नहीं होता तो भी स्वास्थ्य का नाश होता है। यह किसी को कभी न भूलना चाहिए कि जीवन का महत्व, उसका सुख और सदुपयोग उसी समय तक है जब तक शरीर नीरोग हैं। रोगी शरीर कभी किसी को सुखी नहीं बनाता। उससे जीवन के उद्देश्यों की पूर्ति भी नहीं होती। इसलिए वही जीवन, जीवन कहलाता है, जो नीरोग होता है और जिसे रोगों के लिए रोना नहीं पड़ता। अन्यथा रोगी जीवन बिताने की अपेक्षा मृत्यु अच्छी होती है।

शरीर में रोग का आक्रमण अच्छा नहीं होता। यदि उसका सम्पर्क कुछ दिनों तक शरीर में रह जाता है तो फिर उसका हटाना और भी कठिन हो जाता है। इसलिए यह आवश्यक है कि प्रारंभ से ही ऐसा प्रयत्न किया जाय जिससे शरीर रोगी न होने पावे।

नीरोग जीवन का महत्त्व एक नीरोग व्यक्ति नहीं जानता, उसके सुख और महत्व को वह अधिक जानता है जो एक बार स्वास्थ्य को नष्ट कर देता है। वह दूसरे स्वस्थ व्यक्तियों को देखकर अपने हृदय में एक पीड़ा का अनुभव करता है। यहाँ पर एक घटना का स्मरण मुझे आता है। एक लड़की मेरे साथ पढ़ा करती थी। उस समय उसका स्वास्थ्य बहुत अच्छा था। सुन्दर स्वास्थ्य में ही सौन्दर्य होता है, इसके लिए वह आदर पाती थी।

पढ़ने का संबंध टूटने के बाद बहुत दिनों तक उस लड़की से मेरी भेंट नहीं हुई। अनेक वर्षों के बाद, संयोग से उससे भेंट हुई, उस समय उसकी जो हालत थी, उससे मैं उसे पहचान न सकी। अनेक बातों के बाद उसके गिरते हुए स्वास्थ्य पर कितनी ही बातें मैंने उसीके मुँह से सुनीं। उन बातों की यहाँ चरचा करना अनावश्यक है। उसकी एक ही बात मैं यहाँ पर लिखना चाहती हूँ, जो मुझे कभी भूल नहीं सकी। उसने दुखी होकर मुझसे कहा—अब तो मैं स्वास्थ्य और नीरोग जीवन के लिए बहुत कुछ निराश हूँ। जो कुछ मैं कर सकती थी, उसे उठा नहीं रखा। अब तो यदि मुझे कोई स्वस्थ बना दे तो मैं उसके बदले में अपनी सारी, सम्पत्ति भी दे सकती हूँ।

उसकी यह बात वास्तव में वेदना-पूर्ण थी। यह बात बहुत पुरानी हो गई है। उससे फिर मेरी भेंट नहीं हुई। लेकिन इस प्रकार की बातें अब मैं प्रायः सुना करती हूँ और अनेक प्रकार के दृश्य आँखों से देखा करती हूँ। रोगी जीवन से दुखी मनुष्य जीवन के सभी सुखों की आशा छोड़ देते हैं।

अत्यन्त खेद एवं दुख की बात यह है कि स्वास्थ्य और भोजन के संबंध में आवश्यक जानकारी की शिक्षा नहीं दी जाती। समाज में जिस शिक्षा का प्रचार है, उसमें आरोग्य जीवन का स्थान कम है। मैं इस बात को जानती हूँ कि आजकल शिक्षा में इन बातों को स्थान मिल रहा है। परन्तु बहुत साधारण रूप में। मनुष्य के जीवन में उसके आरोग्य का स्थान सबसे ऊँचा है। इसलिए उसकी आवश्यकता के अनुसार ही उसका ज्ञान मनुष्य को होना चाहिए।

शरीर की किसी प्रकार की त्रुटि भोजन से, संबंध रखती है। शरीर का गठन स्वास्थ्य, सौन्दर्य और कार्य करने की शक्ति भोजन की उपयोगिता पर निर्भर है। पुराने विचारों में इस सत्य की अवहेलना की गई है। जीवन के इस सत्य को उसे सीधे रूप में नहीं बताया गया। जिस ढंग से बताया गया है, उसका अच्छा परिणाम, उसके जीवन पर नहीं पड़ा। इसीलिए उससे वह कुछ लाभ नहीं उठा पाता।

भोजन के संबंध में अनेक प्रकार की आवश्यक बातें मैंने पिछले पृष्ठों में लिखी हैं। यहाँ पर कुछ इस प्रकार का स्पष्टीकरण आवश्यक जान पड़ता है कि मनुष्य के भोजन में किस प्रकार के खाद्य पदार्थों का मिश्रण और सहयोग होना

चाहिए। इसके अभाव में उसका दूषित परिणाम शरीर पर पड़ना स्वाभाविक हो जाता है।

भोजन के संबंध में साधारण त्रुटियाँ

समाज में ऐसे लोगों की संख्या बहुत है जो भोजन करना जानते हैं, परंतु इस बात को नहीं जानते कि भोजन किस प्रकार का करना चाहिए, इस प्रकार की भूलें उन्हीं से नहीं होतीं जो साधारण श्रेणी के होते हैं और दीन-दुर्बल जीवन बिताते हैं, बल्कि पढ़े-लिखे और सम्पन्न अवस्था के लोग भी भूलें करते हैं। इस प्रकार की भूलें इसलिए होती हैं कि उन्हें लोग जानते और समझते नहीं हैं।

लड़कों और लड़कियों के मुख से मैंने प्रायः सुना है—'हमें यह चीज अच्छी नहीं लगती, हम इसे न खायेंगे।" ऐसा मालूम होता है जो कुछ उन्हें खाने में स्वादिष्ट मालूम हो उसी को वे खाना चाहते हैं। माता पिता की और विशेषकर स्त्रियों की एक बड़ी भूल यह होती है कि ऐसे अवसरों पर वे लड़कों और लड़कियों के विचारों को बदलने का काम नहीं करते। बच्चे जो खाना चाहते हैं, वे उनको वही देना चाहते हैं। ऐसा करने से बच्चों को स्वयं अपनी त्रुटियों का ज्ञान नहीं हो पाता। इसका दूषित प्रभाव बच्चों के जीवन पर पड़ता है।

मैंने न जाने कितने परिवारों में बच्चों के स्वास्थ्य बिगड़ते हुए देखे हैं। कुछ बच्चे मिठाई खाने के अधिक आदी होते हैं और इस प्रकार की आदतें माता पिता की भूलों के कारण बच्चों में पड़ती हैं। गुड़, शक्कर, और इनसे बनी हुई चीजें अधिक खाने से उनके शरीर को हानि पहुँचती है। रोगों की उत्पत्ति होती है। बच्चों के शरीर दिन पर-दिन दुबले होते जाते हैं। बच्चों की माताओं से यदि कुछ कहा जाता है तो वे सहज ही कहने लगती हैं—हम क्या, करें। यदि ये वस्तुएँ न दी जायँ तो वे नहीं मानते, इसलिए देना ही पड़ता है।

इस प्रकार के उत्तर मूर्खता का परिचय देते हैं। वास्तव में एक सही बात का ज्ञान होना चाहिए। छोटे बच्चों को ज्ञान माता-पिता के द्वारा होता है। यदि बच्चों की भूलों पर माता-पिता कुछ नहीं कहते, उनको समझाते नहीं, और उनके अनुसार चलकर जब उनकी आदतों का उनके द्वारा समर्थन होता है, तो अपनी भूलों के लिए बच्चे उतने अपराधी नहीं होते, जितने कि उनके माता-पिता।

यह बारम्बार लिखा जा चुका है कि भोजन से मनुष्य को पौष्टिक अंश प्राप्त होते हैं। यदि पौष्टिक भोजन न मिले तो शरीर की आवश्यकताएँ पूरी नहीं होतीं और उनकी पूर्ति न होने पर शरीर में रोगों का जन्म होता है। इसलिए भोजन में उन सभी वस्तुओं को आवश्यकतानुसार मिलना चाहिए जिनसे शरीर को पौष्टिक तत्व प्राप्त होते हैं। यही पौष्टिक तत्व शरीर में रोगों के आक्रमण को रोकते हैं। इसलिए इनकी पूर्ति उसी दशा में सम्भव होती है, जब उसके अनुसार भोजन किया जाता है।

विभिन्न वस्तुओं का मिश्रण

यह लिखा जा चुका है कि मनुष्य का भोजन अनेक प्रकार की वस्तुओं से बनता है। कोई एक ही वस्तु उसका भोजन नहीं है। अच्छा से अच्छा और मूल्यवान से-मूल्यवान पदार्थ भी अकेले शरीर को सभी प्रकार के पौष्टिक गुण नहीं देता। इसलिए ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है जिसके द्वारा सभी आवश्यकताओं की पूर्ति होती हो।

इसके संबध में एक छोटा-सा उदाहरण देकर मैं स्पष्टीकरण करूँगी। शहरों के जीवन में अच्छे दूध का अभाव होता है। सन् १९४६ और ४७ की बात है, जीवन की अन्यान्य वस्तुओं के साथ-साथ दूध और घी महँगा तो हो ही गया था, शुद्ध रूप में उनका मिलना, कठिन नहीं तो कुछ असम्भव हो रहा था, इसलिए दूध की पूर्ति के लिए एक अच्छी बकरी के रखने का मैंने प्रयत्न किया। जो बकरी मैंने मँगवाकर अपने यहाँ रखी, वह शरीर से अत्यन्त स्वस्थ थी और काफी दूध देती थी। मुझे दूध का शौक था। इसलिए भली प्रकार खिला-पिलाकर उससे और भी अधिक दूध पाने की आशा की।

वह बकरी देहात से आई थी, जगल की चरनेवाली थी, अनेक प्रकार की पत्तियाँ उसकी खूराक थी। एक बड़े शहर में बकरियों का भोजन ही क्या हो सकता है, दूध की अभिलाषा में मैंने उसको अनाज देना आरम्भ किया। कई महीने के बाद बकरी के स्वास्थ्य में अन्तर पड़ने लगा। वह महीने में कई कई बार बीमार होने लगी। उसकी बीमारी में मैंने बड़ी तत्परता से काम लिया। कुछ दिन और बीते। उसकी बीमारी का क्रम बराबर बना रहा। फल यह हुआ कि उसके दूध से उसके पीनेवालों पर बुरा प्रभाव पड़ा। मेरे परिवार में एक

मनुष्य को पायरिया का आक्रमण हुआ, और धीरे-धीरे वह बढ़ने लगा। अनेक प्रकार के उपाय किए गए। मैंने स्वयं चेष्टा की परन्तु कुछ फल न निकला। जितने लोग उसका दूध सेवन करते थे, वे सभी किसी न किसी रोग से पीड़ित रहने लगे। इसके वास्तविक रहस्य को मैं स्वय बहुत दिनों तक समझ नहीं सकी।

लगभग पन्द्रह-सोलह महीने तक बकरी के साथ मेरे जीवन का संबंध चला। इसके बाद मेरा जी ऊब उठा। मैंने बकरी को देहात भेज दिया। दो-तीन महीने के बाद मुझे मालूम हुआ कि वहाँ पर बकरी कभी बीमार नहीं हुई। इसके साथ-साथ मेरे मकान में जिसे पायरिया का आक्रमण हुआ था, वह अपने आप ठीक हो गया। इस घटना पर मैंने बहुत कुछ सोचा और समझा। जो कारण छिपा था, वह आँखों के सामने आया।

बकरी का भोजन वास्तव में जंगल की पत्तियाँ हैं। शहर में आने पर उसका वास्तविक भोजन छूट गया और उसे अधिकांश रूप से अनाजों के ऊपर आश्रित होकर रहना पड़ा। इस अनाज के भोजन से बकरी को वे सभी पौष्टिक तत्व न मिल सके, जो उसे मिलने चाहिए थे। इस अवस्था में उसका लगातार बीमार होना स्वाभाविक था। जब बकरी स्वय नीरोग न थी तो उसका दूध नीरोग कैसे हो सकता है। इसीलिए उसके दूध का दूषित प्रभाव पीनेवालों पर पड़ा, बकरी के रोगों का उस समय अन्त हुआ, जब उसको वास्तविक भोजन मिलने लगा और परिवार के रोगी व्यक्तियों के रोगों के दूर होने का उस समय अवसर मिला जब रोगी बकरी के दूध से उनका संबंध छूटा।

बकरी के जीवन की एक छोटी-सी घटना भोजन के एक गंभीर तथ्य को हमारे सामने रखती है। अनाज बकरी या किसी दूसरे पशु के लिए हानिकारक नहीं है, लेकिन केवल उसके द्वारा उसका काम नहीं चला। अनेक प्रकार के तत्वों का अभाव उसके जीवन में चलने लगा। फल-स्वरूप उसको लगातार बीमार रहना पड़ा। ठीक यही अवस्था हमारे जीवन की है। कोई भी भोजन का पदार्थ ऐसा नहीं है, जिसकी उपयोगिता अकेले हमारे लिए काफी हो। इसलिए भोजन की वे सभी वस्तुएँ हमें मिलनी चाहिए जिससे हमारा शरीर पौष्टिक अंश प्राप्त करता हो, यदि कुछ दिनों तक एक ही पदार्थ खाने को

मिलेगा, तो पाचन-शक्ति निर्बल हो जायगी और दुर्बलता बढ़ जायगी। इसलिए सभी प्रकार के आवश्यक तत्व देनेवाले भोजन के पदार्थों का सेवन नित्य नियमित रूप से होना चाहिए।

प्रत्येक पदार्थ सदा नहीं मिलता। ऋतु के अनुसार पदार्थों का मिलना सम्भव होता है। इसलिए जिस ऋतु में जिस प्रकार की चीजें मिल सकती हैं, उनका उसी ऋतु में सेवन तथा उपयोग होना चाहिए। चिकने तेल अथवा चर्बी देनेवाले पदार्थों और माड़वाली वस्तुओं के द्वारा शरीर को कारबन प्राप्त होता है, इन दोनों प्रकार के पदार्थों से शरीर को एक ही लाभ नहीं होता। दोनों के पौष्टिक कार्य एक दूसरे से भिन्न होते हैं। चर्बीवाले पदार्थ पचने में भारी होते हैं, इसीलिए जिनकी पाचन-शक्ति निर्बल होती है वे स्निग्ध पदार्थों-चर्बीयुक्त वस्तुओं-को खाने में बहुत परहेज रखते हैं। चर्बी के न मिलने से चर्बी की आवश्यकता माड़ से पूरी होती है।

पाँच प्रकार के भोज्य पदार्थ

मनुष्य को भोजन में उन सभी पदार्थों की आवश्यकता है, जिनसे शरीर के पोषण के लिए पाँच प्रकार के तत्व प्राप्त होते हैं। प्रोटीन, कारबोहाइड्रेट्स, विटामिन्स, फैट और खनिज पदार्थ। कोई एक ही पदार्थ इन सभी तत्वों को नहीं देता। इसलिए कोई एक ही चीज भोजन का काम नहीं करती। यहाँ पर यह समझ लेने की आवश्यकता है कि ऊपर लिखे हुए तत्व भोजन की किन-किन वस्तुओं से प्राप्त होते हैं। इसका विवरण इस प्रकार है —

१ प्रोटीन देनेवाले पदार्थ—सभी प्रकार की दालें अरहर, मूँग, मटर, उरद, मसूर आदि सभी प्रकार के अनाज—गेहूँ, चना, सोयाबीन आदि। दूध और दूध से बनी हुई चीजें माँस-मछली, अण्डे इत्यादि।

(२) कारबोहाइड्रेट्स देनेवाले पदार्थ—गेहूँ, चावल, जौ, जुआर, दालें, दूध, शक्कर, गुड़, आलू, शकरकद, आम, केला, अंगूर, आदि।

(३) विटामिन देनेवाले पदार्थ—दूध, मक्खन, मछली, का तेल, अण्डे, दालें, सब प्रकार की हरी तरकारियाँ, फल और नींबू आदि।

(४) फैट अर्थात् चर्बी देनेवाले पदार्थ—मूँगफली, तिल, नारियल आदि के तेल, सोयाबीन, दूध, घी, मक्खन, अण्डे, मछली का तेल, पशुओं की चर्बी।

(५) खनिज पदार्थ—सभी प्रकार के नमक, हरी तरकारियाँ और फल।

हमारे देश में जिस प्रकार का भोजन चलता है, उसके संबंध में कुछ आवश्यक बातों को यहाँ समझ लेने की आवश्यकता है। भोजन में किस प्रकार वस्तुओं का मिश्रण होना चाहिए, इस जानकारी का लोगों में बहुत बड़ा अभाव है।

हमारे देश के भोजन में जो अनाज काम में आते हैं, उनमें गेहूँ का स्थान प्रमुख है। गेहूँ को पीसकर उसके आँटे को काम में लाया जाता है। इस आँटे में कारवोहाइड्रेट्स पर्याप्त मात्रा में होता है किंतु चर्बी का अभाव होता है, इसलिए उसके साथ उन पदार्थों का मिश्रण अत्यन्त आवश्यक है, जिनसे चर्बी प्राप्त होता है। गेहूँ के इस अभाव को दूर करने के लिए रोटियों को घी लगाकर और दालों में घी डालकर खाने की व्यवस्था है। जो ऐसा नहीं करते, उनके शरीर में चर्बी देनेवाले पदार्थों का अभाव रहता है। जानवरों की चर्बी केवल चर्बी ही नहीं देती। उससे विटामिन ए भी प्राप्त होता है। वनस्पति तेलों से चर्बी मिलती है लेकिन उनसे विटामिन ए नहीं मिलता।

गेहूँ के आँटे से जो चीजें बनती हैं, उनमें कई तत्वों का अभाव रहता है। उन तत्वों मे कुछ की पूर्त्ति तेल जातीय पदार्थों से हो जाती है, किंतु उनके बाद भी कुछ दूसरे तत्वों का अभाव रहता है। जिनको पूरा करने के लिए दूध आवश्यक होता है। इसलिए उसके साथ दूध खाने या पीने का नियम चला आता है। दूध से बननेवाली अन्य वस्तुएँ भी इसकी पूर्त्ति करती हैं। दूध अथवा उससे बननेवाली चीजों के अभाव में मास, मछली, अण्डे का प्रयोग किया जाता है। इसके सिवा हरे शाक खाना और फलों का सेवन भी आवश्यक होता है।

गेहूँ के आँटे में विटामिन ए का अभाव होता है। इसलिए उसके साथ भोजन में उन चीजों का मिश्रण होना चाहिए जिनसे विटामिन ए की पूर्त्ति होती है। इसके लिए दूध दही, मक्खन और घी उत्तम वस्तुएँ हैं। गेहूँ के आँटे के साथ दूध अथवा, दूध से बनी हुई चीजों को सम्मिलित कर लेने से न केवल उपयोगी प्रोटीन और चर्बी की पूर्त्ति होती है, बल्कि विटामिन ए बड़ी मात्रा में मिल जाता है।

गेहूँ के आटे में विटामिन सी का भी अभाव होता है। इसलिए गेहूँ के आँटे से बनी हुई चीजों को खाने के साथ साथ उन चीजों के खाने की भी आवश्य-

स्ता होती है, जिनसे विटामिन सी की पूर्ति होती है। इसके लिए हरे शाक सर्वोत्तम हैं, भिगोए हुए चनों से भी विटामिन सी प्राप्त होता है इसलिए यदि चने भिगोकर उन्हें चबाने का नियम बना लिया जाय तो भी उसके अभाव की पूर्ति होती है।

गेहूँ के आटे में विटामिन डी का भी अभाव होता है। इसलिए विटामिन डी को पूरा करने के लिए भी दूध, उससे बनी हुई चीजें, मछली का तेल और अण्डे का उपयोग आवश्यक है। इसके सिवा सूर्य की किरणों का स्नान और यदि संभव हो सके तो तेल की मालिश करके सूर्य की किरणों का स्नान लेने से विटामिन डी की पूर्ति होती है।

गेहूँ के आटे में खनिज पदार्थों का भी अभाव होता है, इसलिए उसके आटे के साथ भोजन में उन चीजों का मिश्रण आवश्यक है, जिनसे खनिज पदार्थों की पूर्ति होती है। इसके लिए हरी पत्तियों के शाक, फल और दूध सर्वोत्तम हैं।

गेहूँ के आटे में लौह तत्व अधिक मात्रा में नहीं होता। इसलिए जिस शाक-भाजी में यह तत्त्व अधिक मात्रा में पाया जाता है, उसका सेवन आवश्यक है।

आटे के साथ जो लोग ऊपर लिखी हुई वस्तुओं का मिश्रण अपने भोजन में नहीं करते, उनके शरीरों को कई आवश्यक तत्वों से वंचित रहना पड़ता है। और उसके परिणाम में हमारे शरीर के स्वास्थ्य और शक्ति का क्षय होता रहता है। इसलिए भोजन में उन सभी चीजों का मिश्रण उचित मात्रा में होना चाहिए, जिनसे आवश्यकता के अनुसार पौष्टिक तत्वों की समय पर प्राप्ति होती रहे और शरीर स्वस्थ तथा शक्तिशाली बना रहे।
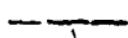
हरे शाक और तरकारियाँ

मनुष्य के भोजन में हरे शाक और तरकारियों का बहुत बड़ा स्थान है। प्रत्येक प्राणी को अपने भोजन में शाक भाजियों को अवश्य स्थान देना चाहिए।

हरे शाक से मनुष्य को अनेक प्रकार के जीवन-तत्व प्राप्त होते हैं। यदि उनका शरीर में अभाव होगा तो शरीर की जीवन-शक्ति क्षीण हो जायगी।

जो लोग फल, मेवे तथा अन्य मँहगी चीजें नहीं खा सकते, उन्हें हरे शाक और तरकारियों को अधिक मात्रा में खाकर, लाभ उठाना चाहिए। हरे शाक और तरकारियों से फलों की बहुत कुछ पूर्ति की जा सकती है।

तरकारियाँ दो प्रकार की होती हैं—एक तो वे जो जमीन के अन्दर रहती हैं और दूसरी वे जो जमीन के ऊपर रहती हैं। जो तरकारियाँ जमीन के अन्दर रहती हैं, जैसे-आलू, शलजम, सूरन, प्याज़, गाजर, लहसुन, मूली, अदरक आदि, इनको कंदमूल का नाम दिया जाता है। जमीन के ऊपर जो तरकारियाँ रहती हैं, उनमें पत्तीवाले हरे शाक और अनेक प्रकार की तरकारियाँ होती हैं। प्रत्येक शाक-सब्जी अपना-अपना गुण अलग-अलग रखती है।

शाकों और तरकारियों में शरीर को स्वस्थ रखने की शक्ति होती है। कुछ तरकारियाँ पौष्टिक तथा देर में पचनेवाली होती हैं। कुछ में विटामिन अधिक होते हैं। तरकारियों की अपेक्षा हरे शाक-पात बहुत शीघ्र पचते हैं और अधिक उपयोगी होते हैं।

शरीर के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है, वे सब शाक-भाजियों से प्राप्त किये जा सकते हैं। यदि उन्हें नित्य खाया जाय तो शरीर-पोषण में बहुत लाभ होता है। शाक-भाजियों में जल का अंश बहुत रहता है। और खनिज लवण भी पाया जाता है इसीलिए हरे शाक बहुत शीघ्र पच जाते हैं। शाक भाजी अधिक खाने से कोष्ठबद्धता दूर होती है। पेट साफ रहता है तथा मनुष्य चर्म रोगों से बचा रहता है।

प्रायः लोग कुछ तरकारियाँ अधिक और प्रतिदिन खाते हैं। जैसे—आलू, घुइयाँ, बैंगन आदि। इस प्रकार की तरकारियाँ अधिक न खानी चाहिएँ। सभी प्रकार के शाक-सब्जी खाना आवश्यक होता है। किसी एक ही चीज को नित्य खाना ठीक नहीं होता। इन तरकारियों की अपेक्षा पत्तीवाले हरे शाक यदि अधिक खाए जायँ तो बहुत लाभ होगा।

बहुत-सी तरकारियाँ बिना आग पर पकाये ही खायी जा सकती हैं। यदि ऐसा किया जाय तो वे बहुत लाभ पहुँचाती हैं। जो तरकारी-भाजी कच्ची खाई

जा सके, उसे कच्चा ही खाना चाहिए। कच्ची खानेवाली तरकारियाँ इस प्रकार हैं

मूली, गाजर, टमाटर, शकरकंद, प्याज, अदरक, ककड़ी, करमकल्ला, भिण्डी, चने का साग, हरे चने, हरे मटर, गोभी आदि। अभ्यास डालने से मुलायम कच्ची तरकारियाँ आसानी से खाई जा सकती हैं। परन्तु उसी अवस्था में, जब उनकी उपयोगिता का ज्ञान हो। प्रारंभ में इस प्रकार की वस्तुएँ अस्वादिष्ट जान पड़ती हैं। उस समय उनकी उपयोगिता का ज्ञान खाने के लिए विवश करता है और उसके बाद धीरे-धीरे उनके खाने की आदत पड़ने लगती है। कुछ दिनों के बाद उनके खाने की आदतें इतनी हो जाती हैं कि यदि वे चीजें न मिलें तो एक अभाव-सा मालूम होता है।

साग सब्जी के संबंध में जानने योग्य बातें

साग-सब्जी पकाने और खाने के संबंध में कुछ आवश्यक बातों की जानकारी बहुत आवश्यक है। वे इस प्रकार हैं:—

१—जो तरकारियाँ मुलायम होती हैं, उन्हें जहाँ तक हो सके, ताजी से ताजी खरीदना चाहिए। कई दिनों की बासी मुरझाई हुई तथा सड़ी गली, सस्ती समझकर न लेना चाहिए।

२—हरी पत्तीवाले शाक, जो देखने में खूब हरे और ताजे मालूम हों, खाना चाहिए।

३—आलू, घुइयाँ, प्याज, शकरकंद जैसी चीजें ही रखी रह सकती हैं परन्तु हरे और मुलायम साग खराब हो जाते हैं।

४—प्रत्येक तरकारी छीलकर न पकानी चाहिए। कड़े अथवा मोटे छिलकेवाली तरकारियाँ जैसे कटहल, घुइयाँ, जमीकंद, केला अथवा इसी प्रकार की अन्य तरकारियाँ, छीली जा सकती हैं। परन्तु लौकी, परवल, घीया तुरई, हरा कद्दू आदि मुलायम तरकारियों को कदापि न छीलना चाहिए। इनके छिलकों में पौष्टिक अंश होते हैं।

५—जो तरकारियाँ उबालकर पकाई जाती हैं, उनका विटामिन पानी में घुलकर निकल जाता है, इसलिए भाप में धीमी आँच पर पकाना अच्छा होता है, प्रत्येक साग-सब्जी में जल का अंश अधिक होता है, अतः स्वाभाविक रूप से अपने ही जल में धीमी आँच पर पकने से उनके जीवन तत्वों की रक्षा होती है,

६—कड़ी से कड़ी तरकारियाँ भी भाप के द्वारा गलाई जा सकती हैं। भाप से बने पदार्थ अत्यन्त स्वादिष्ट और लाभप्रद होते हैं। उनमें स्वाभाविक स्वाद होता है।

७—कुछ कड़ी और मोटे छिलकों की तरकारियों को छोड़कर, शेष सब तरकारियाँ और साग बिना पानी डाले ही बनाने चाहिए। ऊपर से पानी डालने से उनका असली स्वाद मारा जाता है। मैंने ऐसी कितनी ही स्त्रियों को देखा है जो भिंडी, बैगन, मूली सरसो का साग, तुरई, लौकी, परवल, मुलायम कद्दू, कच्चा करबूजा, ककड़ी तथा इसी प्रकार की अन्य तरकारियों को भी पानी डालकर बनाती हैं। ऐसा भोजन बनाने में बहुत बड़ी अज्ञानता है। इससे उन तरकारियों में फीकापन आ जाता है।

८—हरे साग-पात जैसे—पालक, सोआ-मेथी, बथुआ, चौराई, कुलफा, सरसों का साग, चने-मटर का साग और हरी पत्तियाँ आदि न तो उबालना चाहिए और न उनमे पानी डालकर पकाना चाहिए। इन सागों में स्वयं इतना पानी होता है जो उनको पकाने के लिए स्वय काफी होता है। इस प्रकार पानी देनेवाले सागों को जब किसी सूखी तरकारी के साथ मिलाकर बनाया जाता है तो उसका अपना पानी दोनों के लिए पर्याप्त होता है और ऐसा करने से बना हुआ साग रुचिकर होने के साथ-साथ लाभदायक हो जाता है। हरे साग यदि धीमी आँच पर पकाये जायँ तो उनमें पानी अधिक निकलता है। तेज आँच पर साग बनाने से उनके विटामिन जल जाते हैं।

९—करमकल्ला, फूलगोभी, गाँठगोभी, कच्चा केला, बन परवल, करेला, परवल, तुरई आदि मुलायम तरकारियाँ भी बिना पानी के पकाने से उपयोगी तथा स्वादिष्ट बनती हैं।

१०—प्रतिदिन बदलकर साग-सब्जी खानी चाहिए।

११—भोजन के साथ कोई-न-कोई पत्तीवाला साग अवश्य प्रतिदिन खाना लाभदायक होता है।

१२—जो लोग मास, मछली, अण्डे, फल तथा घी जैसे पदार्थ नहीं खाते अथवा खाने में असमर्थ हैं, उन्हें हरे शाक और तरकारियों को अधिक मात्रा में खाना चाहिए।

१३—कुछ तरकारियों में चर्बी की मात्रा अधिक होती है, जैसे बैंगन, घुइयाँ, फूलगोभी, शलजम, गाँठगोभी, पालक आदि, ऐसी तरकारियों को भी खाना आवश्यक है। शरीर में चर्बी के होने से छूत के रोगों से रक्षा होती है।

१४—किसी भी तरकारी को पकाते समय अधिक मसालों का प्रयोग करना ठीक नहीं। बहुत सी स्त्रियाँ अधिक मसालों के प्रयोग से तरकारियों को स्वादिष्ट बनाने की चेष्टा करती हैं। ऐसा करने से तरकारी का स्वाभाविक स्वाद नष्ट हो जाता है।

१५—कटी और छिली तरकारियों को पानी में धोते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि वे हाथों से खूब मल मलकर न धोई जायँ। ऐसा करने से उनके विटामिन कम हो जाते हैं।

गुण, कार्य और उपयोगिता

टमाटर—पका हुआ टमाटर देखने में जितना सुन्दर होता है, उससे भी अधिक खाने में वह रुचिकारक, स्वास्थ्य तथा जीवन तत्व देनेवाला होता है। टमाटर में विटामिन बी और सी अधिक होते हैं, इसमें एक विशेषता यह है कि सेब में जो गुण पाये जाते हैं, लगभग वे ही गुण टमाटर में पाए जाते हैं। इसलिए जो लोग सेब के गुणों से लाभ उठाना चाहते हैं, तथा शरीर को नीरोग रखना चाहते हैं, उन्हें टमाटर के मौसम में पके टमाटर, बिना आग पर पकाये अधिक मात्रा में खाना आवश्यक है।

अपने देश में टमाटर प्रायः सभी जगह खूब होता है। बहुत मँहगी चीज भी नहीं है। प्रत्येक मनुष्य इसे खा सकता है। किंतु इसको पकाकर खाने से इसके विटामिन्स नष्ट हो जाते हैं। लाल पके टमाटर ही उपयोगी होते हैं। टमाटर रक्त बढ़ानेवाला, रक्त में लाली पैदा करनेवाला, बहुत पाचक और अनेक प्रकार के रोगों को नाश करनेवाला होता है। नासूर (कैन्सर) के रोगियों के लिए यह बहुत लाभदायक है।

प्याज—तरकारी के पदार्थों में प्याज की भी गणना है। इसके द्वारा कितनी ही तरकारियाँ बनाई जाती हैं। प्याज का प्रायः अलग से कोई साग नहीं बनता। उसका प्रयोग दूसरे पदार्थों के साथ ही अधिक किया जाता है।

प्याज पौष्टिक गुणों के लिए प्रसिद्ध है। आग पर पकाकर खाने की अपेक्षा

कच्चा खाने से वह अधिक लाभदायक होता है। प्याज खाने से पाचन-शक्ति तीव्र होती है, शक्ति की वृद्धि होती है। वीर्य को गाढ़ा करने और शक्तिशाली बनाने में प्याज की अधिक प्रशंसा है। इसके खाने से मुख की कान्ति बढ़ती है, शरीर गोरा होता है, अनेक प्रकार के कीटाणु नष्ट होते हैं और आयु बढ़ती है।

चिकित्सा शास्त्र के अधिकारियों ने भी प्याज के गुणों को स्वीकार किया है और उसकी प्रशंसा करते हुए बताया है कि इससे विशेष रूप से धातु की वृद्धि होती है। प्याज स्निग्ध, शक्तिवर्द्धक कफनाशक और वातनाशक है। प्याज खाने में स्वादिष्ट, चरपरा और रुचिकारक होता है। वमन से होनेवाले उत्पातों को यह शांत करता है, बल और बुद्धि की वृद्धि करता है। यह गरम नहीं होता। श्वेत प्याज की अपेक्षा लाल प्याज अधिक लाभदायक होता है। लाल प्याज शीतल और पित्त नाशक है। गले की सूजन में फायदा पहुँचाता है।

अनेक प्रकार के रोगों में प्याज उपयोगी सिद्ध हुआ है अनेक प्रकार के अवसरों पर इसके द्वारा लाभ उठाये जाते हैं। शारीरिक कष्टों में प्याज के प्रयोग इस प्रकार होते हैं :—

१—गठिया रोग में सरसों के तेल के साथ प्याज का रस मिलाकर और गरम करके मालिश करने से लाभ होता है।

२—खुजली में प्याज का रस मलने से खुजली शांत होती है।

३—प्याज़ का रस रोगों के कीटाणुओं का नाश करता है।

४—बिच्छू जैसे विषैले कीड़ों के विष को शांत करने के लिए प्याज़ का रस मला जाता है।

५—कच्चे फोड़ों को पकाने के लिए प्याज की पुल्टिस बाँधी जाती है।

६—दाँत में कीड़ा लग जाने पर प्याज के बीजों को बारीक पीसकर दत-मंजन किया जाता है। प्याज के बीज को कलौंजी कहते हैं।

७—खून को बंद करने में प्याज बहुत उपयोगी माना जाता है।

८—रुधिर-स्राव की किसी बीमारी में प्याज़ कई प्रकार से खिलाया जाता है। कच्चे प्याज के रस के सिवा आग पर पकी हुई प्याज की तरकारियाँ भी खिलाई जाती हैं। इससे बहुत लाभ होता है।

९—नकसीर के फूटने पर प्याज का रस बहुत लाभ पहुँचाता है।

१०—प्रमेह के रोग में प्याज के बीज बहुत काम करते हैं।

११—प्याज का रस अथवा गूदा रोगों में लाभ पहुँचाता है।

१२—हिचकी और दमे की बीमारी में भी प्याज अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है।

१३—पेट के रोगों में और विशेषकर पेचिश में प्याज से बहुत लाभ होता है।

१४—नींद के न आने पर प्याज का रस पिलाने से निद्रा आ जाती है।

१५—लू के दिनों में प्याज की उपयोगिता को सभी मानते हैं, खाने से ही नहीं, प्याज साथ रखने से लोगों का विश्वास है कि लू नहीं लगती।

१६—हैजे के रोग में प्याज को लोग बड़ी विशेषता देते हैं। बहुत से लोगों का विश्वास है कि जिस घर में प्याज होता है, वहाँ हैजे का आक्रमण नहीं होता। हैजे की बीमारी में, रोग की आवश्यकता को देखकर प्रत्येक पाँच मिनट बाद दस मिनट बाद अथवा पन्द्रह मिनट के बाद एक छोटा चम्मच प्याज का रस रोगी को दिया जाता है। जब तक वमन बंद न हो जाय, इसी क्रम से प्याज का रस बराबर पिलाना चाहिए। वमन बंद होने पर प्याज का रस आध-आध घण्टे के बाद देना चाहिए। आवश्यकता कम होने पर चार-चार और छः-छः घण्टे के बाद भी प्याज के रस की आधी मात्रा दी जाती है।

१७—जिनको कब्ज की शिकायत रहती है, उनके लिए प्याज अधिक लाभदायक है।

१८—बवासीर के रोग में भी प्याज का रस दिया जाता है।

१९—प्याज को सिरके में डालकर तिल्ली के रोगी को खिलाने से उसका रोग दूर होता है।

२०—प्याज का रस कुछ गुनगुना करके कान में डालने से कान की पीड़ा शान्त होती है।

२१—कान से मवाद आने पर प्याज का रस डालना बहुत लाभकारी होता है। कुछ अनुभवी लोगों का कहना है कि पुराने से पुराना बहता हुआ कान प्याज के रस से नीरोग हो सकता है। यदि इसमें कुछ अधिक दिन लगें तो उससे कभी निराश न होना चाहिए। चाहे जितने दिनों का कान का पुराना रोग हो, मवाद आता हो और सुनाई कम पड़ने लगा हो, यदि विश्वासपूर्वक लगातार

कान में प्याज का रस छोड़ा जायगा तो निस्सन्देह उससे लाभ होगा। इसका प्रयोग इस प्रकार होता है, कान को नित्य पिचकारी से धोकर प्याज का ताजा रस दिन में एक या दो बार रोज डालना चाहिए। यदि कुछ दिनों तक लाभ न मालूम हो तो घबराना न चाहिए। कान के किसी प्रकार के रोग में प्याज का रस एक उत्तम औषधि है।

धार्मिक विवेचना से प्रेरित होकर, हिन्दुओं मे बहुत से लोग प्याज से परहेज करते हैं। मैं नहीं समझती कि प्याज से और धर्म-अधर्म से क्या सबंध है। यह भी नहीं जानती कि जो लोग परहेज करते हैं वे किस आधार पर और क्या सोचकर करते हैं।

हिन्दुओं के कुछ पुराने धार्मिक ग्रन्थों में प्याज खाने का निषेध किया गया है परन्तु उनमें भी केवल उसकी गंध को ही बुरा कहा गया है। इसके अतिरिक्त और कोई बात नहीं मालूम होती। इसमे सदेह नहीं कि प्याज की तीव्र गन्ध न तो खानेवाले को अच्छी मालूम होती है और न दूसरों को। इसलिए उसे खाया ही न जाय, यह तो समझ में नहीं आता। प्याज के संबध में ऊपर जितने गुण बताये गये हैं, उनके सिवा और भी उसके कुछ प्रयोग हैं, जिनमें उसकी विशेषता काम करती है। इसलिए एक दुर्गन्धि के कारण प्याज के सारे गुणों से लाभ न उठाया जाय, यह बात तर्कपूर्ण नहीं जान पड़ती। प्याज की गन्ध को रोका भी जा सकता है, यह कुछ बहुत मुश्किल बात नहीं है। परन्तु जिन लोगों ने उसके खाने से परहेज कर रखा है, यदि वे केवल एक परहेज की ही बात जानते हैं तो उसका कुछ उपाय नहीं है।

आलू—शरीर के पोषण के लिए तथा सभी उपयोगी तत्वों के प्राप्त करने के लिए आलू उपयोगी होता है। यह कुछ देर में पचता है। किन्तु पुष्टिकारक एव बल देनेवाला होता है। आलू प्रायः सभी लोग खाना पसद करते हैं। इसके खाने से तबीयत नहीं ऊबती। रोजाना भोजन के साथ आलू का साग सभी पसद करते हैं।

निर्बल तथा कमजोर पाचन-शक्तिवालों को आलू कम खाना चाहिए। यह रोगियों के लिए हानिकारक है। अधिक और नित्य खाने से अपाचन की शिकायत हो सकती है।

आलू में श्वेतसार (कारबोहाइड्रेट्स) अधिक होता है। इसमें उपयोगी विटामिन्स पाये जाते हैं। आलू में नमक भी होता है। प्रोटीन की मात्रा कम होते हुए भी आलू शक्तिवर्द्धक होता है। इसके द्वारा मूत्र तथा स्कर्वी जैसे रोगों में बहुत लाभ पहुँचता है।

आलू सभी मौसिमों में मिलता है। इसे प्रत्येक मनुष्य खरीदकर खा सकता है। अन्य तरकारियों की अपेक्षा कुछ सस्ता भी पड़ता है। आलू के साथ यदि अन्य तरकारियों को मिलाकर खाया जाय तो और भी अधिक अच्छा होता है।

मूली—इसमें जल का अंश अधिक होता है। यह खाने में स्वादिष्ट होती है। मूली पाचक, रक्त को शुद्ध करनेवाली, विषैले कीड़ों को मारनेवाली तथा स्वास्थ्यप्रद होती है। इसका कच्चा खाना बहुत अच्छा है।

हरे शाक—इनमें खनिज लवण अधिक रहता है। क्षार पैदा करनेवाले सभी तत्व शाक भाजियों में पाए जाते हैं। सब प्रकार के पत्तीवाले हरे शाकों में लोहा (Iron) पाया जाता है जो रक्त को शुद्ध और लाल बनाने का कार्य करता है, शरीर में इसकी अत्यन्त आवश्यकता है।

पालक, मूली, गोभी, ककड़ी आदि में फास्फोरस अधिक रहता है। करम-कल्ला, फूल, गोभी शलजम आदि हरी और मुलायम तरकारियों में भी अनेक प्रकार के पौष्टिक गुण होते हैं, इसीलिए भोजन में उनकी उपयोगिता होती है।

नेनुआ—हलकी, पाचक और स्वादिष्ट होती है। जिनको पाचन की शिका-यत होती है, जिनके शरीरों में किसी प्रकार के विकार उत्पन्न होते हैं, उनके लिए तुरई का शाक देना अच्छा होता है। रोगों की साधारण अवस्था में इसका शाक दिया जाता है। इससे किसी प्रकार की हानि नहीं होती।

करेला—यह स्वास्थ्यप्रद होता है। पित्त को शान्त करता है इसके बनाने में प्राय. भूल की जाती है। उबालकर बनाने से उसके जीवन-तत्व (Protein) जल में आ जाते हैं और जब वह जल फेंका जाता है तो बेकार चले जाते हैं। इसलिए करेलों को बिना उबाले ही बनाना चाहिए। करेलों के बनाने में मसालों का अधिक प्रयोग अच्छा नहीं होता। साथ ही इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि वे धीमी आँच पर पकाये जायँ।

लौकी और परवल की तरकारी पाचक होती है। शरीर की किसी भी अवस्था में इनसे किसी प्रकार की हानि नहीं होती। परवल की तरकारी स्वादिष्ट और रक्तवर्द्धक होती है।

हमारे भोजन की जितनी भी वस्तुएँ हैं, शाक और तरकारियों का उनमें उपयोगी स्थान है। यदि हमारे भोजन में शाकों और तरकारियों का अभाव रहता है तो वह अभाव दुर्बलता और रोगों के आक्रमण होने का कारण बनेगा। इसलिए शाकों और तरकारियों के महत्व को कभी न भूलना चाहिए।

तरकारियों में शाकों और विशेषकर हरी पत्तियों के शाकों का स्थान ऊँचा है। शरीर को आवश्यक तथा पौष्टिक तत्व देने में वे अधिक लाभकारी सिद्ध हो चुके हैं। इसलिए शाकों और तरकारियों का महत्व हमारे भोजन में दिन पर दिन बढ़ता जाता है। समाज का अध्ययन करने के बाद यह मालूम हुआ है कि साधारण लोग प्रायः शाकों और तरकारियों की अवहेलना करते हैं। साधारण समाज की दृष्टि में शहरों के हलवाइयों की मिठाइयाँ जो अधिक मूल्य पर बिकती हैं अधिक आदरपूर्ण होती हैं और शाकों की भाँति जो वस्तुएँ वास्तव में अधिक महत्वपूर्ण होती हैं, उनकी उपेक्षा की जाती है यह सब इसलिए होता है कि सत्य और वास्तविकता का ज्ञान नहीं है। हलवाइयों की मिठाइयाँ लाभ के लिए नहीं होतीं, होती हैं स्वाद के लिए और शरीर को रोगी बनाने के लिए।

शाकों में हरी पत्तियों के शाकों का महत्व अधिक है। इसे कभी न भूलना चाहिए। भोजन के पदार्थों में कुछ संरक्षक पदार्थ कहलाते हैं। उन पदार्थों में हरी पत्तियों के शाक भी हैं। इसलिए इन शाकों को संरक्षक भोजन के रूप में समझा जाता है। इनके ऐसा समझने के कारण हैं और वे इस प्रकार हैं:—

(१) हरी पत्तियों के शाकों में खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। जिसका खाने के अनाजों में अभाव होता है।

(२) इनके द्वारा रक्त की प्रतिक्रिया को स्फूर्ति मिलती है। और मासाहार अथवा अन्नाहार से जो व्यतिक्रम पैदा होते हैं, हरी पत्तियों के शाक उनको रोकने का काम करते हैं।

(३) हरी तरकारियों के शाकों में उपयोगी प्रोटीन पाई जाती है जो अनाजों की कम उपयोगी प्रोटीन को कार्यान्वित करने के लिए शरीर को उत्तेजित करती है

(४) हरी पत्तियों के शाक विटामिन ए, बी और सी प्राप्त करने के प्रमुख साधन हैं।

(५) इन शाकों की पत्तियों और उनके निकटवर्ती अंगों में उन तत्वों का सम्मिश्रण होता है जो आँतों को अपना कार्य करने के लिए उत्तेजित करते हैं।

इस प्रकार शाकों की उपयोगिता अनेक रूप में हमारे जीवन में है । उनका जितना अधिक आदर होगा, उतने ही वे हमारे शरीर के सहायक और उपयोगी सिद्ध होंगे। छोटे बच्चों को यदि कच्ची हरी पत्तियों के शाकों का रस निकालकर पिलाया जाय तो वह रस उनके स्वास्थ्य तथा अनेक रोगों मे बहुत लाभदायक होता है। जिनके रस निकालकर बच्चो को पिलाए जासकते हैं, वे इस प्रकार हैं– प्याज, पालक, मूली के पत्ते, कुलफा, चौलाई और टमाटर आदि। प्याज़ का रस रक्त को बढ़ाने और शक्ति की वृद्धि करने के लिए प्रसिद्ध है। ऊपर लिखे हुए हरी पत्तियों के शाक और रस बच्चों को 'बढ़े हुए यकृत (Lover) के लिए बहुत उपयोगी हैं। टमाटर का रस तो रोगी और नीरोग दोनों अवस्थाओं में अत्यन्त उपयोगी है। इन शाकों की श्रेष्ठता का हमें जितना ही ज्ञान होगा उनसे उतना ही लाभ उठाया जा सकता है।

हरे फल और सूखे मेवे

वर्तमान समय में हमारे देश में भी हरे फलों और मेवों का महत्व बहुत बढ़ रहा है। नवीन खोजों द्वारा फलों के महत्त्व को वैज्ञानिकों ने सिद्ध किया है। जिन लोगों ने इसके महत्व को जाना और समझा है, वे उससे लाभ उठाते हैं और अन्य भोजनों के साथ साथ फलों को आदरपूर्ण स्थान देते हैं।

हमारे जीवन में फलों का बहुत महत्व है, लेकिन बहुत से मनुष्यों को उस महत्व की वास्तविक जानकारी नहीं होती। लोग नहीं जानते कि फलों के खाने से क्या क्या लाभ होते हैं। उनको खाने की कितनी आवश्यकता है, इसे वे नहीं समझते। इस परिच्छेद में फलों के संबंध में मैं कुछ आवश्यक बातें लिखूँगी।

यद्यपि फलों में पोषक तत्व (Protein) अधिक नहीं होता। परन्तु श्वेतसार, शर्करा जातीय तत्व, खनिज, लवण, तैल तथा विटामिन अधिक होते

हैं। पोषक होने के अतिरिक्त रोगों को दूर करने और पाचन-क्रिया को ठीक रखने में फल बहुत अच्छा प्रभाव रखते हैं।

ऋतु के अनुसार (Seasonable) फलों मे कच्चे की अपेक्षा पके फलों में पाचन-शक्ति अधिक होती है। कच्चे फलों में जो स्टार्च होता है, उनके पक जाने पर वह स्टार्च एक प्रकार की शक्कर के रूप में हो जाता है जिसके पचाने में कोई कठिनाई नहीं होती। यह शक्कर शरीर को शक्ति (Energy) देती है। अगूर में यह शक्कर १४ से २० प्रतिशत, अन्य पके हुए फलों में लगभग २० प्रतिशत तथा खजूर में ५० प्रतिशत तक पाई जाती है।

एक विदेशी अन्वेषक का कथन है कि फलों में पाई जानेवाली शक्कर का अनुमान हम फलों के ऊपरी भाग को देखकर लगा सकते हैं। जो फल लालिमा लिए हुए भूरे रंग के होते हैं, तथा जो फल पीले छिलके के होते हैं, उनमें यह शक्कर अधिक होती है। जो फल केवल लाल छिलकों के होते हैं, उनमें यह शक्कर साधारण मात्रा में पाई जाती है। फलों की यह शक्कर बहुत पाचक होती है, इसके सिवा पोषक और शक्तिवर्धक भी होती है।

फलों में सभी विटामिन मिलते हैं। विशेषकर तीन प्रकार के विटामिन—ए, बी और सी अधिक होते हैं। फलों में कारबोहाइड्रेट्स और जल अधिक रहता है। कच्चे फल कुछ खट्टापन लिए हुए होते हैं। ताजे फलों में ८० से ९० प्रतिशत तक जल का अंश होता है।

फलों का सेवन करते रहने से कोष्ठबद्धता नहीं होने पाती। शरीर और मस्तिष्क को पुष्ट बनाने, रक्त बढ़ाने और उसे शुद्ध करने की फलों में अद्भुत शक्ति होती है। यह कहना बिल्कुल भूल है कि दूध तथा अन्न की अपेक्षा फलों में शक्ति कम होती है। अधिक मात्रा में फलों का सेवन करने से मनुष्य की आयु अधिक होती है। शरीर में सजीवता, फुर्ती, जीवन-शक्ति और उष्णता रहती है। चाहे वह किसी भी अवस्था का मनुष्य हो।

फल कोई भी हो, सभी में कोई न कोई गुण पाया जाता है। किसी भी फल से हानि कभी नहीं हो सकती, यदि वह ठीक तौर से खाया जाय। केवल फलों के द्वारा कितने ही रोग दूर किए जा सकते हैं। किन्तु तोला, दो तोला चख लेने से कोई लाभ नहीं है। रुचिपूर्वक और लाभ को समझते हुए खाना ही उपयोगी होता है।

मनुष्य के भोजन में अन्न प्रधान है। इसके सिवा जिस प्रकार मनुष्य शरीर के लिए दूध, साग-सब्जी नित्य आवश्यक हैं, उसी प्रकार फल खाना भी बहुत ज़रूरी है। हमारे भोजन में फलों का बहुत बड़ा स्थान है। जो लोग फलों के महत्व को नहीं जानते, वे उस पर ध्यान नहीं देते। किंतु जो लोग फलों के गुण को समझते हैं अथवा जिन्होंने उसका अध्ययन किया है,वे उनको महत्व देते हैं और यही कारण है कि आज के सभ्य और शिक्षित समाज में फलों को बहुत महत्व दिया जाता है तथा उन्हें खाकर लाभ उठाया जाता है।

फल सभी जगह पैदा होते हैं। किसी प्रान्त में कोई फल अधिक होता है और किसी में कोई। लेकिन होते सब जगह हैं। जो फल जिस जगह अधिक पैदा होता है यह वहाँ दूसरी जगह से सस्ता मिलता है। जो फल दूसरे प्रान्तों से हमारे यहाँ आते हैं, वे बहुत मँहगे मिलते हैं। ऐसी दशा में अपनी स्थिति के हिसाब से खरीदकर खाने चाहिए। हर एक मौसम में कोई न कोई फल होता रहता है। उस समय उनसे लाभ उठाना चाहिए। कोई भी फल ऐसा नहीं होता जो अपना कोई गुण न रखता हो। मनुष्य शरीर के लिए जिन तत्वों की आवश्यकता है वे तत्व फलों में किसी न किसी रूप में पाये जाते हैं।

यह ठीक है कि प्रत्येक मनुष्य के लिए फलों का खाना सुविधाजनक नहीं हो सकता, इसके अतिरिक्त फलों के महत्व और उसकी उपयोगिता को न जानने के कारण भी लोगों का ध्यान इस ओर नहीं जा सकता, ऐसी दशा में जिन लोगों को सुविधा भी होती है तो वे उसका उपयोग करना नहीं जानते।

फलों में अनेक गुण होते हैं। जिस प्रकार भोजन के अतिरिक्त दूध की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार फलों की भी जरूरत है। जिस ऋतु में जो फल होता है, उसे खाना चाहिए। ताजे और पके फल शरीर को स्वस्थ और नीरोग रखते हैं। सड़े-गले-बासी फल हानिकारक होते हैं, इसलिए इसका ध्यान रखना चाहिए।

फलों के सेवन से रक्त शुद्ध होता है, रक्त की वृद्धि होती है, पेट के विकार दूर होते हैं। चित्त प्रसन्न रहता है, मुख शुद्ध तथा स्वाद अच्छा रहता है। फल सुगमता से पचनेवाले होते हैं। रोगियों के लिए दूध की अपेक्षा फलों का प्रयोग अधिक उपयोगी होता है।, यदि फल अधिक मात्रा में भी खा लिए जायँ

सो उनसे हानि की कोई सम्भावना नहीं होती। किन्तु यदि दूध अधिक ले लिया जाय तो उसके पचने में कठिनाई हो जाती है।

फलों के संबंध में साधारण ज्ञान

फल सदा पके और गदर ही खाने चाहिए। कच्चे फल देर में हजम होते हैं और यदि अधिक खा लिए गये तो कभी-कभी पेट में दर्द भी पैदा कर देते हैं। इसलिए पके फल खाना ही उपयोगी है। फल अनेक प्रकार के होते हैं। उनकी दो श्रेणियाँ हैं। एक तो वे जो प्रथम श्रेणी के होते हैं और दूसरे द्वितीय श्रेणी के।

प्रथम श्रेणी के फल कुछ अधिक मँहगे मिलते हैं। जैसे सेव, अंगूर, अनन्नास संतरे, सर्दा, बम्बइया केला, कलमी आम, मौसमी, आदि। द्वितीय श्रेणी के फल अधिक मँहगे नहीं होते। जैसे, खरबूजा, तरबूज, अमरूद, केले, खीरा, ककड़ी गाजर, बेर, लीची, शरीफा, नासपाती, नारंगी, मीठे नीबू, बेल, आदि। फल खाने के संबंध में नीचे लिखी बातों का ध्यान रखना चाहिए।

१—सभी फल छीलकर न खाने चाहिए। जिनके छिलके मोटे, कड़े अथवा छीलने लायक होते हैं, उन्हीं को छीलना चाहिए। सभी फलों को छील-कर खाना बहुत बड़ी भूल है। छिलकेदार फल अधिक लाभ पहुँचाते हैं यदि वे खूब चबाकर खाये जायँ।

२—प्रायः सभ्य समाज तथा अमीर घरों में मैंने देखा है, कि कुछ मुलायम फलों को भी लोग छीलकर खाते हैं। यह नजाकत मूर्खता का परिचय देती है। मैंने देखा है कि सेव, नासपाती अमरूद और बेर भी लोग छीलकर खाते हैं। ऐसा करना ठीक नहीं है। जिन मुलायम फलों को छीलकर खाया जाता है, उनका बहुत कुछ पोषक तत्व निकालकर फेंक दिया जाता है। जो फल छिलके सहित नहीं खाये जा सकते। जैसे तरबूज, खरबूजा, आम, केला, शरीफा, संतरा, नीबू, अनन्नास, अनार आदि; उनका छिलका निकालना आवश्यक है। इसके सिवा जिनके छिलके मोटे तथा कवच के रूप में होते हैं केवल उन्हीं को छीलकर खाना चाहिए अन्यथा फलों को बिना छीले ही खाना उपयोगी होता है।

३—फलों को सदा हवादार स्थान में रखना चाहिए। कई-कई दिनों के

बासी फल सूख जाते हैं। इसलिए खरीदते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वे सूखे, मुरझाये बासी और गले हुए न हों।

४—फलों को छीलकर या काटकर न रख छोड़ना चाहिए। जिस समय खाना हो, उसी समय काटना ठीक होता है।

५—फल सुबह और दोपहर के बाद खाना अधिक उपयोगी है। यों तो किसी भी समय खाना हानिकारक नहीं होता।

६—साधारण फल जैसे बेर, खीरा, ककड़ी, फूट, तरबूज आदि बहुत अधिक न खाने चाहिए। उत्तम श्रेणी के फल यदि अधिक खा लिए जायँगे तो कोई हानि न होगी। लेकिन साधारण श्रेणी के फल अधिक मात्रा में लेने से कुछ कष्ट हो सकता है। इसे स्वयं समझा जा सकता है।

७—उत्तम फलों का सेवन करना साधारण लोगों के लिए कठिन है, ऐसी दशा में जो फल सरलता से लिए जा सकें, उनसे ही लाभ उठाना चाहिए। फलों का एकदम न खाना ठीक नहीं।

८—जिस ऋतु में जो फल मनुष्य को अपनी सुविधा के हिसाब से मिल सके, उसे खाना चाहिए।

९—फलों को खाने के पहले स्वच्छ और ठण्ढे पानी से धो लेना चाहिए। आम और खरबूजे को कुछ देर तक ठण्ढे पानी में भिगोए रखना चाहिए।

१०—जो फल छिलके सहित खाये जाते हैं, उन्हें अधिक से अधिक चबाना चाहिए। चबाकर खाने से एक तो छिलके अच्छी तरह पिस जायँगे और दूसरे यह कि दाँतों को बहुत लाभ होगा। फलों के सेवन से दाँतों के रोग नहीं होते, दाँत स्वच्छ और सुंदर बने रहते हैं।

११—फल खाने के बाद पानी न पीना चाहिए। फलों का स्वाद स्वयं बहुत रुचिकर होता है।

भिन्न-भिन्न फलों के गुण

सेव—यह सर्वोत्तम फल है। यह स्वास्थ्यप्रद, रक्तवर्द्धक, तथा कान्तिवर्द्धक होता है। इसमें कारबन और फास्फोरस पाया जाता है। सेव में स्वाभाविक रूप से बहुत अच्छी मिठास होती है। मैंने कुछ लोगों को देखा है जो इसे आग में भून कर, तथा मिठाई के रूप में पका कर खाते हैं। यह बहुत बड़ी भूल है। प्राकृतिक

रूप में पका हुआ सेव ही लाभप्रद होता है। आग पर पकाने से उसके सारे गुण नष्ट हो जाते हैं। छोटे बच्चे जिनके दाँत न हों उन्हें सेव का रस देना चाहिए। बूढ़े स्त्री-पुरुष भी अपनी सुविधा के अनुसार सेव का रस सेवन कर सकते हैं।

सेव स्थूलता को कम करता है, दाँतों के रोगों में औषधि का कार्य करता तथा पायरिया को दूर करता है।

अंगूर—यह बहुत शक्तिप्रद स्वादिष्ट फल है डाक्टरों ने अंगूर को दूध अधिक लाभदायक बताया हैं रोगियों के लिए तो अमृत है। यह कब्ज को करता है। रक्त को शुद्ध करता है और उसकी वृद्धि करता है तथा शरीर में कांति उत्पन्न करता है। यह सरलता से पच जाता है। अंगूर कच्चे की अपेक्षा पका हुआ खूब रस से भरा होता है। अंगूर का रस बच्चों को देना लाभदायक होता है।

सतरा, नारंगी, मौसमी, नीबू, मीठे नीबू ये सब फल बड़े उपयोगी और शरीर के विकारों को नाश करने वाले होते हैं। इनके रस पाचन-शक्ति को ठीक रखते हैं। भूख बढ़ाते हैं, पित्त का नाश करते हैं तथा रक्त-विकारों को दूर करते हैं। दाँतों के लिए बहुत ही लाभदायक होते हैं। ये फल पायरिया जैसे रोगों के लिए औषधि हैं। इनके रस छोटे बच्चों को देने चाहिए।

नीबू—कृमिनाशक होता है, चर्म रोगों से बचाता है। गठिया, जिगर तथा दाँत के रोगों में नीबू और सतरे का रस अत्यन्त लाभप्रद होता है।

अनन्नास—यह फल बहुत अच्छा होता है। पाचक होता है। पित्त तथा कीड़ों को नाश करनेवाला होता है।

आम—यह अपने देश का उत्तम फल है। पका हुआ आम बहुत लाभदायक होता है। यह रक्त को बढ़ाता है। खाने में रुचिकर और शक्तिवर्द्धक होता है। जो आम पेड़ के पके होते हैं, वे अधिक लाभदायक होते हैं।

अनार—स्वादिष्ट फल है। यह रोगियों के लिए बहुत लाभप्रद है। पित्त का नाश करता है तथा बुखार में लाभ पहुँचाता है।

केला—यह खूब पका हुआ खाना चाहिए। इसमें शक्ति देने का गुण होता है। नेत्र के रोगों और प्रमेह जैसी बीमारियों में लाभ पहुँचाता है। इसमें कार्बोहाइड्रेट्स अधिक होता है।

पपीता—यह पाचक होता है। रोगियों के लिए विशेषरूप से हितकर है। यह पेट का पका अधिक फायदा करता है। कच्चा पपीता तरकारी बनाकर खाना चाहिए।

खरबूजा—खाने में स्वादिष्ट, कान्ति देनेवाला, पाचक तथा अधिक पेशाब लानेवाला होता है। पथरी जैसे रोग को दूर करता है।

तरबूज—इसका गुण ठंडा होता है। शरीर में रक्त पैदा करता है। तथा कफ को बढ़ाता है अधिक गला हुआ तरबूज न खाना चाहिए।

गाजर—कच्ची गाजर बिना आग पर पकाये खाना चाहिए। यह ध्यान रहे कि वह खूब चबाकर खायी जाय। गाजर रक्त को बढ़ाती है तिल्ली और जिगर के रोगों में लाभप्रद होती है। १० प्रतिशत शक्कर गाजर में होती है तथा लोहा भी अधिक होता है।

ककड़ी, खीरा—इनमे जल का अंश अधिक रहता है। ये पाचक, ठंडे, पित्त को नाश करनेवाले होते हैं।

जामुन—यह कई रोगों के लिए लाभकारी होती है। जामुन खाने से बद-हजमी, पेट की पीड़ा, तिल्ली और मधुमेह में लाभ होता है।

बेल—पक्का हुआ बेल ठंडा होता है। पाचक है और मल को बाँधता है।

नारियल—तर रखनेवाला तथा साफ पेशाब लाता है।

गन्ना—रक्त को शुद्ध करता है, पेटको साफ करनेवाला और पाचक होता है।

नाशपाती—यह खाने में स्वादिष्ट होती है। किन्तु देर में हजम होती है। यह शरीर को पुष्ट करती है। रक्त को गाढ़ा करती है तथा कान्ति पैदा करनेवाली होती है। रोगियों को नाशपाती न देकर शीघ्र पचनेवाले फल ना चाहिए।

खिन्नी—शरीर के अंगों को बल और स्वास्थ्य देती है। खाने में मीठी और रुचिकर होती है।

इस प्रकार सभी फल उपयोगी होते हैं। जो लोग अधिक-से-अधिक फलों वन करते हैं, वे प्रायः रोगों से बचे रहते हैं। अधिक फल खानेवालों को , दाँतों के रोग तथा इस प्रकार के रोग नहीं होते।

फल ऐसे हैं जो किसी दूसरी चीज के साथ खाने से अधिक लाभ

पहुँचाते हैं। जैसे केला, आम, खरबूजा, फूट, अमरूद, जामुन, खीरा, ककड़ी आदि। आम खाकर दूध पीना आवश्यक है। खरबूजे के ऊपर शरबत पीना चाहिए। फूट गुड़ के साथ खायी जाती है, केला खाने के पश्चात् दूध पीना बहुत लाभकारी होता है। अमरूद, खीरा, ककड़ी, जामुन, फालसा, कमरख आदि नमक के साथ खाए जाते हैं। नींबू में शक्कर या नमक मिलाकर खाना अधिक लाभकारी नहीं होता।

कुछ फल ऐसे हैं जिनसे रस निकाले जाते हैं। फलों के रस बिना दाँत के बच्चों अथवा बहुत दिनों के रोगियों तथा बूढ़ों के लिए पीना ठीक होता है। दाँत होते हुए फलों को चबाकर और चूसकर ही खाना चाहिए। निम्नलिखित फलों के रस निकाले जाते हैं:—सेब, सतरा, अनार, अंगूर, नारंगी, मौसमी, नींबू, आम आदि।

सूखे मेवे

जो फल सुखाकर खाये जाते हैं, वे मेवे कहलाते हैं। जैसे, मुनक्का, किशमिश, बादाम, अखरोट, काजू, चिलगोजा, पिस्ता, आलूबुखारा, अंजीर, मूमफली, छुहारा, गरी, आदि। ये मेवे भी बहुत शक्तिवर्द्धक और लाभप्रद होते हैं।

सूखे मेवे में सभी प्रकार के विटामिन होते हैं। पोषकतत्व भी काफी मात्रा में पाये जाते हैं। इनमें से कुछ सूखे मेवे यदि भिगोकर खाये जायँ तो उनसे अधिक लाभ होता है। कुछ देर के लिए भिगो देने से उनका विटामिन सजीव हो उठता है। बादाम, अखरोट, पिस्ता, चिरौंजी आदि जो मोटे छिलकों के अंदर रहते हैं। इन्हें जरा देर के लिए भिगोकर खाना चाहिए। सूखे मेवों को पकाकर खाने से कोई लाभ नहीं होता। उनके पोषक तत्व जलकर नष्ट हो जाते हैं। मेवे तो स्वयं स्वादिष्ट होते हैं उनको पकाकर स्वादिष्ट बनाने की कोई आवश्यकता नहीं, बड़े घरों में प्रायः बादाम, पिस्ता तथा फलों के बीजों को तलकर नमकीन और मीठा बनाकर खाते हैं। ऐसा करने से जो लाभ फलों और मेवों से मिलना चाहिए, वह नहीं मिल पाता।

सूखे मेवे गरमी की अपेक्षा जाड़े में अधिक खाये जाते हैं। इस प्रकार के मेवों को खाते समय इस बात का बहुत ध्यान रखना चाहिए कि वे दाँतों से भली-भाँति चबाए जायँ। जो मेवे कड़े होते हैं, उनको अधिक चबाने की

आवश्यकता होती है। इसके सिवा हरे फलों की अपेक्षा कुछ सूखे फल देर में पचते हैं। बादाम, अखरोट, पिस्ता, चिरौंजी, काजू आदि को अधिक चबाना चाहिए। रोगियों तथा निर्बल पाचन-शक्ति के व्यक्तियों को ये मेवे न खाने चाहिए। किशमिश, मुनक्का, अंजीर, छुहारा आदि शीघ्र पचते हैं। इन्हें भिगोकर खाने की कोई आवश्यकता नहीं।

मेवों को किसी दूसरी चीज के साथ मिलाकर न खाना चाहिए। दूसरा चीजों के साथ पकाने से इनके विटमिन नष्ट हो जाते हैं।

दूध और उससे बननेवाली वस्तुएँ

हमारे भोजन में जितने भी पदार्थ हैं, उन सबमें दूध का स्थान सर्वश्रेष्ठ है और उसका बहुत बड़ा महत्त्व है। दूध के महत्त्व को सभी देशों में माना गया है। जन्म लेने के बाद ही बच्चे के लिए दूध की आवश्यकता पड़ती है। प्रकृति ने बच्चे के जन्म के पूर्व ही, उसके प्राण पोषक तत्व की उत्पत्ति कर दी है। जन्म लेने के बाद यदि बच्चे को उसका भोजन न मिले तो उसका जीवित रहना असमव हो जाय। ऐसी दशा में बच्चे की उत्पत्ति के साथ-साथ प्रकृति ने उसके भोजन की व्यवस्था की है। दूध के बिना बच्चे के जीवन की रक्षा नहीं हो सकती और उसके अभाव में कोई दूसरी वस्तु उसके स्थान पर काम नहीं कर सकती। ऐसी दशा में दूध का हमारे जीवन में कितना बड़ा स्थान है, इसे सभी लोग समझते हैं।

दूध एक ऐसा पदार्थ है, जिसकी आवश्यकता, प्रत्येक बच्चे, युवा, प्रौढ़ और वृद्ध को होती है, इसलिए नहीं कि यह एक पेय पदार्थ है, वरन् इसलिए कि उसका पीना हमारे शरीर के लिए बहुत जरूरी है। जो पोषक तत्व दूध में होते हैं, उनकी हमारे शरीर को आवश्यकता है, इसलिए उनकी पूर्ति के लिए दूध की जरूरत है।

बच्चे के उत्पन्न होने से लेकर छः सात मास तक उसे दूध के सिवा अन्य कोई वस्तु नहीं दी जाती। दूध के साथ साथ कुछ फलों के रस दिए जा सकते हैं, लेकिन उन पर निर्भर नहीं रहा जाता। बच्चे के जीवन के लिए केवल दूध

ही एक वस्तु है जो उसे जीवित रख सकती है। छः सात महीने के बाद बच्चा कुछ अन्न चाटने लगता है, लेकिन दूध छुड़ाया नहीं जा सकता। ज्यों-ज्यों बच्चा अन्न खाने योग्य होता जाता है, त्यों-त्यों उसका दूध पीना कम होता जाता है और कुछ समय के बाद वह गाय, भैंस और बकरी का दूध पीता है।

बच्चों के लिए माताओं का दूध तभी तक लाभदायक है जब तक उनके मुख में दाँत नहीं निकल आते। उसके बाद ऊपर का दूध पिलाकर अपना दूध छुड़ा देना चाहिए। इससे बच्चों और माताओं दोनों का स्वास्थ्य ठीक रहेगा। समय-समय पर ही प्रत्येक वस्तु लाभ पहुँचाती है।

मनुष्य को अपने पैदा होने के बाद से लेकर अन्तिम समय तक दूध की आवश्यकता है। जीवन में दूध की उसी प्रकार आवश्यकता है जिस प्रकार अन्य पोषक भोजनों की। माता के दूध की तो केवल लगभग दो वर्ष तक ही आवश्यकता पड़ती है लेकिन उसके बाद जीवन भर गाय, भैंस या बकरी का दूध आवश्यक होता है।

दूध में पौष्टिक गुण

दूध में किस किस प्रकार के गुण मिलते हैं और वे शरीर में क्या काम करते हैं, यह जानना प्रत्येक स्त्री-पुरुष के लिए बहुत आवश्यक है। दूध में शरीर का पोषण करनेवाले सभी प्रकार के तत्व पाए जाते हैं। संसार के समस्त खाद्य पदार्थों में केवल दूध ही ऐसी वस्तु है जिसका अकेले ही सेवन करने से शरीर हृष्ट-पुष्ट एवं स्वस्थ रह सकता है। केवल दूध सेवन करनेवाले व्यक्ति के लिए अन्य किसी भी खाद्य वस्तु की आवश्यकता नहीं पड़ती। केवल दूध पिलाकर वैद्य लोग दवा के साथ रोगियों का कायाकल्प करते हैं। शाकाहारी व्यक्ति के लिए दूध का प्रतिदिन पीना अत्यावश्यक है।

दूध में स्नेह का अनुभाग ३-४ प्रतिशव तक होता है। दूध में दुग्ध शर्करा ४ से ६$\frac{1}{3}$ प्रतिशत तक होती है। दूसरी किसी भी नैसर्गिक वस्तु में यह शर्करा नहीं पायी जाती। माता के दूध में इसकी अधिकता होने के कारण वह गाय के दूध से अधिक मीठा होता है। मलाई निकलने के पश्चात् भी यह शर्करा दूध में रहती है। दूध में चूना दहातु, क्षारातु, लौह, आजातु, M gnesiumn नीरजी (Clorine) भास्वर और गंधक के साथ बने हुए लवण पाए

जाते हैं। माता के दूध में लोह बहुत ही कम होता है। गौ के दूध में लोह माता के दूध से तिगुना होता है। इस पर भी अन्य खनिजों की तुलना में दूध में लोह इतने कम परिमाण में होता है कि लोह की दैनिक आवश्यकता की पूर्ति के निमित्त केवल दूध पीनेवाले को प्रतिदिन कम से कम तीन सेर गाय का दूध पीना पड़ेगा। दूध में सबसे अधिक चूना होता है। बकरी के दूध में शुल्वारी और जम्बुकी (Iodine) नामक दो उग्र गंधवाले तत्त्व होते हैं इसीलिए बकरी का दूध क्षय रोगियों के लिए अधिक गुणकारी होता है। इन प्रधान खनिज वस्तुओं के अतिरिक्त दूध में अत्यत सूक्ष्म मात्रा में ताँबा, लोहक, (Manganese) सीसा, स्फटिक धातु, (Aluminum) जस्ता, (Zink) वर्णातु, (Chrormium) रोचातु, (Vanadioum) राँगा, रंजातु, (Titanium) इत्यादि खनिज भी होते हैं। ये विविध प्रकार के खनिज दूध की महत्ता बढ़ाने के प्रधान कारण हैं।

गाय का दूध

गाय का दूध साधारणतया सभी दूधों से अच्छा इसलिए समझा जाता है कि यह दूध सभी अवस्था के मनुष्यों के लिए पीने के योग्य होता है। सामान्यतया गाय, भैंस और बकरी का दूध पीने के उपयोग में अधिक आता है। जिसमें भैंस का दूध गरिष्ठ होने के कारण दुर्बल या कमजोर पाचन-शक्तिवाले व्यक्तियों के लिए ठीक नहीं होता, बकरी का दूध पीने से प्रायः कुछ छींक सी आती है इसलिए बहुत से लोग उसे पीना पसंद नहीं करते। अतएव गाय का दूध सभी दूधों से अच्छा माना जाता है। गाय का दूध शीतल, वात, पित्त एवं रक्तविकार नाशक तथा नित्य सेवन करनेवालों की वृद्धता को रोकनेवाला है। विशेषतया काली गाय का दूध अन्य वर्णवाली गायों के दूध से अधिक गुणकारी एवं वात-नाशक होता है। पीली गाय का दूध पित्त तथा वात नाशक, सफेद गाय का दूध कफकारक तथा भारी और चितकबरी गाय का दूध वात-नाशक होता है। गायों का दूध उनके आहार पर निर्भर होता है। जो गाएँ जैसी चीजें खाती हैं उनका दूध तदनुसार ही गुणवाला होता है। जो गाएँ जंगल या मैदान में चरती हैं उनका दूध घर में बँधी रहनेवाली गाय से अधिक गुणकारी होता है।

भैंस का दूध

हमारे भोजन में भैंस का दूध उपयोगी भोजन है। इसका पाचन देर में होता है। रंग बिलकुल सफेद और दूध गाढ़ा होता है। इसमें नाइट्रोजन का अंश अधिक मिलता है। भैंस के दूध में गाय के दूध से दुगुनी चर्बी पाई जाती है। गाय के दूध की चर्बी की तरह भैंस के दूध की चर्बी पाचक नहीं होती। यह शक्तिवर्धक, पुष्टिकारक और खाने में स्वादिष्ट होता है। शारीरिक परिश्रम करनेवालों के लिए यह अधिक उपयोगी होता है। जो लोग परिश्रम नहीं करते, उनको इस दूध के पचाने में बड़ी कठिनाई होती है। हमारे देश में भैंस का दूध प्रायः घी बनाने के काम में आता है लेकिन अब तो उससे खोवा अधिक बनने लगा है। अन्य दूधों की अपेक्षा भैंस के दूध में प्रोटीन अधिक होता है।

बकरी और भेड़ का दूध

बकरी और भेड़ के दूध में प्रोटीन और चर्बी का अंश अधिक होता है और विटामिन ए तथा डी भी पाया जाता है। लेकिन गाय के दूध की अपेक्षा कम। अनेक प्रकार की घास और पत्तियों का भोजन करने के कारण बकरी और भेड़ का दूध बहुत उपयोगी माना गया है। रोगों के आक्रमण को रोकने में यह दूध अधिक शक्ति रखता है। लेकिन उन्हीं बकरियों और भेड़ों का दूध जो जंगलों में स्वतन्त्र रूप से हरी और ताजी पत्तियाँ नित्य चरने जाती हैं। शहरों में घरों के भीतर बँधी रहनेवाली बकरियों के दूध में इस प्रकार की कोई भी उपयोगिता उस रूप में नहीं होती जिस रूप में और जितनी मात्रा में जगल में चरनेवाली बकरियों के दूध में होती है। उसमें हीक अवश्य होती है किन्तु वह दूध बच्चों के लिए बहुत ही फायदेमंद है, शीघ्र ही पचता है, रक्त को बढ़ाता और शुद्ध करता है। बकरी के दूध में चर्बी कम होती है। अनेक प्रकार की जंगली पत्तियों के खाने के कारण इसका दूध अधिक स्वास्थ्यप्रद और रोग-निवारक होता है।

दूध देनेवाले पशुओं का स्वास्थ्य

पशुओं का ठीक-ठीक पालन करना भी पशु-पालकों का प्रधान कर्तव्य है।

जो लोग दूध का व्यापार करते हैं वे इस ओर ठीक-ठीक ध्यान नहीं देते, यह बहुत बड़ी भूल है। जिस दूध से हमारे जीवन का इतना बड़ा सबंध है और जो हमारे लिए अमृत के समान है, वह जिनके द्वारा हमें प्राप्त होता है, उनका यदि हम ठीक-ठीक पालन नहीं करते तो हमारी बहुत बड़ी गलती है।

दूध देनेवाले पशुओं को उनका ठीक-ठीक भोजन मिलना चाहिए। उनको रोगी होने से सदा बचाना चाहिए। उनके शरीर की सफाई का ध्यान रखना चाहिए। एक जगह बाँधकर न रखना चाहिए। पशुओं को तरह-तरह के रोग हो जाते हैं। ऐसी दशा में बीमार पशुओं का दूध पीना हानिकारक है। अधिकांश लोगों को खरीदकर ही दूध पीना पड़ता है। उनको इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि बीमार गाय, भैंस अथवा बकरी का दूध न लें। उससे लाभ के स्थान पर हानि होगी और पैसा भी बेकार जायगा। जिन पशुओं में किसी प्रकार की बीमारी नहीं होती, उनका दूध लाभदायक होता है।

दूध के महत्व को न जानने के कारण उस ओर मनुष्य ध्यान नहीं देते। यह दुख की बात है। शहरों की अपेक्षा, देहातों के अधिकांश परिवारों में कोई न कोई दूध देनेवाला पशु अवश्य होता है। लेकिन उसका ठीक-ठीक उपयोग करना बहुत कम लोग जानते हैं। छोटे बच्चों को दूध देने में बड़ी भूल की जाती है। कितने ही घरों में बच्चों को खालिश और कभी कभी औटा हुआ दूध दिया जाता है। यह बहुत बड़ी भूल होती है। इस प्रकार से दूध और भी गरिष्ठ बना दिया जाता है। जिसके पचाने में अधिक कठिनाई होती है। परिणाम यह होता है कि बच्चे उसे ठीक-ठीक पचा न सकने के कारण, अनेक प्रकार के रोगों से ग्रसित हो जाते हैं। दस्त खुलकर नहीं होता। लीवर बढ़ जाता है। कब्ज की शिकायत अधिक बढ़ने पर अनेक प्रकार के रोग पैदा होते हैं। बड़े घरों में अधिक दूध पिलाने के कारण ही बच्चों का लीवर बढ़ते देखा गया है और सैकड़ों रुपये दवाओं में खर्च करने पर भी बच्चों की मृत्यु हुई है। इस प्रकार की अज्ञानता का कारण है अशिक्षा और अनुभवहीनता।

छोटे बच्चों को दूध कैसा दें?

यों तो शिशुओं के जीवन के लिए दूध आवश्यक होता ही है क्योंकि वे अन्य कोई वस्तु खा नहीं सकते, लेकिन जब वे कुछ खाने-पीने लगते हैं, तब

भी उनकी वृद्धि के लिए दूध बहुत आवश्यक होता है। जिन बच्चों को लड़कपन में दूध कम मात्रा में मिलता है, उनका शरीर कमजोर होता है और उनकी शारीरिक उन्नति में बाधा पड़ती है। इसलिए दूध प्रत्येक दशा में बच्चों के लिए आवश्यक है।

छोटे बच्चे अथवा वे बच्चे जिन्हें माताओं का दूध पीने को पूर्णतया नहीं मिलता उन्हें ऊपर के दूध से पाला जाता है। अब प्रश्न यह है कि उन्हें कौन सा और कितना दूध देना चाहिए? छोटे गोदी के बच्चों को ऊपर का दूध पिलाने में बहुत सावधानी से काम लेना चाहिए। जब तक बच्चे दूध के सिवा कुछ नहीं खा सकते, उस समय तक उनका भोजन केवल दूध ही होता है। बच्चों को गाय या बकरी का दूध देना ही ठीक होता है। गाय और बकरी का दूध जल्दी पचता है और सभी गुण उनमें होते हैं। ऊपर का दूध देने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए—

१—गाय या बकरी का दूध हो।

२—जो बच्चे उत्पन्न होने के बाद अधिक कमजोर हों, उनके लिए दो भाग जल और एक भाग दूध मिलाकर पकाना चाहिए और जो बच्चे कमजोर न हों, उनको आधा जल और आधा दूध पकाकर देना चाहिए। खालिस दूध भूलकर भी छोटे शिशुओं को न पिलाना चाहिए।

३—दूध में पानी मिलाकर दो या तीन उबाल देकर, गुनगुना पिलाना चाहिए। दूध धीरे-धीरे पिलाना चाहिए जिससे बाहर न गिरे उसके पेट में आसानी से चला जाय।

४—दूध में शक्कर के स्थान पर शहद मिलाकर देना बच्चों के लिए अधिक स्वास्थ्यप्रद होगा।

५—दूध में मलाई न पड़ने पावे।

६—शिशुओं को दूध पिलाने का काम समय से करना चाहिए। जल्दी-जल्दी न पिलाना चाहिए। एक बार का पिलाया हुआ दूध जब तक पच न जाय तब तक दुबारा न पिलाना चाहिए।

७—बच्चों के बार बार रोने से यह न समझना चाहिए कि वह भूखा है, दो घण्टे के पहले दूध कभी न पिलाना चाहिए।

ऊपर का दूध पिलाने के लिए शीशी में भरकर चुसनी द्वारा दूध पिलाने में बड़ी सुविधा होती है।

दूध के उपयोग

जन्म से लेकर, बुढ़ापे तक भोजन के स्थान पर हमारे जीवन में जितना अधिक उपयोग दूध का होता है, उतना अधिक उपयोग भोजन की किसी दूसरी चीज़ का नहीं होता। दूध की उपयोगिता का सबसे बड़ा प्रमाण यही है। स्नायु और अस्थियों की उन्नति के लिए फासफोरस और पोटाशियम नामक तत्वों की अधिक आवश्यकता होती है। ये दोनों ही तत्व दूध में पाये जाते हैं। शरीर-रक्षण के लिए कैलशियम (चूने का क्षार) बहुत उपयोगी होता है। दूध में उसकी अधिक मात्रा मिलती है।

बाल्यावस्था में दूध का अधिक महत्व माना गया है। व्यवहार में भी यही बात देखने में आती है। किसी भी परिवार में घर के लोग छोटे बच्चों को ही दूध देने का विशेष प्रबंध रखते हैं। ऐसा नहीं होता कि बड़ी अवस्था के लोग दूध पी लें और बच्चे न पावें। इसका कारण बच्चों के साथ का स्नेह नहीं है, इस व्यवहार में कुछ काम की बात भी है। कुछ ही नहीं, बल्कि पूर्ण अंशों में।

बात यह है शरीर निर्माण में और उसके अंगों को सुदृढ़ तथा उन्नत बनाने में दूध की उपयोगिता अधिक होती है। यह कार्य मनुष्य के जीवन में बाल्यकाल में आरंभ होता है और वयस्क अवस्था तक पहुँचते-पहुँचते समाप्त हो जाता है। उसके बाद हमारे शरीर में दूध का वह उपयोग नहीं होता। साधारण रूप में शरीर को स्वस्थ और सबल बनाये रखने के लिए बड़ी अवस्था में भी दूध की आवश्यकता होती है, परंतु बच्चों के जीवन का तो वह प्राण होता है। इसीलिए प्रत्येक परिवार में उन्हें अधिकांश रूप में दूध देने की व्यवस्था होती है। घर के बड़े बूढ़ों का यही कर्तव्य भी होता है।

दूध में अनेक गुण होते हैं। वह बल और वीर्य-वर्द्धक होता है। शरीर को गठन और सौंदर्य देता है। बुद्धि का विकास करता है और शरीर में स्फूर्ति उत्पन्न करता है। उसके इन गुणों का सम्पर्क बचपन में अधिक रहता है और तरुणावस्था के बाद उसकी उपयोगिता का संबंध धीरे धीरे घटता जाता है।

शरीर को उन्नत बनाने और नीरोग रखने में दूध का महत्वपूर्ण स्थान है। भोजन में जिन तत्वों की आवश्यकता होती है, वे सभी दूध में पाये जाते हैं।

अनेक प्रकार से दूध का प्रयोग होता है। जिसकी जैसी रुचि होती है और जहाँ पर जैसा प्रयोग होता है, उसी के अनुसार दूध प्रयोग में लाया जाता है। उसके कुछ रूप इस प्रकार हैं।

१—अधिकांश लोग दूध पीते हैं।

२—रोटी, पूड़ी और चावल के साथ खाने में भी लोग दूध का प्रयोग करते हैं।

३—दूध को औटाकर, रबड़ी और मलाई बनाई जाती है, उसे लोग बड़े शौक से खाते हैं।

४—दूध को जमाकर दही और मट्ठा तैयार किया जाता है, और उसका उपयोग भी दूध की तरह लोग करते हैं।

५—खीर की तरह पर दूध से अनेक प्रकार की खाने की चीजें बनायी जाती हैं।

इस प्रकार दूध के प्रयोग कितनी ही तरह से होते हैं, लेकिन इनमें सबसे अधिक पीनेवाला ही प्रयोग काम में आता है। देहातों में खाने की दूसरी वस्तुओं के साथ मिलाकर दूध का प्रयोग अधिक होता है। शहरों में अधिकाश रूप से वह पिया जाता है।

प्रत्येक अवस्था में और प्रत्येक तरीके से दूध लाभकारी है। चीजों के साथ मिलाकर खाने की अपेक्षा वह पिया अधिक जा सकता है। आमतौर पर लोग पका हुआ दूध पीते हैं। या तो वे स्वय पका लेते हैं अथवा बाजार से पका हुआ खरीद लेते हैं। बाजारू दूध की अपेक्षा घर का दूध अच्छा होता है। सामने का दुहा हुआ दूध उत्तम पाया जाता है। लेकिन आजकल बाजार में हलवाई के यहाँ दूध पीने की लोगों में आदत पड़ गई है।

हलवाइयों का दूध फायदे के नाम पर अधिक काम का नहीं होता। हाँ, उन लोगों के लिए अधिक सुविधाजनक होता है, जो दूध के लिए कुछ करना नहीं चाहते और पीने के समय पीना चाहते हैं। उनके लिए यही एक रास्ता होता है कि वे जब चाहें बाजार में जाकर खरीदकर पी लें।

दूध के खाने और पीने में उसकी तादाद निर्धारित नहीं की जा सकती। दूध पीने और खाने की तादाद, खाने और पीनेवाले की शक्ति, अवस्था और पाचन के ऊपर निर्भर होती है। छोटे बच्चों को जितना दूध दिया जाता है, उतने से बड़े बच्चों का काम नहीं चलता और बड़े बच्चों का जितने दूध से काम चल सकता है उतने से पूर्ण अवस्था के लोगों का काम नहीं चलता। बुढ़ापे में सभी प्रकार के भोजन कम चलते हैं। इस प्रकार शरीर की विभिन्न अवस्थाएँ होती हैं और उन अवस्थाओं के अनुसार दूध की मात्रा खाने या पीने में आ सकती है।

कुछ लेखकों ने यह बताने की चेष्टा की है कि किसको कितना दूध मिलना चाहिए। हमारी समझ में इसका स्पष्टीकरण कुछ अधिक मूल्य नहीं रखता। एक निर्धारित मात्रा यदि कुछ आदमियों को अनुकूल हो सकती है तो कितने ही लोगों के प्रतिकूल भी हो सकती है। वास्तव में स्वास्थ्य, शक्ति और पाचन पर उसकी मात्रा निर्भर है।

इस अवस्था में बच्चों से लेकर बूढ़ों तक—किसी के लिए भी दूध की निर्धारित मात्रा नहीं बतायी जा सकती। आवश्यकता से कम मिलने पर शरीर क्षीण होता है और अधिक मिलने पर न केवल हानिकारक होता है बल्कि घातक भी सिद्ध होता है। इसलिये दूध खाने या पीने के संबंध में नीचे लिखी हुई बातों का ध्यान रखना चाहिए।

१—शुद्ध और ताजा दूध अधिक लाभदायक होता है।

२—पके हुए दूध की अपेक्षा कच्चे दूध में पौष्टिक गुण अधिक होता है। लेकिन इस बात का ध्यान रहे कि यदि कच्चा दूध अधिक देर तक रखा रहे तो उसे हल्की आँच में एक या दो उबाल लाकर पका लेना ही अच्छा होगा।

३—पीने की अपेक्षा रोटी, भात अथवा पूड़ी के साथ जो दूध खाया जाता है, वह पाचन में भारी हो जाता है।

४—खाने या पीने में उतना ही दूध लेना चाहिए जिसके पचाने में कोई अन्तर न पड़े।

५—दूध की मात्रा अधिक होने पर उसका पाचन ठीक-ठीक नहीं होता। इसकी पहचान यह है कि टट्टी या पाखाने जाने पर बँधा हुआ पाखाना नहीं

होता। पतला मल इस बात को सिद्ध करता है कि खाया या पिया हुआ दूध हजम नहीं हो सका।

६—आवश्यकता से अधिक दूध खाने या पीने से लाभ के स्थान पर हानि होती है। दूध का पाचन न होने से पेट में विकार उत्पन्न होते हैं। और रोगों की उत्पत्ति होती है।

७—आवश्यकता से अधिक दूध देने पर बच्चों को पतले दस्तों की शिकायत, कै, खाँसी और कभी-कभी ज्वर की बीमारी हो जाती है। अधिक तादाद में गाढ़ा दूध बच्चों को पिलाने से लीवर की बीमारी हो जाती है।

८—दूध के न मिलने से शरीर उन शक्तियों से वंचित रहता है जो रोगों के आक्रमण को रोककर शरीर को नीरोग रखने का कार्य करती हैं।

९—दूध के पीने में जल्दबाजी से काम न लेना चाहिए। छोटे छोटे घूँटों में इस प्रकार पिया जाय, जैसे पीनेवाला उसके स्वाद को अनुभव करता हुआ पी रहा हो, ऐसा करने से उस दूध के पाचन में सहायता मिलती है।

दही और मट्ठा

दूध को जमाकर दही और दही से मक्खन निकाल कर मट्ठा तैयार किया जाता है। मट्ठा और दही दोनों ही उपयोगी वस्तुएँ हैं। दोनों में वही प्रोटीन होता है जो उसके दूध में होता है। मट्ठा अधिक ताजगी पैदा करता है।

देहातों में घी बनाने के लिए पतले दूध को जमाकर दही से मक्खन निकाल कर मट्ठा अलग कर देते हैं। शहरों में हलवाई बेचने के लिए दही बनाते हैं और उसके खरीदार आवश्यकतानुसार उनसे आकर खरीद ले जाते हैं। देहातों में जो दही तैयार किया जाता है, उस दही में और शहरों के हलवाइयों द्वारा तैयार किये हुए दही में अंतर होता है। हलवाइयों के दही को देखते हुए वह अधिक स्वादिष्ट और लाभकारक होता है।

शहरों में मिलनेवाला दही शुद्ध और साफ बहुत कम मिलता है। इसके कई कारण हैं। दही को शुद्ध बनाए रखने के लिए वे किसी प्रकार की सावधानी नहीं रखते। उन्हें रोज तैयार करना पड़ता है और नित्य ही उसे वे बेच लेते हैं। कुछ हलवाइयों के यहाँ दही रखने का ढंग इतना बुरा होता है कि उनका दही खाने की तबीयत नहीं होती। लेकिन फिर भी उनका दही बिकता ही है और

जब दही बिकने को नहीं रहता तो उसे शुद्ध तथा सफाई के साथ रखने की क्या जरूरत है! उन्हें न तो ज्ञान ही होता है और न वे इसकी आवश्यकता ही समझते हैं।

बाजारों में बिकनेवाला दही दो प्रकार का होता है। खट्टा दही और मीठा दही। दोनों प्रकार के दही अपने नाम के अनुसार खट्टे और मीठे होते हैं। खट्टा दही बनाने में उस दूध का प्रयोग होता है, जिसका मक्खन मशीनों के द्वारा निकाल लिया गया है। उस दूध से तैयार किया हुआ दही, खट्टा दही कहलाता है और जिस दूध से मक्खन नहीं निकाला जाता उससे जो दही तैयार किया जाता है, वह मीठा कहलाता है। दोनों प्रकार के दही रुचि और गुण में एक, दूसरे से भिन्न होते हैं। खट्टा दही, खट्टा, फीका, कफ, वादी और खाँसी की वृद्धि करता है। निर्धन परिवारों में कढ़ी जैसी वस्तुओं के बनाने के लिए यही दही खरीद लिया जाता है।

मीठा दही खाने में, मीठा स्वादिष्ट स्निग्ध, शीतल और बलवर्द्धक होता है। शुद्धतापूर्वक तैयार किया हुआ, मीठा दही रुचिकारक और शक्ति उत्पन्न करने वाला होता है। इस प्रकार के दही में अनेक प्रकार के पोषक तत्व और जीवन-तत्व पाए जाते हैं जो शरीर के लिए बहुत लाभकारी हैं।

मीठा दही जब बासी हो जाता है, तो खट्टा और खाँसी के लिए हानिकारक हो जाता हैं। छोटे दुकानदारों के यहाँ खुले बरतनों में रखा जाने के कारण दही में कभी कभी अनेक प्रकार के कीड़े गिर जाते हैं और प्राय. वे कीड़े उस समय निकाले जाते हैं, जब कोई दही को खरीदने आता है। इस प्रकार का दही नीरोग आदमी को भी रोगी और विकारपूर्ण बनाने का कार्य करता है।

कुछ बातों में मट्ठे के गुण दूध से भिन्न होते हैं। लेकिन हमारे भोजन में मट्ठे का महत्वपूर्ण स्थान है। ताजा मट्ठा शरीर का पालन करता है। शक्तिवर्धक और स्फूर्तिदायक होता है। मट्ठे में रुचिवर्धक और रोग निवारक तत्व पाए जाते हैं। अनेक रोगों में मट्ठा औषधि का काम करता है। इसमें जीवनोपयोगी तत्वों का मिश्रण होता है और स्निग्ध भाग भी [illegible] है। पेट के विकारों को दूर करने में मट्ठा अत्यन्त

हमारा देश दूध, दही, मक्खन, [illegible]

प्राचीन काल से प्रसिद्ध रहा है। आधुनिक काल में देश का जीवन एकदम बदल गया है। बड़े बड़े शहरों के निर्माण से दूध, दही और घी की समस्या हमारे देश में भी भयानक हो गयी है। पहले गरीब परिवारों के बच्चे भी इच्छानुसार दूध और घी खाकर शक्तिशाली होते थे। लेकिन पुरानी बातें आज देश के सामने स्वप्न हैं। आज तो सम्पन्न परिवार भी इन चीजों के लिए तरसने लगे हैं।

अभी थोड़े दिनों की बात है जब हमारे देश में देहात दूध, दही और मट्ठे के लिए बहुत प्रसिद्ध थे। मट्ठा बहुत उपयोगी भोजन है। इसकी इतनी अधिकता देहातों में थी कि इसके लिए कभी किसी को तरसना नहीं पड़ता था। मट्ठा कोई भी किसी के यहाँ से उसी प्रकार माँगकर ले आया करता था, जैसे कुएँ का पानी कोई किसी को देकर अपने कर्त्तव्य का पालन करता है।

समाज की अवस्था आज कुछ और है। शुद्ध और उपयोगी मट्ठा शहरों में घी और दूध से भी अधिक अप्राप्य हो गया है। खोये के बढ़ते हुए व्यापार ने देहातों में भी मट्ठे की सुविधाएँ खो दी हैं। दूध तो मोल मिल भी जाता है, लेकिन मट्ठा कीमत देने पर भी नहीं मिलता। यह अवस्था उन देहातों की है, जहाँ मट्ठा कुएँ के पानी की भाँति एक-दूसरे को देने-लेने में काम आता था।

शहरों के जीवन में मट्ठे का बिलकुल अभाव हो गया है। देहातों के रहनेवाले कुछ गरीब लोग कई दिनों का मट्ठा एकत्र करके शहरों में बेचने लाते हैं। वह मट्ठा न केवल महँगा होता है, बल्कि खाने में अरुचिकारक, रोग उत्पादक और हानिकारक होता है।

अभाव बुरा होता है। अच्छी चीज के न मिलने पर लोग प्राप्त होनेवाली चीजों को लेकर ही अपना काम चलाते हैं। मट्ठे के सम्बन्ध में भी यही बात है। उसका अभाव अच्छे-बुरे की पहचान करने का मौका नहीं देता। जैसा कुछ मिलता है। उसी से लोग अपना काम चलाते हैं।

मट्ठा में अनेक प्रकार के उपयोगी तत्वों का समावेश होता है। जिस दूध से मट्ठा बनता है उसकी समस्त प्रोटीन मट्ठे में आ जाती है। आज भी देहातों में जहाँ मट्ठा होता है, लोग पेट भर पीकर काम करते हैं।

मट्ठे का एक प्रशंसनीय गुण यह है कि अधिक पी जाने से भी कभी हानि नहीं पहुँचाता लेकिन वह ताजा और शुद्ध होना चाहिए। शरीर के अनेक रोगों

और विकारों में यदि केवल मट्ठे का सेवन किया जाता है और दूसरे भोजन बंद कर दिए जाते हैं तो रोग जड़ से चला जाता है और शरीर निर्विकार हो जाता है।

हमारे देश में सर्वसाधारण के साथ मट्ठे का संबंध इतना घनिष्ट और साधारण रहा है कि उसके स्वभाव और गुणों से सभी प्रकार के लोग आज भी परिचित हैं और उत्साहपूर्वक उसको खाने या पीने के काम में लाते हैं। मट्ठे का उपयोग अनेक प्रकार से होता है—

१—बच्चे, स्त्रियाँ, पुरुष और बड़े-बूढ़े पेट भर पीकर शांति प्राप्त करते हैं।

२—रोटी, चावल, दलिया तथा अन्य दूसरी बनी हुई चीजों में मिलाकर मट्ठे का प्रयोग किया जाता है।

३—खाने की दूसरी चीजों के साथ मट्ठे को मिलाकर लोग अनेक प्रकार की स्वादिष्ट और रुचिकारक चीजें बनाते हैं और उन्हें खाकर प्रसन्न होते हैं।

मक्खन, घी और मलाई

हमारे भोजन के पदार्थों में मक्खन, घी और मलाई अत्यन्त मूल्यवान वस्तुएँ हैं। लोगों की ऐसी धारणा है और बहुत अंशों में सही भी है। तीनों ही चीजें इतनी मूल्यवान हैं जिन्हें धनिक परिवार के लोग ही खा सकते हैं। ये तीनों चीजें दूध से तैयार की जाती हैं। लेकिन तीनों के गुण और स्वभावों में अन्तर होता है।

मक्खन, घी और मलाई के द्वारा शरीर को शक्ति मिलती है। अंगों को दृढ़ता प्राप्त होती है। मक्खन स्निग्ध, रक्तशोधक और बलवर्धक होता है। उसकी प्रकृति अत्यन्त शीतल होती है। सभी प्रकार के जीवनोपयोगी तत्व उसमें पाये जाते हैं। मक्खन से ही घी तैयार होता है और दूध से मलाई बनाई जाती है। परंतु आग पर तैयार किए जाने के कारण उनके विटामिन तत्व जल कर नष्ट हो जाते हैं।

उपयोगिता में मक्खन अधिक मूल्यवान है। दूध में जो अंश चर्बी का होता है, वह सब मक्खन में आ जाता है। इसके सिवा विटामिन ए के अधि-

कांश तत्व मक्खन में पाए जाते हैं। शक्तिवर्धक होने पर भी अत्यन्त पाचक होता है। इसमें न तो विटामिन बी होता है और न सी। विटामिन डी के कुछ अंश इसमें पाए जाते हैं। जो गाएँ और भैंसें हरी घास और हरा भोजन अधिक खाती हैं, उनके दूध से बननेवाले मक्खन में विटामिन ए के अधिक तत्व पाए जाते हैं। श्वेत मक्खन की अपेक्षा, पीले मक्खन में विटामिन ए अधिक होता है।

मक्खन को आग पर पकाने के बाद घी बन जाता है। दूसरे देशों में घी बनाने की प्रथा बहुत कम है। हमारे देश में इसलिए ऐसा किया जाता है कि जिससे मक्खन खराब न हो जाय। यह बात पहले लिखी जा चुकी है कि इस देश में दूध की अधिकता रही है और आज भी कितने ही देशों से इसकी समस्या अच्छी है।

मक्खन से घी बनाने का जो ढग है, उससे घी की उपयोगिता बहुत नष्ट हो जाती है। मक्खन को आग पर पकाने से उसके विटामिन ए या तो बिल्कुल नष्ट हो जाते हैं अथवा अधिकांश अंशों में। इसलिए जो उनके इन तत्वों की रक्षा करना चाहते हैं, उनको मक्खन से घी बनाते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए।

१—मक्खन को पकाते समय आँच तेज न की जाय।

२—जिस बर्तन में मक्खन को पकाया जाय, उसको खुला न रखा जाय।

३—मक्खन को पकाने का स्थान ऐसा हो जो वायु के संसर्ग से यथासंभव दूर हो।

हमारे देश में विटामिन ए भोजन में मिलना सरल नहीं है, बहुत कठिन है। इसलिए इसके सबध में विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता है। घी में प्रायः पशुओं की चर्बी और बनस्पती तेल का मिश्रण होता है। इसलिए उसको तैयार करते समय असावधानी से काम लेने पर उसके खराब होने का सहज ही अदेशा होता है।

मलाई भी दूध से ही तैयार होती है। इसके बनाने में दूध को जितना अधिक आग में जलना पड़ता है, उतना अधिक खोये को छोड़कर और किसी में नहीं। इसका फल यह होता है, कि उसका समस्त विटामिन ए जलकर नष्ट

हो जाता है, किसी भी वस्तु को आग पर खुली वायु में पकाना हानिकारक होता है। इस ढंग को बदला जा सकता है।

पनीर

पनीर में दूध की समस्त प्रोटीन और चर्बी पाई जाती है और उसमें कैलशियम तथा फासफोरस की अच्छी मात्रा होती है। पनीर खाने में अत्यत गंभीर होता है। इसलिए इसे एक बार में अधिक न खाना चाहिए।

मक्खन निकाला हुआ दूध

मक्खन निकाला हुआ दूध (Skimmid milk) बच्चों के स्वास्थ्य और शारीरिक विकास के लिए उपयोगी होता है। इसमें उपयोगी प्रोटीन तथा लवण और विटामिन बी के अधिकांश तत्व पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त इस दूध में लगभग दस फीसदी विटामिन ए भी होता है।

दूध से मक्खन या क्रीम निकालने के लिए शहरों में बहुत सी मशीनें काम करती हैं। देहात से लोग दूध लाते हैं और इन दूकानों पर दूध पहुँचा देते हैं। मशीनों से उनका मक्खन या क्रीम निकाल लेने पर जो दूध रह जाता है, वही मक्खन निकला हुआ (Skimmed milk) कहलाता है।

इस दूध के दो उपयोग होते हैं। दूध के नाम से बिकता भी है और उसका दही भी बनाया जाता है। गरीब परिवारों में दूध के अभाव में इसका प्रयोग होता है। लेकिन जो लोग जानते हैं कि इस दूध से मक्खन या क्रीम निकाल ली गई है, वे इस दूध का प्रायः उपयोग नहीं करते और इसलिए खरीदते भी नहीं।

असली दूध में और इस दूध में अन्तर होता है। फिर भी वह व्यर्थ नहीं होता। असली दूध की अपेक्षा यह दूध अधिक पाचक होता है। उसमें ऊपर लिखे हुए अनेक प्रकार के उपयोगी तत्वों का समावेश होता है और वह लाभकारी भी होता है। जो लोग उसे व्यर्थ समझते हैं, वे भूल करते हैं।

दूध और उससे बननेवाली वस्तु के विटामिन का विवरण

दूध और दूध से बननेवाली वस्तुएँ	विटामिन				
	ए	बी	सी	डी	ई
कच्चा दूध	+ + +	+ +	+	+ + +	+ +
एक उबाल का दूध	+ + +	+ +	+	+ +	
औंटाया हुआ दूध	+	+			
मक्खन निकला हुआ दूध	+	+	+		
दही	+	+ + +	+	+	
मट्ठा	+	+ + +	+		
मक्खन	+ + +	+			
मशीन से निकाला मक्खन	+ + +	+ +	+		
घी	+ + +	+		+ +	+ +
मलाई (Cream)	+ + +	+ +	+	+	
पनीर	+ +				
छाना	+ +	+ +	—		
जमा दूध	+	+	+	+	

चिन्हों का अर्थः—

\+ इस चिन्ह का अर्थ है, साधारण विटामिन

\+ + इन दोनों चिन्हों का अर्थ है, अधिक विटामिन

\+ + + इन तीनों चिन्हों का अर्थ है, बहुत विटामिन

मनुष्य के भोजन में मांसाहार का स्थान

मनुष्य के भोजन की वस्तुएँ अनेक प्रकार की हैं किंतु वे सभी अन्नाहार, शाकाहार और फलाहार नामक तीन जातियों में गिनी जाती हैं। इन भोज्य पदार्थों के सिवा भोजन की एक और श्रेणी भी है और वह है; मांसाहार।

भोजन के विषय में मानव-समाज दो भागों में विभाजित किया जाता है और वे दोनों विभाग शाकाहार और मांसाहार के नाम से प्रसिद्ध हैं। जो लोग शाकाहारी होते हैं, वे विभिन्न प्रकार के अनाजों, शाकों और फलों पर अपना

जीवन निर्वाह करते हैं। मांसाहार से उनका कोई संबंध नहीं होता, मांसाहारी शाकाहारी होने के साथ साथ अपने भोजन में मांस, मछली और अंडे का भी प्रयोग करते हैं। भोजन के संबंध में यही दोनों श्रेणियाँ हमारे सामने हैं।

जो लोग शाकाहारी हैं, वे मांसाहार का विरोध करते हैं और किसी प्रकार का मांसाहार करना जीवन का एक धार्मिक पाप समझते हैं। वे स्वयं मांसाहार नहीं करते और न दूसरों को मांसाहार करने की आज्ञा देते हैं। उनका विश्वास है कि मांसाहार करके मनुष्य अपराधी और पापी बन जाता है। इस प्रकार की धारणा प्रायः सभी शाकाहारियों की है।

मांसाहारी, शाकाहारियों का विरोध करते हैं। इनके विश्वास के अनुसार मांसाहार उत्तम कोटि का भोजन है। यदि भोजन की सामग्री में संसार की वस्तुएँ नहीं हैं तो वह भोजन ही नहीं है। उनकी दृष्टि में मांसाहार एक शक्तिशाली भोजन है। और शाकाहार दीनों, दरिद्रों और निर्बलों का खाना है।

शाकाहारियों की विवेचना में मांसाहारी पापी और अपराधी हैं, एवं मांसाहारियों की मीमांसा में शाकाहारी निर्बल और भाग्यहीन हैं। दोनों ही एक दूसरे की आलोचना करते हैं और दोनों ही एक, दूसरे को अपराधी ठहराते हैं। इस दशा में प्रश्न पैदा होता है कि इन दोनों में सत्य क्या है? यहाँ पर अपने अध्ययन और अनुभव के अनुसार मैं कुछ आलोचना करूँगी। और यह चेष्टा करूँगी कि इन दोनों के संबंध में जो सत्य हो, वह आँखों के सामने आ जाय।

मनुष्य के भोजन के संबंध में अनेक प्रकार की पुस्तकें लिखी गई हैं और प्रायः सभी भाषाओं में लिखी गई हैं। विदेशी भाषाओं में मनुष्य के भोजन के संबंध में अनेक प्रकार की छानबीन हुई है। जिन अधिकारियों ने इसके संबंध में अपना निर्णय दिया है, वे बहुत कुछ एक, दूसरे से विरोध रखते हैं। यहाँ पर स्पष्ट रूप से यह समझ लेना चाहिए कि उनके विरोध मांसाहार के प्रश्न को लेकर ही कहीं कहीं पर हैं। भोजन के दूसरे नियमों में सहज ही कोई एक, दूसरे का विरोध नहीं करता। किन्तु मांसाहार के प्रश्न को लेकर सभी की सम्मतियाँ एक सी नहीं हैं।

मनुष्य के भोजन में मांसाहार का स्थान आज नया नहीं है। वह बहुत प्राचीन काल से चला आ रहा है। कितने प्राचीन काल से? इसका निर्णय नहीं

किया जा सकता। सत्य तो यह है कि मनुष्य के भोजन में मांसाहार का स्थान सदा से चला आया है और आज भी है।

क्या मांसाहारियों की संख्या कम है?

शाकाहारियों का अनुमान है कि संसार में मांसाहार करनेवालों की संख्या अधिक नहीं है और जो कुछ है वह धीरे-धीरे कम हो रही है। मेरी समझ में वह अनुमान सही नहीं है। इस विषय में जितना भी मैंने अध्ययन किया है, किसी भी लेखक और अधिकारी ने यह नहीं कहा है कि इन दो प्रकार के मनुष्यों में किसकी संख्या कम है और किसकी अधिक, मनुष्य-गणना में अनेक प्रकार की बातों का विवरण और परिचय रहता है, लेकिन इस प्रकार का कोई विवरण नहीं पाया जाता जिससे शाकाहारियों और मांसाहारियों की संख्या का अनुमान लगाया जा सके।

इस प्रकार का कोई निर्णय न होने का भी अनुमान से और कुछ तर्क के आधार पर यह मालूम होता है कि प्राचीन काल मे आज की अपेक्षा मांसाहारियों की संख्या बहुत अधिक थी। प्राचीन काल में मनुष्य जिस प्रकार का जीवन बिताते थे, वह आज के जीवन की अपेक्षा अनेक बातों में भिन्न था। शिक्षा और सभ्यता में भी प्राचीन काल की अपेक्षा मनुष्य जाति ने आज उन्नति की है। इसलिए यह भी स्वाभाविक है कि समाज जितना ही सभ्य, संयत और शिक्षित होता जाता है, उतना ही वह अधिक मांसाहार का विरोधी होता जाता है।

मेरे कहने का अभिप्राय यह नहीं है कि मांसाहारी असभ्य और विवेकहीन होते हैं। मेरे शब्दों का स्पष्ट अर्थ यह है कि शिक्षा के विकास में अन्यान्य बातों के साथ-साथ भोजन-संबधी समस्या पर भी अधिक से अधिक निर्णय हुआ है और यह सत्य है कि इसके संबध में जितनी ही खोज और गवेषणा होती जाती है, उतना ही मनुष्य के भोजन में शाकाहार और फलाहार का महत्व बढ़ता जा रहा है इसमें संदेह नहीं कि इस प्रकार के अनुसंधान आगे चलकर और भी अधिक होंगे। उस समय मनुष्य अपने भोजन के संबंध में अधिक प्रकाश पा सकेगा।

क्या मांसाहार धर्म के विरुद्ध है ?

धर्म और अधर्म की परिभाषा ही विलक्षण है। प्राचीन काल में धार्मिक और अधार्मिक जीवन की व्यवस्था की गई थी। जिन प्रकार के कार्यों को अनुकूल समझा गया था, उन्हें धार्मिक और जिन्हें प्रतिकूल समझा गया था, उन्हें अधार्मिक कहा गया था। लोगों को भयभीत करने के लिए अनेक प्रकार की ऐसी बातें कही गई थीं, जिनका आज कुछ अर्थ नहीं होता।

यहाँ पर मैं धर्म और अधर्म की आलोचना नहीं करना चाहती। परन्तु मेरा यह अभिप्राय तो अवश्य ही है कि प्रत्येक मनुष्य को जीवन का सत्य जानना और समझना आवश्यक है। इसमें संदेह नहीं कि प्राचीन काल में धार्मिक क्षेत्रों में मांसाहार का विरोध किया गया था और उसी के आधार पर धार्मिक प्रवृत्ति रखनेवाले अधिकांश मनुष्य आज भी मांसाहार का विरोध करते हैं।

इतना होने पर भी प्राचीन काल में मांसाहार का प्रचार कम न था। जो पुरुष, राजघराने के लोग, शक्तिशाली समाज और क्षात्र-धर्म से प्रेरित व्यक्ति शिकार खेलना अपने जीवन का एक आदरपूर्ण कार्य समझते थे। साधारण समाज में भी मांसाहार का अधिक प्रचार था। इसका सबसे बड़ा प्रभाव यह है कि विरोधी होने पर भी धार्मिक क्षेत्रों में भी मांसाहार का प्रचार पाया जाता था। यज्ञ जैसे धार्मिक कार्यों में भी मांसाहार को स्थान मिलता था।

मांसाहार पर वर्त्तमान समाज।

मांसाहार की समस्या को लेकर समाज की अवस्था आज दूसरी है। लोगों में शिक्षा की वृद्धि हो रही है और उसके द्वारा जीवन की अन्यान्य बातों को जानने और समझने के साथ, जन-समाज अपने भोजन का ज्ञान भी प्राप्त करता है। आज के मनुष्य पर धार्मिक शासन के स्थान पर तर्क का प्रभाव अधिक है। प्रत्येक मनुष्य आज जानना चाहता है कि उसे कोई भी कार्य किसलिए करना चाहिए और किस तर्क पर उसे न करना चाहिए।

मांसाहार का प्रचार आज भी है और प्राचीन काल में भी था। उसके प्रचार के जो आधार आज हैं, वही प्राचीन काल में भी थे। सभी प्रकार समाज में उसका प्रचार समान रूप से न था। प्राचीन काल में ...

व्यक्तियों की संख्या कम न थी जो केवल शाकाहारी थे और आज भी कुछ इसी प्रकार की बात है।

जीवन में सभी बातों को स्थान मिलता है आवश्यकता के अनुसार। मासाहार में गर्मी उत्पादन करने की शक्ति अधिक होती है। इसीलिए शीत प्रदेशों में मासाहार का प्रचार प्राचीन काल में भी अधिक था और आज भी अधिक है। गर्म प्रदेशों में मासाहार का प्रचार बहुत कम है। इससे यह बात भी स्पष्ट होती है कि अधिक शीत से बचने के लिए भोजन का निर्णय किया गया था और उसी के आधार पर मानव जीवन में मासाहार का प्रचार हुआ है।

गर्म देशों की अपेक्षा ठण्ढे देशों में मासाहारियों की सख्या अधिक है और गर्म देशों में भी जहाँ शीत अधिक रहता है, वहाँ के निवासियों में मासाहार का प्रचार आज भी अधिक पाया जाता है। साधारण रूप में भी देखा जाता है कि जाड़े की अपेक्षा गर्मी के दिनों में लोग मासाहार कम करते हैं।

इस प्रकार की आलोचना से स्पष्ट मालूम होता है कि मांसाहार का प्रचार शरीर में गर्मी उत्पन्न करने के लिए हुआ था और आज भी उसी आधार पर उसका प्रचार कम और अधिक पाया जाता है।

मांसाहार में पौष्टिक शक्ति

इसमें संदेह नहीं कि मांसाहार में पौष्टिक गुण जितने अधिक पाए जाते हैं, उतने दूसरे किसी प्रकार के भोजन में नहीं मिलते। भोजन की वस्तुओं में पौष्टिक तत्वों को अंगरेजी में प्रोटीन कहते हैं। इस प्रोटीन का परिचय मैंने पोषक तत्वों के नाम से दिया है। मांसाहार में जिस प्रकार की उत्तम प्रोटीन मिलती है, उतनी किसी दूसरे भोजन के पदार्थ में नहीं। किन्तु मासाहार का सबसे बड़ा दोष यह है कि वह अन्य सभी भोजनों की अपेक्षा देर में और कठिनाई से पचता है। यदि मांसाहार में यह दोष न होता तो उसके उत्तम श्रेणी के भोजन होने में किसी का विरोध न होता। लेकिन वहीं तक जहाँ तक उसका सबध शारीरिक शक्ति के साथ है।

मांसाहार शक्तिवर्धक है किन्तु वह स्फूर्ति उत्पादक नहीं है। गरिष्ठ होने के कारण इससे शरीर में अनेक प्रकार के विकार उत्पन्न होते हैं जिनसे शरीर का नीरोग रहना कुछ कष्टसाध्य हो जाता है। मासाहारियों में शाकाहारियों की

अपेक्षा तत्परता का अभाव होता है। यही कारण है कि मांस-भोजी मनुष्य प्रायः थोड़े पाए जाते हैं।

मांसाहारी जातियों में तामस प्रवृत्ति पाई जाती है। इसीलिए लड़ाकू जातियों में मासाहार का विशेष रूप से प्रचार है। इस विषय के अधिकारियों का कहना है कि मानसिक कार्य करनेवालों के लिए मांसाहार उत्तम भोजन नहीं है। फलाहार और शाकाहार इन दोषों से मुक्त हैं। मांसाहार में रोग उत्पन्न करनेवाले कीटाणु अधिक पाए जाते हैं। इसीलिए मांस-भोजी व्यक्ति अधिक संख्या में रोगी मिलते हैं।

अन्य पशुओं के मांस की अपेक्षा बकरे के मांस में रोग-उत्पादक कीटाणु कम होते हैं। इसीलिए समाज में-विशेषकर भारतवर्ष में-बकरे का मांसाहार अधिक होता है। मासाहार में एक बड़ी विपत्ति यह है कि मांस खरीदने के समय यह नहीं पहचाना जा सकता कि जिसका मांस खरीदा जा रहा है, वह रोगी था, अथवा नीरोग। रोगी पशु मांस-व्यवसायियों को कम दामों में मिलता है, इस-लिए व्यावसायिक दृष्टि से मांस की दूकानों पर शुद्ध और नीरोग मांस कम मिला करता है। यही कारण है कि उसके द्वारा रोगों के आक्रमण अधिक होते हैं।

शाकाहार और मांसाहार का तुलनात्मक प्रभाव

शाकाहार और मांसाहार के अनेक अनुभवी तथा अधिकांश विद्वानों ने अपना निर्णय देकर इस बात को बताने की चेष्टा की है कि मांसाहारियों में, शाकाहारियों की अपेक्षा कितनी ही बातों का अभाव होता है। एक अमेरिकन प्रोफेसर ने पचास आदमियों की शारीरिक शक्ति की परीक्षा ली थी। इन आदमियों में शाकाहारी और मांसाहारी—दोनों प्रकार के लोग थे। उसने अपने निर्णय में बताया है कि शारीरिक शक्ति में मांसाहारी शाकाहारियों का मुकाबिला नहीं कर सके।

दूसरे देशों में भी इस प्रकार की परीक्षाएँ की गई हैं। जिनमें कहा गया है कि स्फूर्ति और तत्परता में शाकाहारियों की विजय हुई है। इङ्गलैंड की एक दौड़ में भी मांसाहारियों की अपेक्षा शाकाहारी अधिक सफल हुए थे। इस प्रकार के कितने ही आँकड़े पढ़ने को मिलते हैं। इन पर अविश्वास नहीं किया जा सकता, लेकिन प्रायः यह होता है कि मनुष्य जिस प्रकार के अपने

विश्वास रखता है, उन्हीं का वह आधार भी लेता है। इसलिए जो लोग सत्य की खोज करना चाहते हैं, उनको समझने में कुछ कठिनाई होती है।

शाकाहार और मासाहार के अधिकारियों की आलोचनाओं से सहज ही जो निष्कर्ष निकलता है, उसे ऊपर संक्षेप में लिखा जा चुका है। और यहाँ पर भी उसे सक्षेप में लिखना अप्रासगिक न होगा कि संसार की लड़ाकू जातियों का भोजन बहुत कुछ मासाहार से सबध रखता है। शारीरिक शक्ति होने पर भी सभी प्रकार के मनुष्य युद्ध नहीं कर सकते और करने पर भी वे सफल नहीं हो सकते। (जिनके जीवन का सबंध युद्ध के साथ नहीं है, सात्विक प्रवृत्ति ही जिनके जीवन का सुख है और जो अपना सर्वस्व खो देने के बाद भी केवल शाति की आराधना करना चाहते हैं, उनका भोजन शाकाहार और फलाहार ही होना चाहिए।) इसके सबध में अनेक प्रकार की शकाएँ उत्पन्न की जा सकती हैं। सरलता के साथ प्रश्न किया जा सकता है कि मासाहार के द्वारा ही क्या कोई भी जाति लड़ाकू बन सकती है! इस प्रश्न के उत्तर में एक छोटा सा निर्णय इतना ही हो सकता है कि शारीरिक शक्ति का होना और बात है और लड़ने की प्रवृत्ति का होना दूसरी बात है। लड़ाकू प्रवृत्ति शारीरिक निर्बलता के होते हुए भी विरोधी प्रकृति को परास्त कर सकती है। इस प्रकार की आलोचनाएँ कुछ अधिकारियों की हैं। मैंने उनका यहाँ पर केवल सकेत किया है।

(साधारण रूप से शाकाहार, विशुद्ध भोजन है और शरीर को नीरोग रखने में सहायता करता है। यदि भोजन-संबंधी त्रुटियाँ मनुष्य के जीवन में न हों तो उसे स्वस्थ और शक्तिशाली होना चाहिए। यह भी सही है कि मासाहारियों की अपेक्षा शाकाहारी दीर्घजीवी होते हैं। मासाहारियों की मृत्यु जल्दी होने का कारण यही है कि उसके द्वारा उनके शरीरों में विकारों की अधिकता होती है और एकत्र विकार एक दिन मृत्यु के कारण होते हैं।)

मनुष्य का स्वाभाविक भोजन

मासाहार के साथ मनुष्य का स्वाभाविक संबध है या नहीं, यह एक साधारण प्रश्न पैदा होता है। मैंने अपने अध्ययन के द्वारा जो कुछ समझा और जाना है, वह यह है कि (मासाहार का निषेध आज विशेष रूप से हो रहा है। इस निषेध का संबध किसी धार्मिक प्रवृत्ति से नहीं है। मनुष्य-जीवन पर

उसके परिणाम और प्रभाव देखकर, उसका निषेध किया गया है। साथ ही तर्क से सिद्ध किया जा रहा है कि मांसाहार मनुष्य का प्राकृतिक भोजन नहीं है।

(मांसाहार के साथ मनुष्य का स्वाभाविक सम्बंध नहीं है, इसका एक अटूट तर्क यह है कि मांस के वास्तविक रूप को देखकर कभी किसी मनुष्य को सुख और शांति का अनुभव नहीं होता। मांस के मूल रूप को देखकर कुछ घृणा और द्वेष का भाव उत्पन्न होता है। जो मांसाहारी नहीं है, उन्हें तो अत्यंत घृणा मालूम होती है। यदि वह मनुष्य का स्वाभाविक भोजन होता तो इस प्रकार की दूषित भावना कभी उत्पन्न न होती। भोजन के किसी दूसरे पदार्थ को देखकर ऐसा कभी नहीं होता। इसलिए मांस, मनुष्य का स्वाभाविक भोजन नहीं है।)

(मनुष्य-शरीर की बनावट उन पशुओं की-सी नहीं है जो मांसाहारी होते हैं। मांसाहारी पशुओं के दाँत पतले, नोकीले, लम्बे और पैने होते हैं। उनके दाँतों की बनावट ऐसी होती है जिससे वे चीर-फाड़कर काम कर सकते हैं। परन्तु जो पशु मांसाहारी नहीं होते, उनके दाँतों की बनावट दूसरी होती है। वे अपने दाँतों से कुचलने और चबाकर खाने का काम लेते हैं। शाकाहारी पशुओं के दाँतों की बनावट, नीचे और ऊपर की कुछ ऐसी होती है जिनसे वे चक्की का काम करते हैं।)

(मनुष्यों के दाँतों की बनावट ठीक शाकाहारी पशुओं की सी है। इससे भी यह सिद्ध होता है कि मनुष्य प्रकृति की रचना के अनुसार मांसाहारी नहीं है।)

मांसाहार का विरोध

भोजन-सम्बंधी नवीन खोज में मांसाहार का अधिकतर विरोध हो रहा है। इस खोज में मनुष्य के स्वास्थ्य और नीरोग जीवन पर बड़ी-बड़ी आलोचनाएँ हुई हैं। उन आलोचनाओं में स्पष्ट रूप से बताया गया है कि (मनुष्य को स्वस्थ और नीरोग बनाने के लिए जो गुण शाकाहार, फलाहार और अन्नाहार में हैं, वे मांसाहार में नहीं हैं। मांस में नाइट्रोजन अधिक होने के कारण यकृत और मूत्राशय में विकार उत्पन्न हो जाते हैं और मल-विसर्जन का कार्य यथोचित रूप में नहीं होता। ऐसी अवस्था में शरीर का रोगी हो जाना स्वाभाविक है। जो लोग निरंतर मांसाहार करते हैं, उनके रोगी होने का यही कारण है। यदि

मासाहार को बन्द करके अथवा घटाकर वे शाकाहार, फलाहार और दूध मक्खन तथा घी का सेवन करें तो अधिक लाभ हो सकता है।)

भोजन में अण्डों का प्रयोग

भोजन के रूप में अण्डों का प्रयोग मासाहार का एक अंग है। अण्डे स्वयं गरम होते हैं। और खाने के बाद उनसे गर्मी की वृद्धि होती है। शिक्षित और सभ्य समाज में आज अण्डों के खाने की एक प्रथा पड़ गयी है। अण्डे में विटामिन ए दुगुना और विटामिन बी तीन गुना होता है। अण्डे के पीले भाग में सभी प्रकार के विटामिन्स पाए जाते हैं। उनमें विटामिन ए अधिक मात्रा में होता है। शेष साधारण मात्रा में। अण्डे में सफेदी का भाग दो तिहाई और पीला भाग एक तिहाई होता है।

अण्डों में पोषक-शक्ति अधिक होती है। उसके पीले भाग में चरबी का अंश अधिक पाया जाता है। इसका पाचन ठीक उसी प्रकार सरलतापूर्वक होता है, जिस प्रकार दूध की चर्बी का। इस पीले भाग में विटामिन्स भी अधिक पाये जाते है। उनमें जो खनिज पदार्थ होते हैं, वे हड्डियों और स्नायु-पेशियों के लिए सहायक सिद्ध होते हैं। उनके द्वारा शरीर का पोषण होता है। अण्डे का पीला भाग हृदय और मस्तिष्क को शक्ति देता है। कैलशियम हड्डियों के बनाने का काम करता है। दूध की अपेक्षा, अण्डा अधिक शक्तिवर्द्धक और हितकारी होता है। शरीर की कमजोरी में अण्डे खाने से शक्ति की वृद्धि होती है

ताजे अण्डे अधिक उपयोगी होते हैं। बासी अण्डों की उपयोगिता कम हो जाती है। जिन अण्डों में छोटे-छोटे छिद्र हो जाते हैं, वे हानिकारक होते हैं, एक प्रकार के छिद्र कीटाणुओं के प्रवेश करने से पैदा होते हैं। अण्डों को खरीदने के समय भली प्रकार उनकी परीक्षा कर लेनी चाहिए। यदि अण्डे को धूप की ओर करके देखा जाय तो ताजे अण्डे में गुलाबीपन दिखाई देता है। और यदि उसमें कहीं काले दाग दिखाई दें तो उसको अच्छा न समझना चाहिए। जल में डालने से ताजे अण्डे डूब जाते हैं। किंतु जो खराब होते हैं, वायु अधिक होने के कारण वे जल में तैरने लगते हैं। अंडों को खरीदने के समय इन सब बातों की पहचान कर लेना आवश्यक होता है।

आहार के साथ दाँतों का संबंध

मनुष्य के जीवन में भोजन का जितना अधिक महत्व है, उतना ही अधिक महत्व भोजन के विषय में दाँतों का है। यदि दाँत अपना काम न करे तो भोजन से शरीर को जो लाभ पहुँचता है और जिस प्रकार शरीर और स्वास्थ्य की रक्षा होती है, उसमें संकट उपस्थित हो जाय।

दाँतों के कार्यों की विवेचना करने पर स्वीकार करना पड़ता है कि स्वास्थ्य के साथ दाँतों का गहरा संबंध है। मनुष्य का स्वास्थ्य तब तक अक्षुण्ण रहता है जब तक उसके दाँत भली प्रकार काम करते हैं। जब दाँतों में निर्बलता आ जाती है और उनके द्वारा होनेवाला कार्य ठीक ठीक नहीं होता तो स्वास्थ्य बिगड़ने लगता है।

दाँतों की इस उपयोगिता का ज्ञान सर्वसाधारण को नहीं होता। दुःख की बात तो यह है कि अशिक्षित और साधारण श्रेणी के स्त्री पुरुषों के दाँतों की अपेक्षा शिक्षित समाज के दाँत अधिक दुरवस्था में पाए जाते हैं। वास्तव में ऐसा नहीं होना चाहिए था। शिक्षित लोगों को दाँतों के इस महत्व का ज्ञान होना स्वाभाविक है। इस दशा में उनके दाँत नीरोग और पुष्ट होने चाहिए थे। परंतु इसका उलटा होता है।

इस प्रकार दाँतों की निर्बलता शहरों के निवासियों में अधिक देखने में आती है। छोटी अवस्था में ही दाँतों में रोग उत्पन्न हो जाते हैं और अनेक प्रकार के विकारों से लोगों को प्रायः एक-न-एक कष्ट बना ही रहता है। यह अवस्था सोचनीय है। दाँतों की इस दुर्बलता के कितने ही कारण हैं—

१—बीड़ी और सिगरेट के अधिक प्रचार से दाँतों के स्वास्थ्य को हानि पहुँचती है।

२—खाने और पीने की तम्बाकू से मजबूत दाँतों की भी जड़ें खराब हो जाती हैं।

३—पान के साथ प्रयोग में आनेवाला चूना जब अधिक सेवन किया जाता है तो उससे दाँतों की दशा बिगड़ जाती है और उनमें निर्बलता पैदा हो जाती है।

४—पानों का सेवन भी दाँतों के लिए अहितकर सिद्ध होता है। जो लोग दिन-रात पान चबाया करते हैं, उनके दाँत भीतर ही भीतर निर्बल हो जाते हैं।

५—बाजार की मिठाइयों का सेवन भी दाँतों के स्वास्थ्य के लिए अच्छा नहीं है।

६—सफाई न रखने के कारण दाँत पीले पड़ जाते हैं और यह पीलापन दाँतों का एक प्रकार का रोग होता है।

७—दाँतों को स्वस्थ और शक्तिशाली बनानेवाले विटामिन्स के न मिलने से दाँत दुर्बल और रोगी होने लगते हैं।

इस प्रकार एक-दो नहीं, कितने ही कारण हैं जिनसे दाँत रोगी होने लगते हैं। छोटी अवस्था में साधारण परिवारों में दाँतों पर ध्यान नहीं दिया जाता। फल यह होता है कि जिस अवस्था में दाँतों को स्वस्थ और सुदृढ़ होने का अवसर मिलना चाहिए, उस अवस्था में ही ऐसे कारण पैदा हो जाते हैं, जिनसे दाँतों का न तो ठीक-ठीक विकास हो पाता है और न वे मजबूत ही हो पाते हैं। इसका परिणाम आगे चलकर बुरा पड़ता है और असमय में ही दाँत विकारपूर्ण बनकर शरीर और जीवन का सुख नष्ट कर देते हैं।

इसलिए यह कभी न भूलना चाहिए कि दाँत शरीर के आवश्यक अंग हैं। पाचन-क्रिया का कार्य दाँतों की सहायता पर निर्भर है। यदि ये ठीक-ठीक काम नहीं करते तो पाचन-कार्य यथोचित रूप में नहीं हो पाता। बुढ़ापे में दाँत निर्बल हो जाते हैं, भोजन करने में इनसे अधिक सहायता नहीं मिलती। अधिक बुढापे में दाँतों का कार्य एकदम ही समाप्त हो जाता है। फल यह होता है कि उस अवस्था में पाचन-कार्य भली प्रकार नहीं हो पाता। बूढ़े आदमियों को अपच होने का यही एक कारण है। इससे मन्दाग्नि की वृद्धि होती है और भूख कम लगती है। इसका फल यह होता है कि शरीर निर्बल हो जाता है।

दाँतों के कार्य

शरीर में प्रमुख रूप से दाँतों के दो कार्य होते हैं। पहला यह कि उनके द्वारा भोजन के चबाने और पीसने का कार्य होता है और दूसरा यह कि बोलने में दाँतों से सहायता मिलती है।

शरीर में ये दोनों ही कार्य बहुत आवश्यक हैं। प्रकृति ने दाँतों को इतना

मजबूत बनाया है, जिससे वे उस समय तक बराबर काम देते हैं, जब तक उनकी आवश्यकता होती है। यदि मनुष्य अपनी भूलों से उनको निर्बल, रोगी, और विकारपूर्ण न बनावें तो दाँतों का कष्ट अन्तिम दिनों तक उन्हें नहीं हो सकता।

लेकिन ऐसा नहीं होता। दाँतों के सबंध में जो उपेक्षा की जाती है, उसका ज्ञान दाँतों के डाक्टरों को अधिक होता है। इसलिए कि उनके पास निर्बल और रोगी दाँतों के आदमी प्रायः नित्य ही आते जाते हैं। जब तक एक बार दाँत खराब नहीं हो जाते तब तक दाँतों का महत्त्व लोगों की समझ में नहीं आता।

दाँत हमारे मुख की शोभा हैं। जब वे गिरने लगते हैं, अथवा कुछ भी गिर जाते हैं, उस समय मुख की शोभा मारी जाती है। उससे देखनेवालों को तो भद्दा मालूम ही होता है किन्तु अपने आपको भी जाने कैसा मालूम होता है।

दाँतों की बनावट बड़ी मजबूती के साथ होती है। उनकी जड़ें गहरे माँस तक चली जाती हैं। जिससे वे कभी सरलता से हिल न सकें। इतना ही नहीं, दाँतों की जड़ें मसूढ़ों तक पहुँचती हैं और सन्तान उत्पन्न होने के पूर्व ही दाँतों की इस प्रकार की नींव पड़ जाती है।

संतान के दाँतों का सबंध माता के स्वास्थ्य और दाँतों के साथ होता है। यदि माँ का स्वास्थ्य खराब होता है और उसके दाँत निर्बल होते हैं तो सन्तान के स्वास्थ्य और दाँतों पर उसका निश्चित् प्रभाव पड़ता है। प्रकृति का यह नियम अटूट है। किन्तु यह नियम त्रुटियों से खाली नहीं है। शारीरिक क्षति का संबंध सन्तान के माता-पिता के साथ होना, यह नियम स्वाभाविक नहीं है।

अपनी भूलों से अथवा किन्हीं कारणों से यदि माता का स्वास्थ्य खराब है और उसके दाँत निर्बल तथा रोगी हैं तो बिना किसी अपराध के संतान को भी यह क्षति उठानी पड़े और जीवन भर स्वस्थ तथा नीरोग दाँतों के लिए दुःखी रहना पड़े, ऐसा होना न्यायोचित नहीं मालूम होता। इसलिए मेरी समझ में प्रकृति का यह नियम त्रुटि पूर्ण है। यद्यपि कुछ अर्थों में प्रकृति सही है और वह इस प्रकार कि सन्तान का जिससे जन्म होता है, यदि उसमें ही निर्बलता है तो जिसका उससे जन्म होगा उसको निर्बल होना ही चाहिए।

दाँतों के साथ स्वास्थ्य का संबंध

जो कुछ हो, दाँतों का स्वास्थ्य शरीर का सुख और स्वास्थ्य है। कैलशियम,

फास्फोरस और फ्लोरीन नामक तत्व दाँतों को स्वस्थ और शक्तिशाली बनाते हैं। साथ ही उनके निर्माण का कार्य भी करते हैं। पशुओं की चरबी में विटामिन ए और डी दाँतों के विकास में सहायता करते हैं। जिन पदार्थों में विटामिन्स डी पाया जाता है, वे पदार्थ दाँतों के लिए बहुत हितकर और आवश्यक होते हैं। इनके अतिरिक्त विटामिन बी और सी भी दाँतों के निर्माण में बहुत काम करते हैं।

बच्चों के दाँतों को स्वास्थ्य और शक्ति मिलने के लिए यह आवश्यक है कि उनकी माताओं को भोजन में वे सभी पदार्थ खाने को मिलें, जिनमें दाँतों को निर्माण करनेवाले और पुष्ट बनानेवाले विटामिन्स पाए जाते हैं। साथ ही इस बात का भी ख्याल रहे कि माताओं के भोजन में चूना और फास्फोरस जैसे खनिज पदार्थ अच्छी मात्रा में मिलें। अन्न के साथ साथ दूध, दूध से बनी हुई वस्तुएँ, हरे शाक, हरी पत्तीवाले शाक और फलों का सेवन करना माता के लिए अत्यन्त आवश्यक है। उसे खुली हवा और धूप भी मिलनी चाहिए। धूप की कमी काड लिवर आयल और अन्य मछली के तेलों से भी पूरी की जा सकती है। किंतु भोजन का अभाव न केवल उसके शरीर का अभाव होता है, बल्कि संतान के जीवन में वह बराबर काम करता है।

यदि माता के जीवन में इन बातों का ध्यान नहीं रखा जाता तो यह निश्चित् है कि उसका अनुचित प्रभाव संतान के दाँतों पर पड़ेगा। उनका विकास और जन्म अनुचित तरीके से होगा। दाँतों से साथ साथ जबड़े भी किसी के छोटे और किसी के मोटे हो जायँगे, जिससे देखने में वे बहुत बेढंगे मालूम होंगे।

प्रकृति ने दाँतों का निर्माण जिस उद्देश्य से किया है, उसमें चीजों के काटने और भोजन की वस्तुओं को चबाने का कार्य मुख्य है। सभी प्रकार के पदार्थों के काटने और चबाने का कार्य दाँतों के लिए व्यायाम का काम करता है। इससे दाँत पुष्ट होते और सुदृढ़ बनते हैं। जो लोग मुलायम चीजों के खाने और चबाने के अभ्यासी हो जाते हैं, उनके दाँतों को आवश्यक व्यायाम नहीं मिल पाता। फल यह होता है कि इस प्रकार के दाँत अपने आप निर्बल होते जाते हैं। जिस प्रकार के भोजन में दाँतों को चबाने और पीसने का काम अधिक करना पड़ता है, उन भोजनों की उपयोगिता बढ़ जाती है। पेट में गया हुआ भोजन

सुपाच्य हो जाता है। साथ ही परिश्रम हो जाने के कारण उसके द्वारा दाँतों को शक्ति और स्वास्थ्य प्राप्त होता है। यदि भोजन तरल रूप में रहता है और उसके चबाने और पीसने का कार्य दाँतों को कम करना पड़ता है अथवा बिल्कुल नहीं करना पड़ता तो न तो वह भोजन सुपाच्य बन पाता है और न उससे दाँतों को ही सहायता मिलती है।

चावल तथा अन्य तरल पदार्थ चबाकर नहीं खाये जाते। इस प्रकार के भोजनों में स्टार्च की अधिकता रहती है। यह स्टार्च दाँतों तथा मसूढ़ों के आस पास जमा होकर सड़ने लगता है। जिससे एसिड की उत्पत्ति होती है और दाँत गलने लगते हैं। अधिक स्टार्चवाले भोजन करने के उपरान्त दाँतों को उँगली से रगड़कर खूब धो डालना चाहिए। धोने के समय ठण्डे पानी का प्रयोग अच्छा है।

स्टार्च पैदा होनेवाले एसिड के प्रभाव को रोकने और दाँतों के विकारों से उनको बचाने के लिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि भोजन के बाद ताजे फलों का सेवन किया जाय। ऐसा करने से दाँतों के आसपास उपस्थित स्टार्च निकल जाता है। फलों या शाकों का रस स्टार्च से दाँतों की रक्षा करता है और दूषित एसिड से बचाता हैं। इस बात का ध्यान रहे कि फल ऐसे हों जो चबा-कर खाए जायँ।

दाँतों को किस प्रकार स्वस्थ रखा जाय ?

प्रत्येक अवस्था में दाँतों का स्वस्थ और नीरोग रहना, बहुत आवश्यक है और दाँत उसी अवस्था में स्वस्थ और नीरोग रह सकते हैं जब उनके प्रति अधिक से अधिक सावधानी काम में लाई जाय।

इस अभिप्राय की पूर्त्ति के लिए अनेक प्रकार की बातों पर ध्यान देने की आवश्यकता है और सबसे पहले इस बात को जान लेने की आवश्यकता है कि हमारे दाँत किस प्रकार सुदृढ़ और नीरोग रहने चाहिए। दाँतों को स्वस्थ और सुदृढ़ बनाने के लिए निम्नलिखित साधन प्रमुख हैं :—

१—दाँतों को स्वच्छ रखने की चेष्टा की जाय। प्रातःकाल उनकी सफाई प्रायः सभी लोग करते हैं लेकिन दोपहर और शाम को भी, भोजन करने के बाद यदि उनकी सफाई कर ली जाया करे तो बहुत अच्छा है।

२—दाँतों की सफाई के लिए आजकल शहरों में अनेक प्रकार के ब्रुश बन

और ब्रश चले हैं। इनके द्वारा दाँतों की सफाई में किसी प्रकार की कमी नहीं रहती, परन्तु नीम और बबूल की दाँतन करने से एक दूसरा लाभ यह होता है कि उनका रस दाँतों के अनेक प्रकार के विकारों का नाश करता है और कितने ही रोगों में औषधि का काम करता है।

३—मुँह में पान, तम्बाकू अथवा इस प्रकार की कोई दूसरी वस्तु सदा भरी न रहनी चाहिए। भोजन करने के बाद मुख को शुद्ध, स्वच्छ और सूखा रहना भी आवश्यक होता है।

जिस प्रकार आँखों को स्वच्छ और स्वस्थ रखने के आँसू और नाक को शुद्ध रखने में उसकी वायु नली तथा अन्य भीतरी नसें काम करती हैं, उसी प्रकार दाँतों और मुख को स्वच्छ बनाने के लिए लार या थूक काम करती है। इसके द्वारा मल से उत्पन्न होनेवाले कीटाणु और दूषित प्रभाव से रक्षा होती है।

दाँतों की सहायता करनेवाले विटामिन्स भोजन में मिलने से दाँतों की अधिक रक्षा होती है। इनके अभाव में ही आजकल पायरिया रोग बढ़ रहा है।

पायरिया का रोग दाँतों के लिए सबसे भयानक शत्रु है। यह रोग एक बार जब किसी के दाँतों में हो जाता है, तो उसका दूर करना कठिन हो जाता है। डाक्टर और वैद्य सैकड़ों रुपये खा जाते हैं, परन्तु साधारण तौर पर कुछ लाभ नहीं होता। इस पायरिया रोग से बचने के लिए दो प्रमुख उपाय हैं। एक तो यह कि दाँतों से संबंध रखनेवाले, विटामिन्स देनेवाले पदार्थों का सेवन और फलों में सेव, सतरा नीबू का विशेष रूप से प्रयोग किया जाय।

स्वास्थ्य के साथ दाँतों का निकटवर्ती संबंध है। जिसके दाँत स्वस्थ और नीरोग होते हैं। वह स्वस्थ और नीरोग रह सकता है और जिसके दाँतों का स्वास्थ्य नष्ट हो जाता है, उसके लिए नीरोग जीवन सपना हो जाता है।

अवस्था, कार्य और स्वास्थ्य के अनुसार मनुष्य का भोजन

भोजन के सभी पदार्थ शरीर में तीन प्रकार के काम करते हैं—(१) सम्पूर्ण शरीर को पुष्ट करना। (२) क्षति की पूर्ति करना और (३) रोगों

से रक्षा करना। सभी वस्तुओं के गुण और स्वभाव जान लेने के बाद यह समझना आवश्यक होता है कि कब, किस अवस्था और किस परिस्थिति में, किस प्रकार का भोजन देना चाहिए? एक ही भोजन प्रत्येक अवस्था और प्रत्येक परिस्थिति में नहीं दिया जा सकता।

सभी प्रकार की बातें जान लेने के पश्चात् यदि भोजन देने और उसका निर्णय करने के समय आयु, परिस्थिति और स्वास्थ्य का ध्यान न रखा गया तो सहज ही अनिष्ट हो सकता है। एक छोटे बच्चे का भोजन किसी युवक का भोजन नहीं हो सकता, किसी स्वस्थ और युवा पुरुष का भोजन किसी निर्बल, अस्वस्थ और वृद्ध आदमी का भोजन नहीं समझा जा सकता।

शारीरिक परिस्थितियों के अनुसार प्रकृति ने भोजन के पदार्थों की उत्पत्ति की है। यदि उसे यह स्वीकार न होता और अपने रचना कार्य में उसने ऐसा नियम न रखा होता, तो सभी खाद्य पदार्थ एक से होने चाहिए थे। उनके गुण और स्वभाव में किसी अन्तर की आवश्यकता न थी। लेकिन ऐसा नहीं है।

खाने के सभी पदार्थ एक दूसरे से भिन्न हैं। एक शीतल है, दूसरा उष्ण। एक पचने में भारी है और दूसरा अत्यन्त सुपाच्य है। दूध अनेक प्रकार के हैं और सभी एक दूसरे से विभिन्न प्रकृति रखते हैं। स्वास्थ्य और परिस्थिति के अनुसार दूध देने की व्यवस्था की गई है। ऐसा नहीं है कि कोई भी एक दूध किसी को भी दिया जा सकता है। ऐसा करने से भयानक परिणाम उत्पन्न होते हैं। कितने ही प्रकार के फल हैं लेकिन उन सबकी प्रकृति एक-सी नहीं होती। इसीलिए कौन फल किस अवस्था और परिस्थिति में दिया जा सकता है, इसका ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक होता है। इस प्रकार की विवेचना अनाजों, शाकों और फलों से लेकर दूध और दूध से बननेवाली वस्तुओं तथा अन्य सभी चीजों के सम्बध में की गई है। उसका ध्यान रखना और आवश्यकता पड़ने पर उसी के अनुसार काम करना मनुष्य की बुद्धिमानी है।

शरीर की कई अवस्थाएँ और परिस्थितियाँ होती हैं। उदाहरणार्थ वे कुछ इस प्रकार हैं:—

१—दूध पीनेवाले छोटे बच्चे।

२—दूध छोड़कर दूसरे प्रकार के भोजन में प्रवेश करनेवाले बच्चे।

३—बड़े बच्चे।
४—यौवनावस्था में प्रवेश करनेवाले युवक तथा युवती लड़कियाँ।
५—प्रौढ़ावस्था।
६—बुढ़ापा, बुढ़ापे की निर्बल अवस्था।
७—रोगों की भिन्न-भिन्न अवस्थाएँ।
८—रोगों से छुटकारा पाने पर।
६—शरीर-रचना की स्वाभाविक परिस्थितियाँ।
१०—श्रमशील और परिश्रमहीन स्त्री-पुरुषों के जीवन।

११—विभिन्न प्रकार के कार्य और उनसे उत्पन्न होनेवाली जीवन की परिस्थितियाँ।

इस प्रकार शरीर की विभिन्न परिस्थितियाँ होती हैं। प्रत्येक परिस्थिति अपनी शक्ति और आवश्यकता के अनुसार भोजन चाहती है। उसकी उपेक्षा होने पर शरीर में अनेक प्रकार के रोगों के जन्म होते हैं। जिनको इन बातों का ज्ञान होता है, वे अपनी जानकारी से लाभ उठाते हैं। जो अनजान होते हैं। वे जीवन और शरीर का कष्ट उठाते हैं, यह निश्चिव है।

छोटी अवस्था में भोजन

जीवित रहने के लिए प्रत्येक प्राणी को भोजन की आवश्यकता है, यह सभी लोग जानते हैं। किन्तु कौन-सा भोजन किस अवस्था में आवश्यक है, इसका ज्ञान प्रायः लोगों को नहीं होता। यदि प्रत्येक अवस्था के अनुसार भोजन की ठीक-ठीक व्यवस्था रखी जाय तो मनुष्य का शरीर सदा नीरोग और पुष्ट रह सकता है।

छोटी अवस्था एवं छोटे बच्चों का भोजन केवल दूध होता है, जब तक बच्चा अन्न खाने योग्य नहीं होता, उस समय यदि दूध न देकर उसको केवल अन्य कोई तरल वस्तु दी जाय तो उसके शरीर का पोषण ठीक-ठीक न होगा और उसके शरीर में अनेक प्रकार के रोगों के आक्रमण होते रहेंगे।

प्रकृति का जो नियम है, यदि उसके विरुद्ध चला जायगा तो अवश्य कष्ट उठाना पड़ेगा। शिशुओं को सबसे पहले अपनी माता के दूध की ही आवश्य-

कता होती है। उसके बाद जब माता का दूध छूटने लगता है, तब बकरी या गाय के दूध की आवश्यकता पड़ती है।

बच्चे माता का दूध पीते हों अथवा बकरी या गाय का, दूध बहुत शुद्ध और नीरोग होना चाहिए। यदि माता बीमार है तो उसका दूध बच्चे के लिए बहुत हानिकारक और तत्वहीन होगा।

नीरोग माता का दूध ही बच्चे को स्वस्थ और हृष्ट पुष्ट बना सकता है। रोगी माता का दूध विषैला हो जाता है, उसमें रोग के कीटाणु मिश्रित रहते हैं, इसलिए ऐसी माता का दूध बच्चे के लिए बहुत हानिकारक और कभी-कभी प्राणघातक हो जाता है। चतुर डाक्टर, वैद्य और चिकित्सक रोगी माताओं से अपने बच्चे को दूध पिलाने से रोक देते हैं। जो दूध बच्चे का जीवन है, उसका नीरोग होना अत्यावश्यक है। माताओं को अपने स्वास्थ्य का बहुत ध्यान रखना चाहिए। तन्दुरुस्त माता के बच्चे ही स्वस्थ और नीरोग होंगे।

इसी प्रकार जब बच्चे को गाय या बकरी का दूध देना हो तो इस बात का पहले ध्यान रखना चाहिए कि दूध नीरोग पशु का हो, वह शुद्ध और ताजा हो।

छोटी अवस्था में बच्चों को दूध नियमानुसार तथा आवश्यकतानुसार देने से उनके शरीर का सगठन, उनकी वृद्धि ठीक ठीक होगी। दूध में किस-किस प्रकार के गुण होते हैं, यह पहले लिखा जा चुका है, उसको यहाँ दोहराने की आवश्यकता नहीं है। संक्षेप में मैं यहाँ पर इतना बताना चाहती हूँ कि दूध सभी प्रकार से गुणकारी होता है।

छोटे बच्चों की पाचन-शक्ति तीव्र रहती है। वे शीघ्र ही अपना भोजन पचा लेते हैं। इसलिए उनको जल्दी जल्दी अथवा दिन में कई बार भूख लगती है और भोजन की आवश्यकता पड़ती है।

छोटे बच्चों का जीवन निश्चिन्त होता है। उन्हें केवल खाने और खेलने से मतलब होता है। ऐसी दशा में भोजन स्वभावत. ही शीघ्र पच जाता है। इसलिए बच्चों को भोजन तीन-चार बार अवश्य देना चाहिए।

छोटे बच्चे जो केवल दूध पर ही आश्रित नहीं होते, उन्हें दूध के अतिरिक्त अन्न, शाक, भाजी, फल, मेवे और घी की भी आवश्यकता होती है, सभी प्रकार के खाद्य खाना बहुत आवश्यक है। एक-दो प्रकार के भोजन से

शरीर को सभी तत्व नहीं प्राप्त होते। शरीर के लिए जिन तत्वों की आवश्यकता होती है, वे सब विभिन्न प्रकार के भोजनों से ही प्राप्त हो सकते हैं।

जिन बच्चों को छोटी अवस्था में दूध नहीं मिलता, उनके शरीर में अनेक प्रकार के भयानक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। दूध न पिलाने से बच्चों की पाचन-शक्ति मंद पड़ जाती है पेट और जिगर के रोग पैदा हो जाते हैं। खाँसी आने लगती है और पाडु रोग हो जाने का भी भय होता है। इस दशा में माता-पिता को बच्चों की चिकित्सा के लिए क्या नहीं करना पड़ता। इनका ज्ञान न होने के कारण ही बच्चों के स्वास्थ्य बिगड़ते हैं, वे अस्वस्थ तथा रोगी बने रहते हैं।

मादक वस्तुओं से बच्चों को सदा बचाना चाहिए। इस प्रकार की चीजों से बच्चों का स्वास्थ्य बिगड़ता है। प्रायः सभी घरों में चाय पीने की प्रथा-सी पड़ गई है। छोटे बच्चे बड़े शौक से चाय पीते हैं और दिन में दो तीन बार तक पीते हैं, किन्तु चाय बच्चों के लिए हानिकारक होती है। उनको चाय के बदले थोड़ा-थोड़ा दूध अथवा फलों का रस दिया जाय तो बहुत लाभ होगा। चाय, काफी, सिगरेट, बीड़ी और भंग—इस प्रकार की नशीली वस्तुओं से बच्चों को सदा दूर रखना चाहिए। ये सब स्वास्थ्य-नाशक चीजें होती हैं।

युवावस्था का भोजन

मनुष्य की आयु को चार भागों में बाँटा गया है। शिशु-अवस्था, यौवनावस्था, प्रौढ़ावस्था और वृद्धावस्था। ये चारों अवस्थाएँ अपनी अलग-अलग आवश्यकताएँ रखती हैं। युवावस्था आरंभ होने के पहले भोजन का जो उद्देश्य रहता है, वही उद्देश्य पूर्णरूप से उसके बाद नहीं रहता। इन बातों पर अन्यत्र प्रकाश डाला जा चुका है। उनको दोहराने की आवश्यकता नहीं है।

पचीस वर्ष की अवस्था तक मनुष्य के शरीर की बाढ़ का समय होता है, इस समय तक सम्पूर्ण शरीर का संगठन और वृद्धि होना समाप्त हो जाता है। इस अवस्था से लेकर उसके बाद की अवस्था तक उपयोगी भोजनों द्वारा शरीर को पुष्ट करने, उसकी शक्ति बढ़ाने तथा स्वास्थ्य और सौन्दर्य की रक्षा करने की आवश्यकता होती है। यदि इन बातों का ध्यान न रखा गया तो शक्तियाँ क्षीण होने लगेंगी, शरीर में रोगों के आक्रमण होंगे और शीघ्र ही वृद्धावस्था के

लक्षण प्रगट होने लगेंगे। स्वास्थ्य और सौन्दर्य नष्ट होने लगेगा। समय के पूर्व बुढ़ापा आ जायगा। ऐसी दशा में मनुष्य भाग्य को दोष देता है।

युवावस्था में मनुष्य अपनी शारीरिक और मानसिक शक्तियों को उन्नत करने के लिए समर्थ होता है। उस समय उसमें सभी प्रकार की शक्तियाँ होती है किन्तु उनकी रक्षा करना उसका कार्य होता है।

शारीरिक शक्तियों को बढ़ाने तथा उसकी रक्षा करने के लिए मनुष्य को सबसे पहले अपने भोजन पर ध्यान देना चाहिए। यदि आवश्यकता और समय के हिसाब से भोजन की व्यवस्था न की जायगी तो शारीरिक शक्तियों का नाश होता जायगा।

साधारणत. भोजन का अर्थ लोग यही लगाएँगे—जैसे दाल, भात, रोटी, साग। लेकिन ऐसी बात नहीं है। केवल इतने से काम न चलेगा। यह बहुत साधारण बात है। नित्य दोनों समय खाने के लिए रोटी, दाल, भात, साग आवश्यक तो है ही, लेकिन यदि एक ही अनाज एक ही साग और एक ही दाल रोज खाई जायगी तो उससे अधिक लाभ न होगा। भोजन सदा बदल-बदल कर करना चाहिए। जैसे प्रायः अरहर की दाल लोग रोज खाते हैं, यह भूल है। दालें अनेक प्रकार की होती हैं। उन्हें बदल-बदलकर खाना चाहिए, इसी प्रकार शाक-भाजियों का भी क्रम रखना चाहिए।

इसके अतिरिक्त भोजन के साथ-साथ अच्छी मात्रा में दूध, घी. हरे, शाक, तरकारियाँ, फल, मेवे अदि की भी व्यवस्था रखनी चाहिए। यदि अर्थाभाव के कारण फल और मेवे न खाए जा सकें, तो हरे शाक और तरकारियों से लाभ उठाना चाहिए। जो खाद्य पदार्थ शरीर को पुष्ट करते हैं उनका सेवन अवश्य करना चाहिए।

मीठे, नमकीन, खट्टे, कड़ुवे—सभी प्रकार के भोजन आवश्यक हैं। अपनी सुविधा और आवश्यकता के हिसाब से भोजन की व्यवस्था करना आवश्यक होता है। युवावस्था में चिकने और पौष्टिक पदार्थ अधिक सेवन करने चाहिए। जिसने अपने शरीर की रक्षा इस अवस्था में ठीक-ठीक की है। वह अपनी वृद्धावस्था में निर्बलता का अनुभव न करेगा। जो भोजन मानसिक और शारीरिक

शक्ति तथा बल पैदा करते हैं, उन्हें खाकर युवक और युवतियों को लाभ उठाना और नीरोग रहना चाहिए।

यौवनावस्था के बाद का भोजन

यौवन के बाद प्रौढ़ावस्था आरंभ होती है। मनुष्य-जीवन का यह तीसरा काल है। इस अवस्था में भी यदि शरीर की रक्षा उचित भोजनों द्वारा की जाय तो बुढ़ापा शीघ्र नहीं आ सकता। मनुष्य की शक्तियाँ क्षीण नहीं हो सकतीं। कार्य करने में निर्बलता नहीं मालूम हो सकती। दाँतों, आँखों और बालों पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ सकता।

इस अवस्था में यौवनावस्था की सञ्चित शक्तियों की रक्षा करनी होती है। यदि उसकी रक्षा करने में लापरवाही की गई, तो उसका प्रभाव अनुचित पड़ेगा एक समय होता है किसी चीज को बनाने का, लेकिन जब वह समय निकल जाता है तो उसके बाद उसकी रक्षा करके उसे अच्छा बनाए रखना होता है। यदि उसकी रक्षा ठीक-ठीक न की गई तो अनेक त्रुटियाँ उत्पन्न हो जायँगी।

समय के पहले वृद्धावस्था अपनी भूलों का परिणाम है, यदि वृद्धावस्था के पूर्व मनुष्य शरीर की रक्षा करता रहेगा तो अस्वाभाविक रूप से वह वृद्ध नहीं हो सकता और न उसमें निर्बलता ही आ सकती है।

यौवनावस्था के बाद भी मनुष्य का भोजन पौष्टिक स्निग्ध और लाभप्रद होना चाहिए। अन्न के साथ साथ दूध, शाक, भाजी, फल, मेवे, घी, शक्कर, गुड़ आदि सभी प्रकार की खाद्य वस्तुएँ आवश्यकतानुसार खानी चाहिएँ। पाचन-शक्ति का पूरा ध्यान रखकर भोजन की व्यवस्था करनी चाहिए। केवल दाल, रोटी, और भात से काम न चलेगा। चिकनी और पुष्टिकारक चीजें अवश्य खानी चाहिएँ।

समाज मे ऐसे स्त्री-पुरुषों की संख्या अधिक मिलेगी जो असमय बूढे हो गये हैं। पचीस तीस वर्ष की अवस्था मे ही सिर के बाल सफेद होने लगते है। चेहरे पर झुरियाँ पड़ने लगती हैं, आँखों की ज्योति कम होने लगती है और शरीर में निर्बलता मालूम होने लगती है। इसके अनेक कारण होते है। उन कारणों में से कुछ इस प्रकार हैं।

१—अवस्थानुसार से भोजन की ठीक-ठीक व्यवस्था न होना।

२—ऐसे भोजन करना, जिनमें पोषक और पौष्टिक तत्वों का अभाव हो।

३—अनेक प्रकार की चिन्तनाएँ।

४—शरीर का रोगी रहना।

५—आवश्यकता से कम सोना।

६—अत्यधिक परिश्रम करना।

७—क्रोधी और चिड़चिड़े स्वभाव का होना।

८—प्रसन्न न रहना।

९—गंदे वातावरण में रहना।

१०—भोजन ठीक समय पर न करना।

११—दुखी रहना।

इस प्रकार की बातों से मनुष्य जल्दी बूढ़ा होने लगता है। स्त्री हो अथवा पुरुष, जिनके जीवन में उपर्युक्त कारण होंगे उन्हें वृद्धावस्था शीघ्र ही घेर लेगी। इसके अतिरिक्त जिन स्त्रियों के जल्दी-जल्दी बच्चे होते हैं, वे भी शीघ्र ही बूढ़ी होने लगती हैं। एक तो संतान होने के बाद स्त्री के जीवन में बहुत बड़ी जिम्मेदारी आ जाती है इसके सिवा बच्चे को जरा भी कोई कष्ट हुआ तो माता के सामने कितनी बड़ी चिंता हो जाती है, इसे एक माता ही अनुभव कर सकती है। इस प्रकार जिन स्त्रियों के अधिक संतानें होती हैं, उनको जीवन-भर परेशानियाँ और चिन्ताएँ बनी रहती हैं। ये चिन्ताएँ और अनियमित जीवन शरीर को नष्ट करता है। तथा शीघ्र ही बूढ़ा बना देता है।

फिर भी यदि जीवन की इन कठिनाइयों में भी अपने शरीर की ठीक-ठीक रक्षा की जाय अथवा भोजन-सम्बंधी बातों का ध्यान रखा जाय तो बहुत-कुछ लाभ उठाया जा सकता है।

बुढ़ापे का भोजन

बुढ़ापा मनुष्य की अन्तिम अवस्था होती है। इस अवस्था में सभी अंग शिथिल पड़ने लगते हैं। शरीर में उष्णता की कमी होने लगती है। बाल पक जाते हैं। नेत्रों की ज्योति कम हो जाती है। दाँत गिरने लगते हैं तथा शरीर में युवावस्था की स्फूर्ति नहीं रहती।

वृद्धावस्था में पाचन-शक्ति बहुत कमजोर हो जाती है। इसके तीन कारण

होते हैं—१—अवस्था के कारण शरीर के सभी अंगों में काम करने की शक्ति कम हो जाती है। २—दाँतों के न होने से भोजन चबाया नहीं जा सकता। ३—परिश्रम के कार्य नहीं किए जाते। अतः भोजन का ठीक पाचन नहीं होता।

वृद्धावस्था के पूर्व जितना भोजन मनुष्य कर सकता है, उसकी अपेक्षा बुढ़ापे में बहुत कम हो जाता है। पाचन-शक्ति मन्द हो जाने के कारण भोजन अधिक मात्रा में नहीं किया जा सकता। इस दशा में यदि भोजन की व्यवस्था में गड़बड़ी हुई तो शरीर में अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। खाँसी, श्वास रोग, मोतियाबिन्द, वायुविकार, मधुमेह तथा बहुमूत्र रोग बुढापे में प्रायः हो जाते हैं। बूढ़े आदमियों को भोजन अधिक न करना चाहिए। जो भोजन देर में पचते अथवा गरिष्ठ होते हैं, वे वृद्धावस्था में न करने चाहिए। इस अवस्था में केवल दो बार ही भोजन करना उचित है। जो स्त्री-पुरुष बुढ़ापे में स्वस्थ और नीरोग रहना चाहते हैं, उन्हें एक बार अन्न खाना चाहिए और दूसरी बार वे फल और दूध का ही सेवन करें तो बहुत अच्छा है। ऐसा करने से वे जो कुछ खायँगे उसे ठीक-ठीक पचा सकेंगे और रोगों से बचे रहेंगे।

वृद्धावस्था में भी मनुष्य को दूध, घी, हरे साग, फल, खाने बहुत आवश्यक हैं। इस प्रकार के भोजनों से शरीर में रूखापन न पैदा होने पावेगा। कोई भी वस्तु अधिक मात्रा में न लेनी चाहिए। बल्कि दूध और घी की अपेक्षा, हरे फल, फलों के रस, अथवा हरे शाक अधिक खाने चाहिए।

बुढापे में कठिन परिश्रम नहीं किया जा सकता। इसलिए प्रत्येक बूढे स्त्री-पुरुष को घूमना, चलना, फिरना और कुछ साधारण काम अवश्य करने चाहिए। जिससे शरीर के अंग अकर्मण्य न हो जायँ और पाचन-शक्ति निर्बल होकर कोई रोग न उत्पन्न कर दे। बुढापे के कारण हाथ पर हाथ रखकर बैठना अथवा कोई काम न करना शरीर को अकर्मण्य बनाना है। यह सोचना अथवा कहना बहुत बड़ी भूल है कि बूढ़े आदमियों को कुछ काम न करना चाहिए। अपनी शक्ति के हिसाब से उन्हें बराबर अपने हाथ-पैर चलाते रहना चाहिए।

बुढ़ापे की अवस्था में भोजन की अव्यवस्था और अनुचित रहन-सहन के कारण ही मनुष्य रोगी बना रहता है। उस समय अनेक प्रकार के कष्टों का

सामना करना पड़ता है। इसलिए यदि प्रारंभ से ही भोजन पर ध्यान रखा जाय तो वृद्धावस्था में भी मनुष्य स्वस्थ रह सकता है।

वृद्धावस्था में रक्त सचालन-कार्य कम हो जाता है और शरीर में गर्मी भी कम हो जाती है। इसलिए जिन भोजनों से शरीर मे उत्ताप पैदा हो, उन्हें अवश्य खाना चाहिए। इसके सिवा घूमने फिरने तथा कुछ शारीरिक परिश्रम करते रहने से रक्त के संचालन का कार्य ठीक-ठीक होगा और शरीर में शीतलता की वृद्धि न हो सकेगी।

शरीर के अनुसार भोजन

यह नहीं कहा जा सकता कि किस मनुष्य को कितना भोजन करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति के लिए आहार की एक ही मात्रा नहीं हो सकती। किसी मनुष्य की खूराक अधिक होती है किसी की कम। यह ठीक है कि अवस्था के हिसाब से आहार में कुछ अंतर अवश्य पड़ जाता है। लेकिन इसके अतिरिक्त शरीर की बनावट, उसकी लम्बाई चौड़ाई पर भी भोजन की मात्रा निर्भर होती है।

जिनका शरीर हृष्ट-पुष्ट लम्बा चौड़ा और भारी होता है, उनकी खूराक प्रायः अधिक होती है। यदि वह अपने शरीर के अनुसार भोजन न करेगा, तो उसके अंग निर्बल होते जायँगे और उनका पोषण ठीक-ठीक न हो सकेगा। इसी प्रकार छोटे आकार के शरीरवाले स्त्री पुरुषों की खूराक कम होती है।

जो लोग शारीरिक परिश्रम अधिक करते हैं, उनको अधिक आहार चाहिए। जो स्त्री-पुरुष अमीरी के कारण अथवा अकर्मण्यता के कारण शारीरिक परिश्रम कुछ नहीं करते, उनकी खूराक कम होती है और वे यदि अधिक खा लें तो उन्हें बदहजमी हो जाती है।

इसके सिवा शारीरिक परिश्रम करनेवालों की अपेक्षा मानसिक परिश्रम करने वालों की खूराक भी कम होती है। इसलिए मानसिक परिश्रम करनेवालों को ऐसा आहार अधिक करना चाहिए जो शीघ्र ही पच जाय। देर में हजम होने वाले भोजन कम खाने चाहिए। ऐसे भोजन करने चाहिए जो पुष्टिकारक और शक्तिवर्द्धक हों। मानसिक शक्तियों को बल देते हों। स्वास्थ्यवर्द्धक तथा रक्त को बढ़ानेवाले हों। मानसिक परिश्रम करनेवालों को दूध-दही, मट्ठा, शाक-भाजी, फल, मेवे तथा सुपाच्य वस्तुएँ अपने आहार में अधिक लेना उचित है।

कम और अधिक भोजन करने का प्रभाव

जिस प्रकार शरीर को अधिक तथा आवश्यकता के विरुद्ध भोजन करने से हानि पहुँचती है उसी प्रकार कम भोजन करना भी हानिकारक होता है। प्रायः पढ़ने-लिखनेवाले लड़के और लड़कियों में कम खाने की आदत पाई जाती है। लोग जान-बूझकर कम खाने की चेष्टा करते हैं। यह आदत अच्छी नहीं होती। इससे क्या-क्या हानियाँ होती हैं, उन्हें इस बात का ज्ञान नहीं होता। बहुत से लड़के लड़कियों में दुबले बने रहने की भावना होती है, इस कारण से वे कम भोजन करते हैं। किन्तु यह बहुत बड़ी भूल है, जिससे वे अपने शरीर को निर्बल बनाकर अस्वस्थ, असुन्दर और श्रीहीन कर देते हैं।

भोजन उतना करना चाहिए, जितनी आवश्यकता हो। अपनी आवश्यकता का स्वयं अनुभव होता है। यदि हमारा पेट अच्छे प्रकार से भर गया है और उसके बाद और अधिक खा लें तो हमें अधिकता का अनुभव होता है, इसी प्रकार जब भोजन कम किया जायगा तो कमी मालूम होती है। कम खाने तथा आवश्यकतानुसार भोजन की मात्रा शरीर में न पहुँचने से अनेक प्रकार की खराबियाँ शरीर में उत्पन्न हो जाती हैं। मुख्य बातें इस प्रकार हैं—

१—कम भोजन करने से आमाशय सूखने लगता है।

२—भूख कम होने लगती है।

३—पाचन-शक्ति मंद पड़ जाती है।

४—शरीर का वजन घटने लगता है।

५—शरीर के अंग निर्बल पड़ने लगते हैं।

६—परिश्रम करने की शक्ति कम हो जाती है।

७—दिमागी काम भी ठीक ठीक नहीं किया जा सकता।

८—शरीर में कोई न कोई रोग आक्रमण करता रहता है।

९—शरीर का विकास मारा जाता है।

१०—रक्त की कमी होती है।

११—शरीर दुबला-पतला सूखा और निर्बल दिखाई पड़ता है।

१२—समय के पूर्व बुढ़ापा आ जाता है।

१३—शक्ति की कमी होने के कारण जल्दी ही मृत्यु होती है।

इस प्रकार अनेक प्रकार की त्रुटियाँ शरीर में उत्पन्न हो जाती हैं। नीरोग दशा में भोजन आवश्यकता से कम करने का प्रभाव अच्छा नहीं पड़ता।

यदि अधिक भोजन करके उसे पचा लिया जाय तो उसका प्रभाव उतना बुरा नहीं पड़ता जितना कम भोजन करने से पड़ता है। यों तो अधिक भोजन करना भी हानिकारक है। अधिक भोजन के दो अर्थ होते हैं—एक तो खूराक का अधिक होना और दूसरा पेट खूब भर जाने के बाद भी किसी पदार्थ के स्वादिष्ट होने पर अधिक खा लेना। यहाँ पर मेरा मतलब अधिक भोजन से यही है कि आवश्यकता न होने पर भी अधिक खा लेना।

प्रायः लोग दावतों में भोजन करने पर अथवा किसी अच्छी चीज के बनने पर खूराक से अधिक खा जाते हैं। इसके अलावा कुछ ऐसे लोग भी हैं जो अनावश्यक अधिक खाने की आदत रखते हैं, इससे शरीर पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता। आहार मात्रा से अधिक खा लेने से न तो बल बढ़ता है और न कोई मोटा ही हो जाता है।

जिनको अधिक खाने का शौक हो अथवा आदत हो, उन्हें भरपूर परिश्रम करके पाचन शक्ति को तीव्र करना चाहिए। देहात के लोग तथा किसान भोजन बहुत अधिक करते हैं, किंतु उससे उन्हें प्रायः हानि नहीं होती। उनको साधारणतया अधिक भोजन की आवश्यकता पड़ती है, उनका भोजन बहुत जल्दी पच जाता है। इसका कारण यह है कि उनका कठिन परिश्रम सब-कुछ हजम कर देता है।

जो मनुष्य परिश्रम नहीं करते और भोजन अधिक करते हैं, उनके मेदे की वृद्धि होने लगती है और पेट बड़ा हो जाता है। ऐसी दशा में जिगर, स्नायु और पाचन इन्द्रियाँ कमजोर हो जाती हैं। इसके अतिरिक्त पेट के बढ़ जाने से शरीर का आकार बेडौल हो जाता है। प्रायः कब्ज की शिकायत बनी रहती है और शरीर में कितने ही विकार उत्पन्न हो जाते हैं।

भोजन के उपयोगी पदार्थों में मिलावट

भोजन का कोई भी पदार्थ आज विशुद्ध और स्वच्छ नहीं मिल पाता। इसका कारण यह है कि बाजार के व्यापारी और दूकानदार अधिक लाभ की दृष्टि से उनमें मिलावट कर देते हैं। ऐसा करने से व्यापारी या दूकानदार को लाभ तो हो सकता है पर उन पदार्थों को खरीदने और प्रयोग करनेवालों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

मिलावट की वस्तुओं में न वास्तविक वस्तु के तत्त्व ही होते हैं और न स्वाद। प्रायः मिलावट की चीजें स्वास्थ्य के लिए हानिकारक सिद्ध होती हैं। इनके प्रयोग से शरीर की प्राकृतिक स्थिति में अन्तर पड़ जाता है और निर्बलता उत्पन्न होने लगती है।

मिलावट का कार्य शहरों में बहुत बढ़ गया है। देहातों में भी अब इसका प्रचार हो गया है। देहात के दूध और घी वाले भी उससे बिल्कुल अछूते नहीं हैं। वे भी शहर के व्यापारियों की भाँति बेचनेवाली चीजों में अन्य निम्न कोटि के पदार्थ मिलाकर उनको बाजार में बेचने लाते हैं। दूध-घी में मिलावट करना तो एक साधारण बात है, ये लोग तो भूसे तक में मिलावट कर देते हैं। अन्य पदार्थों में भी इसी प्रकार मिलावट कर दी जाती है।

शहरों में चक्कियों और अन्न की दूकानों पर मिलावट के आटे, नये अनाजों में पुराने अनाज, पुराने चावलों में नये चावल मिलाकर बेचना नित्य का काम है। चावल में तो किनकी और महीन कंकड़ मिला देने से जल्दी कुछ पता नहीं चलता। यही बात बाजार के बने बिकनेवाले पदार्थों में भी होती है। मिठाइयों में अक्सर लौकी, केला, शकरकंद, घुइयाँ, आलू आदि मिला देते हैं। शक्कर में भी प्रायः आटे और मैदा की मिलावट देखी जाती है। आरारोट और साबूदाना आदि में भी कभी-कभी अन्य वस्तुओं का मिश्रण देखा जाता है। दूध, घी और तेलों का शुद्ध मिलना तो एक तरह से आज असंभव-सा हो रहा है।

दूध उसकी शुद्धता और उपयोगिता

दूध शरीर को पालनेवाला और शक्ति प्रदान करनेवाला एक तरल और उत्तम पदार्थ है। शरीर की प्रारम्भिक अवस्था में यह जीवन प्रदान करता है।

युवावस्था में शरीर-पुष्टि में सहायक होता है और वृद्धावस्था में निर्बलता रोकना इसका कार्य है। दूध में वे सभी तत्व पाये जाते हैं जो शरीर के विकास और पुष्टि में मुख्य रूप से कार्य करते हैं। दूध के इन गुणों पर ध्यान देते हुए यह आवश्यक है कि इसका उपयोग यथेष्ट मात्रा में और शुद्धता के साथ हो। यदि इन बातों पर समुचित ध्यान न दिया गया तो दूध से लाभ होने की सम्भावना बहुत कम रह जाती है। बच्चों पर इसका प्रभाव अधिक बुरा पड़ता है। उनके विकास में बाधा पड़ती है और शरीर रोगी तथा निर्बल हो जाता है। इन बातों को प्राय. सभी लोग जानते हैं, परन्तु फिर भी इनका पालन नहीं हो पाता। इसका कारण यह है कि अधिकाश लोगों को दूध बाजार से खरीदना पड़ता है। दूकानदार या ग्वाले अपने आर्थिक लाभ के कारण दूध में पानी मिला देते हैं। ऐसा करने से दूध पतला और गुण तथा स्वादहीन हो जाता है। दूध का अश बहुत कम पेट में पहुँचता है। देहात से लानेवाले, दूधवाले भी दूध में पानी मिलाकर ही बेचते हैं। शहर के हलवाई और दूकानदार पानी मिले दूध को पकाते समय, उसमें आरारोट या मैदा मिला देते हैं। ऐसा करने से दूध गाढ़ा हो जाता है, पर लाभप्रद नहीं रहता।

दूध के सबध में एक बात और देखने में आती है, वह यह कि उसमें स्वच्छता का अभाव होता है। शहरों में प्रायः ग्वालों की गाय, भैंसे या बकरियाँ पूर्ण स्वस्थ्य, नीरोग नहीं रहतीं। खुले स्थानों की कमी के कारण पशुओं को खुली धूप और वायु नहीं मिल पाती। साथ ही हरे चारे का भी प्रबन्ध बहुत ही कम होता है। पशु प्राय. बँधे रहते हैं और घूम नहीं पाते। पशु बाँधने के स्थान भी गन्दे रहते हैं। इससे पशु का रोगी हो जाना स्वाभाविक है। ऐसी दशा में दूध भी नीरोग और स्वच्छ नहीं रह पाता। एक दूसरी बात और है, बाजार के दूकानदार दूध को पकाते समय खुला ही रखते हैं। पकाने के बाद भी वह ढका नहीं जाता। मक्खियाँ और कीड़े-पतिंगे पड़ जाते हैं। धूल के साथ साथ अन्य रोग उत्पादक कीटाणु दूध में मिल जाते हैं। ये स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त हानिकारक सिद्ध होते हैं।

वर्तमान सरकार ने दूध की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए उसके सस्ते और शुद्ध विभाजन का प्रबंध किया है। जनता में दूध पहुँचाने के लिए

दूध व्यवसायी संस्थाएँ (Dairies) खोली गयी हैं। ये संस्थाएँ दो प्रकार की हैं। एक तो वे जो पशु-पालन और दूध-विक्रय का कार्य करती हैं दूसरी वे जो देहातों से दूध लाकर शहर में पहुँचाती हैं। पशु-पालन और दुग्ध विक्रय करने वाली सस्थाएँ बहुत कम दूध का प्रबन्ध कर पाती हैं और जन-साधारण को इससे लाभ उठाने का बहुत कम मौका मिलता है। जिन सस्थाओं में देहातों से दूध लाकर शहर में बेचने का प्रबंन्ध है। वे दूध सस्ता तो जरूर देती हैं पर उनके दूध में गाय, भैंस और बकरी आदि सभी का दूध मिश्रित रहता है। कभी कभी बासी दूध भी मिला रहता है, जिससे सारा दूध शीघ्र ही फट जाता है और पीने के लायक नहीं रहता।

इसी प्रकार शहरों में ग्वालों या देहात के दूध वालों से किसी भी मूल्य पर दूध लीजिए, उनके दूध में मिलावट अवश्य होती है। सामने दुहाने पर भी अभ्यासी अहीर अथवा दूध बेचनेवाले पानी मिलाने से बाज़ नहीं आते।

इस प्रकार यह देखने को मिलता है कि शहरों में दूध का शुद्ध और स्वच्छ मिलना अत्यन्त ही कठिन हो गया है। केवल वही लोग जो स्वयं पशु पालते हैं और अपने पशुओं को सफाई से रखते हैं, शुद्ध दूध का वास्तविक आनन्द उठा सकते हैं। कुछ लोग ग्वालों को प्रचलित से अधिक मूल्य देकर और स्वयं सामने दुहाकर दूध लेते हैं। उनके इस विशेष प्रबंध का भी प्रायः लाभ होती है, पर मूल्य आवश्यकता से अधिक चुकाना पड़ता है, साधारण व्यक्ति के लिए यह बहुत कठिन बात होती है।

दूध के अतिरिक्त, दूध से बननेवाली चीजें जैसे रबड़ी, मलाई, खोवा आदि में भी मिलावट कर दी जाती है। दूध में आरारोट मिलाने से रबड़ी गाढ़ी बनती है, मलाई भी मोटी पड़ती है और खोवा अधिक हो जाता है। मक्खन में बेचनेवाले चर्बी और केला वगैरह मिला देते हैं। घी में भी इसी प्रकार खूब मिलावट होती है।

घी, उसमें मिलावट

शुद्ध घी और मक्खन शरीर को पोषक तत्व देते हैं। पर इनमें मिलावट होने से इनकी उपयोगिता का नाश होता है और शरीर को इनसे हानि पहुँचती है। प्रायः घी बनाते समय मक्खन में वनस्पति घी मिला देते हैं। मट्ठा जल्

जाने के बाद घी में यह मिलावट मालूम नहीं होती। वनस्पति घी के अतिरिक्त घी में मूँगफली, महुआ, नारियल, गुल्लू और पोस्ते आदि के तेल भी मिला दिए जाते हैं। तेल मिलाने से घी पतला और दानेदार हो जाता है और मिलावट का पता नहीं चलता। कभी कभी घी में व्हाइट आयल की मिलावट भी पाई गई है। इन तेलों के अतिरिक्त कुछ लोग घी में चर्बी का मिश्रण भी कर देते देते हैं। ऐसा करने से घी में जमाव हो जाता है। ऐसा घी गर्म किए बिना कनस्टर से नहीं निकलता।

मिलावट के घी की गन्ध विशुद्ध घी की अपेक्षा कम होती है। पर इसका पहचानना बहुत कठिन होता है। कम मिलावटवाले घी की पहचान करना तो साधारण व्यक्ति के लिए असम्भव ही है। बाजार में विशुद्ध घी का मिलना अत्यन्त कठिन है। देहातों में भी शुद्ध घी नहीं मिलता। शहरों में वेजीटेबल आयल और देहातों में गुल्लू और मूँगफली के तेल की मिलावट तो आमतौर से होती है। वेजीटेबल आयल में जो सुगन्धि मिलाई जाती है, वह घी से काफी मिलती जुलती है। इसलिए घी में उसकी मिलावट का पता बिल्कुल ही नहीं चल पाता। देहातों में भी घी बेचनेवालों में वेजीटेबल आयल का प्रचार बहुत बढ़ गया है। वेजीटेबल आयल, घी की अपेक्षा अत्यन्त घटिया चीज है। यह शीघ्र पचता भी नहीं है तथा घी में पाए जानेवाले जीवन-तत्वों का इसमें पूर्ण अभाव होता है।

खाने का तेल

तेलों में दूध और घी की तरह प्रोटीन और विटामिन्स नहीं पाए जाते। फिर भी उनके द्वारा शरीर को उष्णता प्राप्त होती है। अधिकांश तौर पर सरसों का तेल भोजन में काम आता है। यह तरकारियों और शाकों के बनाने तथा शरीर और सिर में लगाने के काम में आता है। भोजन के दूसरे तेलों से रोचकता मारी जाती है। कहीं कहीं पर तिल और गरी का तेल भी खाने के काम में लाया जाता है। तेल, घी से बहुत सस्ता बिकता है, परन्तु मिलावट इसमें भी होती है। भोजन बनाने में जो तेल काम में आते हैं, उनमें सस्ते बाजारू तेलों को मिला देते हैं। इससे उनकी स्वाभाविकता नष्ट हो जाती है और स्वाद तथा गुण में भी अन्तर पड़ जाता है।

सरसों के तेल में लाही, महुआ, राई और सेहुआँ आदि के तेल को मिलावट कर देने से पता नहीं चलता। ये मिलावटवाले तेल सस्ते होते हैं, परन्तु उनके गुणों में अंतर पड़ जाता है और वास्तविक स्वाद भी नहीं रह जाता। इसी प्रकार तिल के तेल में भी कुसुम आदि का तेल मिला देते हैं। गरी के तेल में खनिज तैल (Mineral oil) का मिश्रण किया जाता है। खनिज तेल या निर्गंध मिट्टी का तेल अन्य तेलों में भी मिलाया जाता है। इससे तेल में चिकनापन नहीं रहता और पकाते समय तेल जलता अधिक है। मिलावट के तेलों में न तो उपयोगी गुण ही रह जाते हैं और न स्वाद ही। इनके प्रयोग करने से शरीर में चर्म रोग और पेट के विकार पैदा हो जाते हैं। सिर के बाल झड़ने लगते हैं और नेत्रों की ज्योति कम हो जाती है।

इस प्रकार खाद्य-पदार्थों में अनेक तरीकों से मिलावट की जाती है। मिलावट करनेवाले प्रायः व्यवसायी होते हैं और अधिक से अधिक लाभ उठाने के उद्देश्य से वे मिलावट का दूषित कार्य किया करते हैं। स्वार्थपरता की यह भावना व्यवसायियों में इतनी अधिक बढ़ गई है जिससे वे अपने धर्म और कर्तव्य का ज्ञान ही भूल गए हैं।

स्वार्थ-साधन के लिए समाज के स्वास्थ्य की परवाह न करना बहुत दूषित भावना है। यह एक ऐसा अक्षम्य अपराध है जिसकी अधिक से अधिक निन्दा होने की आवश्यकता है। व्यवसाय का यह दृष्टिकोण समाज के लिए घातक है। यदि व्यवसाय का यही उद्देश्य है तो वह सर्वथा निन्दनीय है।

व्यवसाय का उद्देश्य इस प्रकार दूषित नहीं होता। उसके द्वारा अपने परिश्रम के रूप में उतना ही लाभ उठाया जा सकता है, जिससे व्यवसायी को लाभ तो हो, परन्तु समाज को किसी प्रकार की क्षति न पहुँचती हो। व्यवसाय का यही अर्थ होता है। इसके विरुद्ध यदि व्यवसाय को समाज के प्रति अहितकर और अनिष्टकर बनाया जाय तो वह व्यवसाय नहीं, चोरी से भी अधिक निन्दनीय कार्य है।

भोजन की वस्तुओं में मिलावट करने से न केवल समाज को आर्थिक हानि उठानी पड़ती है, बल्कि उससे स्वस्थ और नीरोग जीवन को भी धक्का पहुँचता है। इसके द्वारा चर्मरोग, रक्त-विकार और कोष्ठबद्धता का जन्म होता है। भूख

कम लगती है, स्वास्थ्य दिन-पर-दिन गिरता और शरीर रोगी होता जाता है।

खाने के पदार्थों में मिलावट करने का कार्य देश और समाज के प्रति घातक भावना है। इस ओर सरकार और समाज दोनों को ध्यान देने की आवश्यकता है और व्यवसाय का यह उद्देश्य जिस प्रकार बदल सके, उसके बदलने की आवश्यकता है।

उत्तेजक और मादक वस्तुएँ

अधिकांश संख्या में लोग उत्तेजक अथवा मादक वस्तुओं का सेवन करने लगे हैं। इस प्रकार की चीजों का प्रभाव यद्यपि अच्छा नहीं पड़ता फिर भी प्रचार काफी बढ़ गया है। ऐसे बहुत कम लोग देखने को मिलते हैं जो इस व्यसन से दूर हों। इसका कारण यह है कि अधिकांश लोग इन वस्तुओं की हानि को नहीं समझते और शायद इसलिए सभ्य समाज में तमाम उत्तेजक पदार्थ प्रायः सत्कार के समय भी काम में लाये जाते हैं। चाय, काफी सिगरेट इत्यादि तो साधारण वस्तुएँ हैं। यहाँ तक कि शराब का प्रयोग भी ऐसे समय में होता है।

अधिकांश यही देखने में आता है कि मादक और उत्तेजक वस्तुओं की आदत एक बार पड़ने पर पीछा नहीं छोड़ती और प्रायः इतनी बढ़ जाती है कि उसका परिणाम हानि के सिवा और कुछ नहीं होता। ऋतु, और प्रदेश का प्रभाव भी उत्तेजक और मादक वस्तुओं के सेवन से सम्बन्धित है, सर्द प्रदेशों में ये पदार्थ यदि आवश्यकता से अधिक न लिए जायँ तो लाभप्रद सिद्ध होंगे, इसी प्रकार सर्दी की ऋतु में ये पदार्थ कम हानिप्रद होंगे, परन्तु गर्मी के दिनों में या गर्म देशों में इनका प्रभाव शरीर पर बुरा पड़ता है और मनुष्य के शरीर को ये पदार्थ भीतर ही भीतर कमजोर बनाते हैं।

मादक द्रव्यों का अभिप्राय नशीली चीजों से है। नशे की वस्तुएँ हानि पहुँचाने के सिवा कभी लाभ नहीं पहुँचातीं। किसी आवश्यकता के समय की बात और है। बाल्यवस्था और युवावस्था में इन चीजों का सेवन कदापि न करना चाहिए। तम्बाकू और शराब तो भूलकर भी प्रयोग में न लाना चाहिए। प्रायः बालकों में इस प्रकार की बुरी आदतें देखी जाती हैं। युवकों में तो इसका

प्रचार बहुत ही बढ़ गया है। यद्यपि स्त्रियों में शराब या तम्बाकू का प्रचार पुरुषों की अपेक्षा कम पाया जाता है, फिर भी एक अच्छी संख्या इस प्रकार की आदतों में मिलती है। स्त्रियाँ पुरुषों के संसर्ग से इस प्रकार की आदतें सीख लेती हैं। तम्बाकू का प्रचार तो स्त्रियों में काफी है। चाय और काफी तो अधिकांश घरों में स्त्री-पुरुषों के नित्य सेवन की वस्तुएँ बन गई हैं। न केवल प्रातः वरन् दिन में कई-कई बार लोग इनका सेवन करते हैं। इन वस्तुओं का प्रभाव अच्छा नहीं पड़ता। इसलिए इनसे सदा बचने की चेष्टा करनी चाहिए। मादक वस्तुओं के प्रयोग का क्या प्रभाव पड़ता है, और उनके द्वारा किस प्रकार की शारीरिक शक्ति पैदा होती है, इसे मैं संक्षेप में यहाँ बताने की कोशिश करूँगी।

चाय

आज न केवल भारत में ही वरन् सम्पूर्ण संसार में चाय का सबसे अधिक प्रचार है। यह एक सस्ता, उत्तेजक पेय है। इसमें, शरीर में उष्णता पैदा करने और कुछ समय के लिए थकावट दूर करने का गुण होता है। मस्तिष्क को विश्राम प्रदान करने का गुण भी इसमें पाया जाता है। यह एक हलका नशा है और इसीलिए पीने के बाद कुछ समय के लिए फुर्ती भी आ जाती है। इसके अतिरिक्त ठण्ढ के कारण उत्पन्न जुकाम और कफ में भी चाय से फायदा पहुँचता है। सर्दी के दिनों में अधिक मात्रा में चाय पीना हानि नहीं पहुँचाता। इसके द्वारा जाड़े के दिनों में गरमी पैदा होती है और पसीना निकलने से अनेक प्रकार के विकार शरीर से दूर होते हैं। यदि चाय अधिक न पी जाय तो उससे कुछ परिस्थितियों में लाभ भी होता है।

ऊपर लिखी बातों का यह अभिप्राय नहीं है कि चाय से केवल लाभ ही होते हैं। वह लाभ की अपेक्षा हानिकारक अधिक है। इसलिए कि चाय पीने-वालों के संयम और नियम की रक्षा नहीं हो सकती। चाय एक मादक द्रव्य है और किसी भी प्रकार का नशा शरीर के तन्तुओं को शक्ति नहीं दे सकता, यद्यपि थोड़ी देर के लिए वह स्फूर्ति उत्पन्न कर देता है। चाय के सेवन से हृदय की गति तीव्र हो जाती है। पेट में प्रायः जलन होने लगती है और अधिक पी लेने पर नींद भी नहीं आती। चाय के प्रभाव में आलस्य का

प्रादुर्भाव होता है और शरीर में पीड़ा का अनुभव होता है। थकावट बनी रहती है। पेट साफ न होने की शिकायत रहती है। भूख मारी जाती है। इसके प्रभाव में हृदय में अशान्ति रहती है। अधिक चाय पीनेवाले तो प्रायः चाय पिये बिना टट्टी भी नहीं जा सकते। मुँह में पानी आने की शिकायत भी चाय पैदा करती है।

चाय का प्रभाव मनुष्य के भोजन के साथ सबंध रखता है। जो लोग अपने भोजन में घी-दूध, मक्खन इत्यादि स्निग्ध पदार्थ अधिक मात्रा में लेते हैं, उन पर चाय का दूषित प्रभाव जल्दी काम नहीं करता, परन्तु रूखा भोजन करनेवालों पर चाय शीघ्र ही अपना दुष्परिणाम पैदा करती है।

काफी

चाय के अतिरिक्त समाज में काफी का प्रचार भी अधिक बढ़ गया है। चाय के समान काफी भी उत्तेजक वस्तु है। इसमें चाय की अपेक्षा रूक्षता अधिक होती है। सर्दी के दिनों में तो काफी का थोड़ा सेवन कर भी सकते हैं परन्तु गरमी में तो यह अत्यंत हानिकारक है। काफी मस्तिष्क में स्फूर्ति पैदा करने के लिए विशेष रूप से शक्तिवान होती है, लेकिन अधिक मात्रा में इसका सेवन करने से उसका दूषित परिणाम तुरत काम करता है। नाड़ी की गति तीव्र हो जाती है और शरीर के तन्तुओं में कड़ापन आ जाता है। काफी पीने से थकावट में आराम मिलता है परन्तु चाय की भाँति इसके सेवन से भी अनिद्रा की शिकायत हो जाती है। पाचन शक्ति पर काफी का बुरा प्रभाव पड़ता है और कोष्ठबद्धता सहज ही उत्पन्न हो जाती है। इसके साथ साथ खट्टी डकारें भी आने लगती हैं। जिनकी पाचन-शक्ति निर्बल होती है, उनको दस्त की शिकायत हो जाती है। काफी के पीने से पित्त उत्तेजित होता है, तथा मधुमेह की भी शिकायत पैदा हो जाती है। भोजन करने के उपरान्त इसका अधिक सेवन हृदय में दाह उत्पन्न करता है। कुछ उपयोगी तत्वों के कारण काफी का प्रयोग औषधि के रूप में भी किया जाता है। अफीम और अधिक शराब के नशे को दूर करने में काफी गुणकारी सिद्ध हुई है। हृदय के रोगों में काफी औषधि के रूप में दी जाती है।

कोको

चाय और काफी से अत्यन्त भिन्न होते हुए भी कोको में उत्तेजना तथा

स्फूर्ति उत्पन्न करने का स्वभाव होता है। चाय और काफी की भाँति इसके सेवन से अनिद्रा कायम नहीं रहती। तथा पाचन-क्रिया पर इसका उस समय तक कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता जब तक कि इसका सेवन उचित मात्रा से अधिक न किया जाय। इसमें पुष्टिकारक तत्व भी पाये जाते हैं और चर्बी भी यथेष्ट होती है। यद्यपि उत्तेजना पैदा करने की शक्ति कोको में चाय या काफी के समान नहीं होती, परन्तु पोषक तत्व इन दोनों की अपेक्षा अधिक होते हैं। इस अर्थ में तो यह दूध से थोड़ा मिलता जुलता पेय पदार्थ है। परन्तु अधिक स्निग्ध होने के कारण निर्बल पाचन शक्तिवाले व्यक्ति पर कोको का प्रभाव हानिकारक होता है।

शराब

शराब एक मादकद्रव्य है। यह मनुष्य की वास्तविक स्थिति को थोड़े समय के लिए भुला देती है। तथा मस्तिष्क को चिंताओं से क्षणिक विश्राम प्रदान करती है। शराब उत्तेजक वस्तु है परन्तु यह उत्तेजना थोड़े समय के लिए रहती है और शीघ्र ही खुमारी तथा आलस्य की भावना पैदा कर देती है।

शराब मस्तिष्क को स्फूर्ति देने में भी एक अद्भुत कार्य करती है। साथ ही हृदय की धड़कन और नाड़ी की गति भी इससे तीव्र हो जाती है। रक्त का सचालन भी बढ़ जाता है। पीने के समय प्रायः मुँह पर लाली दौड़ जाती है और उष्णता का अनुभव होने लगता है। उचित मात्रा में शराब का सेवन क्षुधा-शक्ति बढाता है परतु इसकी आदत इतनी बुरी होती है कि एक बार पड़ जाने पर फिर उसका छूटना कठिन हो जाता है। इतना ही नहीं इसमें किसी प्रकार का सयम नहीं रहता।

अधिक मात्रा होने पर शराब भूख को मारती है। तिल्ली और जिगर पर इसका विषाक्त प्रभाव पड़ता है। फेफड़ों में विकार उत्पन्न हो जाते हैं। खाँसी और दमा की शिकायत पैदा हो जाती है। रक्त विकार हो जाते हैं तथा शरीर सूखने लगता है। शराब पीने के आदी व्यक्तियों के शरीर में रूखापन तथा फीकापन आ जाता है। खून मे चर्बी की अधिकता हो जाती है और रसायन क्रिया मंद हो जाती है। शराब स्नायु-तन्तुओं को निर्जीव बनाने का कार्य करती है और ज्ञानेन्द्रियों को निर्बल बनाती है। इससे शक्ति का ह्रास होता है। और आयु क्षीण हो जाती है।

शराब हृदय के रोग में विशेष रूप से हानिकारक है। स्निग्ध पदार्थों का अधिक सेवन करनेवाले लोगों पर शराब का दूषित प्रभाव जल्दी काम नहीं करता परन्तु रूखा भोजन करनेवालों पर इसका सेवन अनेक प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न करता है। अधिकारियों का कहना है कि पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों पर इसका दूषित प्रभाव अधिक होता है। युवकों और बालकों को तो इसका सेवन भूलकर भी न करना चाहिए।

भाँग

भाँग भी एक मादक वस्तु है। बहुत से लोग नियमित रूप से इसका सेवन करते हैं। यह मस्तिष्क को स्फूर्ति देने तथा भूख को बढ़ानेवाली होती है। भाँग पीने के बाद मीठी चीजों के खाने की इच्छा होती है इसकी आदत भी बहुत कठिनाई से छूटती है। भाँग पीने पर कुछ समय के लिए प्रायः कष्ट और दर्द कम अनुभव होते हैं। यदि भाँग का अधिक सेवन न किया जाय तो इससे कोई विशेष हानि साधारणतया नहीं होती अधिक मात्रा में भाँग पी लेने से जी घबराता है और सिर में चक्कर आने लगते हैं।

भाँग में बादाम, मुनक्का तथा अन्य ठण्डाई की वस्तुएँ मिला लेने से उसका स्वाद भी बढ़ जाता है। साथ ही इसका दूषित प्रभाव भी कम हो जाता है। अधिक स्निग्ध जातीय भोजन करनेवालों पर भाँग का हानिकारक प्रभाव देर में काम करता है। इससे चर्बी बढ़ती है और निरंतर सेवन करनेवालों के पेट बढ़ जाते हैं। नित्य सेवन करनेवालों को यदि किसी दिन भाँग न मिले तो बेचैनी मालूम होती है और शरीर में पीड़ा का अनुभव होता है। साथ ही भोजन की इच्छा मारी जाती है। लोगों का कहना है कि यदि भाँग उचित मात्रा में ली जाय तो इससे हानि नहीं होती।

सिगरेट, बीड़ी और तम्बाकू

क्या छोटे या बड़े क्या अमीर क्या गरीब, आज सभी प्रकार के लोगों में तम्बाकू के सेवन की आदत किसी न किसी रूप में पाई जाती है। कोई इसे पीकर सन्तुष्ट हो जाता है। और कोई तम्बाकू खाने का आदी होता है। इसका प्रयोग संसार के प्रायः सभी देशों में पाया जाता है। इसका प्रचार आज से नहीं

प्राचीन काल से है। देहातों में कुछ लोग हुक्के और चिलम के द्वारा तम्बाकू का प्रयोग करते हैं। इसे पीने की तम्बाकू कहते हैं। जो लोग पीते नहीं हैं, वे खाने के आदी होते हैं। शहरों में सिगरेट और बीड़ी का प्रचलन है, और अब तो देहातों में भी आम तौर पर सिगरेट-बीड़ी का प्रचार बढ़ रहा है। सिगरेट और बीड़ी-तम्बाकू का ही एक परिष्कृत रूप है। इसीलिए खाने और पीनेवाली तम्बाकू का स्थान सिगरेट और बीड़ी ले रही हैं। आज हालत यह है कि संसार के समुन्नत देश इंगलैण्ड, अमेरिका और फ्रांस में सिगरेट के कितने ही कारखाने हैं भारत में सिगरेट-बीड़ी बनाने के कारखानों की संख्या उत्तरोत्तर बढ रही है। शरीर को भीतर ही भीतर जलानेवाला यह दूषित व्यापार मानव-समाज के लिए कितना घातक है, इसको जानते हुए भी आज समाज उसका अनुयायी हो रहा है। यह दुख की बात है।

तम्बाकू को पीने से उत्तेजना मिलती है। शरीर और मन की थकावट पर भी उसका प्रभाव कुछ काम करता है। परंतु इस प्रकार के प्रभाव कभी भी लाभकारी नहीं होते। तम्बाकू खाने या पीने से बार-बार थूकना पड़ता है। इसलिए पाचन-क्रिया पर उसका बुरा प्रभाव पड़ता है। हृदय में धड़कन बढ़ जाती है। चक्कर आने लगते हैं। तम्बाकू पीनेवालों के गले में छोटी-छोटी गाँठें पैदा हो जाती हैं। तम्बाकू का धुआँ आँखों के लिए हानिकारक होता है और नेत्रों की ज्योति कम कर देता है। खाने की अपेक्षा, पीना अधिक हानिकर होता है।

तम्बाकू पीनेवालों को आमतौर पर खाँसी और कफ की शिकायत हो जाती है। यही शिकायत आगे चलकर कुछ लोगों में दमें का रोग पैदा कर देती है। तम्बाकू के साथ साथ गाँजा और चरस का सेवन भी आजकल साधारण श्रेणी के लोगों में बढ़ता जा रहा है, जिससे समाज के स्वास्थ्य को बड़ी हानि हो रही है।

मसाले

भोजन में मसालों का प्रयोग हमारे देश में बहुत प्राचीन काल से चला आ रहा है। विभिन्न प्रकार के मसाले भोजन में स्वाद और सुगन्धि पैदा करने के लिए मिलाए जाते हैं। यदि मात्रा अधिक न हो तो पाचन-क्रिया में इन मसालों से लाभ पहुँचता है। इनके सेवन से क्षुधा बढ़ती है। कुछ

मसाले तो कीटाणुओं का नाश करनेवाले होते हैं और दुर्गन्ध का भी नाश करते हैं। इनमें वायु-विकार दूर करने का भी गुण होता है।

मसालों के साथ साथ नमक का भी हमारे सामने एक प्रश्न है। प्रकृति ने खाद्य पदार्थों में नमक पैदा किया है, फिर भी इसकी आवश्यकता भोजन पकाने के समय पड़ती है। शाक और तरकारियों में स्वभावत. नमक होता है। यदि उनमें ऊपर से नमक का प्रयोग न किया जाय तो अधिक अच्छा है, लेकिन सर्वसाधारण इसके लिए ऐसे आदी हो रहे हैं कि बिना ऊपरी नमक मिलाए अपना काम नहीं चला सकते।

नमक के अतिरिक्त हलदी, धनियाँ, जीरा, इलायची, लौंग, दालचीनी, तेजपात, मिर्च, अजावइन, मेथी, राई, हींग आदि का प्रयोग मसालों के रूप में होते हैं। हलदी दूषित वायु का नाश करती है। साथ ही भोजन में सुंदर रंग भी लाती है। हलदी से भोजन में रोचकता बढ़ जाती है। इसी प्रकार धनियाँ भी भोजन में स्वाद और सुगंध बढ़ाती है तथा वात-नाशक होती है। अन्य मसाले भी यदि उचित मात्रा में खाए जायँ तो भोजन में स्वाद और रोचकता उत्पन्न करते हैं।

भोजन में मसालों का प्रयोग कम-से-कम होना चाहिए। अधिक मात्रा में प्रयोग करने से भोजन गरिष्ठ तथा गर्म हो जाता है। लोग, लाल मिर्च अधिक खाने लगे हैं, इससे हानि अधिक होती है। मसालों के साथ अदरक, प्याज, लहसुन और पोदीने, का प्रयोग भी करना चाहिए। पक्की या ताजी खटाई की साधारण मात्रा भी भोजन में आवश्यक होती है।

चटनी, अचार और रायता

खट्टे पदार्थों का उपयोग भोजन को स्वादिष्ट और सुगमता से पचने वाला बना देता है। इनके सेवन से रुचि और क्षुधा बढ़ती है। यही कारण है कि प्राय. अधिकांश लोग भोजन में चटनी, अचार तथा रायता आदि का उपयोग करते हैं। चटनी, अचार आदि में सिरके का प्रयोग भी किया जाता है। आम नींबू, आलूबुखारा, आँवला, कमरख, करौंदा, कैथा तथा इमली, अदरख इत्यादि चटनी और अचार के काम में लाये जाते हैं। छुहारा किशमिश आदि का भी अचार बनाया जाता है। इसके अतिरिक्त पोदीना या हरा धनिया चटनी में

मिलाई जाती है। प्याज़ और लहसुन भी इनके साथ प्रयोग में लाया जाता है। दही या मट्ठा में बनाये हुए रायते भी रुचिकर तथा भूख बढ़ानेवाले होते हैं।

खट्टे पदार्थ उचित मात्रा में सेवन करना न केवल स्वादपूर्ण अथवा क्षुधा-वर्द्धक ही होता है। वरन् शरीर की पुष्टि में भी सहायक होता है। शरीर में उत्पन्न होनेवाले रक्त-विकारों में इनसे लाभ होता है। इस प्रकार खट्टे पदार्थों के गुणों को देखते हुए चटनी, अचार, रायता इत्यादि का भोजन के साथ सेवन करना आवश्यक है। परन्तु इनका अधिक सेवन करना हानिकारक होता है। अधिक अचार तथा चटनी खाने से आलस्य और शिथिलता का अनुभव होता है। इनके अधिक प्रयोग से शरीर में कृशता की वृद्धि होती है। नेत्रों पर भी इनका बुरा प्रभाव पड़ता है। चर्म रोगों के उत्पन्न होने का भय रहता है। शरीर में रूखापन मालूम होता है तथा कांति नष्ट होती है। मीठे अचार दाँतों पर भी अपना बुरा प्रभाव डालते हैं। सिरके के प्रयोग से नाक से रक्त गिरने लगता है। तेज मसालेदार अचार भी रक्त दोष उत्पन्न करते हैं।

रायता अचार की अपेक्षा हितकर होता है, यदि वह कई दिनों का बासी न हो। दही और मट्ठा शरीर को पोषक तत्व देते हैं और इनके अधिक सेवन से नुकसान होने की सम्भावना नहीं रहती। नीबू, आँवला और आलूबुखारा भी अच्छी मात्रा में लिए जा सकते हैं। इनके खाने से रोगों में लाभ होता है।

भोजन की नवीन प्रणाली में मसालों का विरोध किया जा रहा है, इसे कभी न भूलना चाहिए। इनका प्रयोग पुराना है। नवीन धारणा इनके विरुद्ध काम कर रही है। इसलिए स्पष्ट रूप से अधिकारियों ने बताया है कि मसालों का प्रयोग यदि भोजन में बिल्कुल न किया जाय तो अधिक अच्छा है। इसलिए कि इनके द्वारा भोजन के पदार्थों के वास्तविक गुण यथोचित रूप में कहीं-कहीं पर काम नहीं कर पाते। इस पुस्तक में मैंने मसालों का कहीं विरोध नहीं किया। यह समझते हुए भी कि उनका व्यवहार हितकर होने के स्थान पर प्रायः हानि-कारक अधिक हो जाता है। फिर भी समाज की मनोवृत्ति इस नवीन धारणा को स्वीकार करने के पक्ष में नहीं है। इसलिए विरोध न करके मैं इतना अवश्य लिखना चाहती हूँ कि भोजन की वस्तुओं में मसालों का प्रयोग कम से कम किया जाय।

प्राय भोजन बनानेवाली स्त्रियों का विश्वास रहता है कि मसाला आदि डालने से ही भोजन स्वादिष्ट बनता है। और कुछ खानेवाले भी इसी श्रेणी के होते हैं। परंतु वास्तव में बात ऐसी नहीं है। रुचिवर्धक होने पर भी मसाले ही उनके द्वारा अहित भी होता है। जिस आधार पर भोजन की नवीन खोजों में मसालों का विरोध किया जा रहा है, उन्हें मैं यहाँ लिखना नहीं चाहती। संक्षेप में इतना ही जान लेना काफी होगा कि मसालों का प्रयोग कम-से-कम करने की आदत डाली जाय।

उत्तेजक और मादक वस्तुएँ प्रत्येक अवस्था में हानिकारक होती हैं। कहीं औषधि के रूप में उनका प्रयोग किया जाता हो, मैं उसकी बात नहीं करती। साधारण रूप में उनके द्वारा शारीरिक क्षय होता है। शक्तियाँ निर्बल होती हैं। मन के भाव दुर्बल होने लगते हैं। पाचन-क्रिया धीरे धीरे शक्तिहीन होती जाती है। उत्तेजक और मादक वस्तुओं ने कभी किसी को लाभ नहीं हुआ। इस प्रकार के लोगों का स्वास्थ्य नष्ट हो जाता है और शरीर रोगों का घर बन जाता है। जो लोग इनके अभ्यासी हो जाते हैं, वे अपने जीवन का नाश अपने ही हाथों करते हैं।

भोजन की व्यवस्था और जानकारी

जिसने हमें पैदा किया है, उसी ने हमारी जीवन रक्षा की व्यवस्था की है। जीवित रहने के लिए हमें अनेक प्रकार के भोजनों की आवश्यकता है। जो भोजन हमें जीवित रखता है, वह अनेक प्रकार के पदार्थों से बनता है। सभी के गुण और स्वभाव अलग अलग होते हैं। उनके साथ हमारे जीवन और मरण का संबंध है। इसलिए उनसे हमें जितनी ही जानकारी होगी, उतना ही हमें लाभ होगा और उनसे अपरिचित होने पर हमें पग-पग पर रोगों और शारीरिक विपदाओं का सामना करना पड़ेगा। यह अनिवार्य है।

इन बातों का अर्थ यह है कि प्रकृति ने अपने रचना कार्य में एक निश्चित व्यवस्था रखी है, उसका समझना और जानना आवश्यक है। बिना नियम और व्यवस्था के संसार का कोई कार्य नहीं होता। प्रकृति भी व्यवस्था के साथ ही

बँधी हुई है। हमारे सपूर्ण जीवन में एक निश्चित् व्यवस्था है। इससे हमारे भोजन की समस्या भी किसी प्रकार अलग नहीं है। इसलिए यदि उसके नियमों को, उसके गुणों और स्वभावों को मनुष्य नहीं जानता तो उसकी क्षति और वेदना एवं प्रतिकूलता का परिणाम उसको स्वय उठाना पड़ेगा।

भोजन की समस्या साधारण नहीं है। उस पर मनुष्य का जीवन-मरण दोनों निर्भर हैं। जिसे भली भाँति उसका ज्ञान है, वह स्वस्थ और नीरोग जीवन का सुख उठाता है और जिसे उसके सबध में किसी प्रकार की जानकारी नहीं है, वह शरीर के समस्त सुखों से वंचित रहता है। इसलिए उसके संबध में जितनी जानकारी प्राप्त की जा सके, उतना ही लाभ होता है।

भोजन की समस्या एक मनोवैज्ञानिक समस्या है। जिसके संबंध में नित नए अनुसधान हो रहे हैं। मनुष्य जितना ही उनको जानने की कोशिश करता है, उतना ही वह उनसे परिचित होता है और अपनी जानकारी के लिए उसके मनोभावों में प्रोत्साहन पैदा होता है।

भोजन की व्यवस्था के सबध में सभी प्रकार की जानने योग्य बातें पिछले पृष्ठों में लिखने की चेष्टा की गई है। उनकी जानकारी की आवश्ककता है। व्यवस्था के बाद जानकारी होती है और जानकारी के बाद ही उससे लाभ उठाया जा सकता है।

भोजन के कार्य

खाद्य पदार्थों के गुणों और कार्यों के संबध में लिखा जा चुका है। उनसे ज्ञात होता है कि जो कुछ हम खाते हैं, उनसे प्रोटीन, विटामिन्स, चर्बी, शक्कर, लवण आदि कई प्रकार के तत्व हमें प्राप्त होते हैं। यह बात तो समझ में आ गई कि हमारे भोजन में उन पदार्थों का होना आवश्यक है, जिनसे ऊपर लिखे हुए पोषक तत्व हमें प्राप्त हों। इसके साथ-साथ हमारी एक आवश्यकता और है, वह यह कि हमारे शरीर को इन तत्वों में से जिसकी जितनी आवश्यकता हो, उसकी उतनी ही मात्रा हमें मिलनी चाहिए।

यह तत्व यदि अधिक मात्रा में शरीर को प्राप्त होते हैं तो भी हानि है और यदि आवश्यकता से कम मिलते हैं, तो शरीर दुर्बल होता है और उसमें

रोगों के आक्रमण होते हैं। इसलिए प्रकृति के नियमानुसार जिस तत्व की जितनी आवश्यकता होती है, उसका उतना ही मिलना आवश्यक है। न तो वह कम हो और न अधिक।

जो भोजन किया जाता है, शरीर के भीतर पहुँचने पर उसके दो काम होते हैं, पाचन-कार्य और मल के विसर्जन का कार्य। जिस शक्ति के द्वारा भोजन के पोषक और आवश्यक तत्वों को अलग किया जाता है, उसे पाचन-शक्ति कहते हैं। इसके द्वारा भोजन से रस, रक्त और मांस आदि का निर्माण होता है। भोजन का अनुपयोगी अंश मल कहलाता है।

स्वस्थ और नीरोग जीवन प्राप्त करने के लिए भोजन की व्यवस्था का ज्ञान होना बहुत आवश्यक है। कितनी ही वस्तुएँ खाने में स्वादिष्ट होती हैं। इसीलिए वे अधिक खाई जा सकती हैं। किन्तु उनमें से अधिकांश गरिष्ट होती हैं। यदि सुरुचिपूर्ण होने के कारण उन्हें अधिक खा लिया जाता है तो अपच हो जाना स्वाभाविक है और अपच ही रोगों का एकमात्र कारण है। इसी प्रकार खाने की अनेक वस्तुएँ हितकर होने पर भी अरुचिकर होती हैं अथवा यों कहा जाय कि वे स्वादिष्ट नहीं होतीं। यदि स्वादिष्ट न होने के कारण उन्हें कम खाया जायगा तो शरीर में दुर्बलता की वृद्धि होगी। इसलिए भोजन में यह तो आवश्यक है कि सुरुचि का ध्यान रखा जाय। किन्तु स्वादिष्ट और अस्वादिष्ट होने के कारण ही हमें किसी भोजन का निर्णय न करना चाहिए। मुख्य बात तो यह है कि उसकी उपयोगिता पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। यदि भोजन की कोई वस्तु लाभदायक और उपयोगी नहीं है, तो स्वादिष्ट होने के कारण उसके खाने से क्या लाभ होगा!

मिलनेवाले तत्वों की मात्रा

यह बार-बार लिखा जा चुका है कि हमें खाद्य पदार्थों का ज्ञान होना [चा]हिए। जानकारी न होने के कारण मनुष्य के खाने और पीने में कितनी ही [ची]जें ऐसी व्यवहार में आती हैं जो लाभ पहुँचाने के स्थान पर हानि पहुँचाती [हैं]। इसलिए भोजन में सबसे पहला निर्णय इस बात का होना चाहिए कि [हमा]रे खाने के पदार्थ क्या हैं। जिनसे हमारे शरीर को लाभ नहीं पहुँचता

कूल न बनाने से, जो दुष्परिणाम होते हैं, वे किसी से छिपे नहीं हैं।

भोजन की असावधानी के कारण ही चौबीस-पच्चीस वर्ष की अवस्था में स्त्रियाँ बूढ़ी हो जाती हैं और अट्ठाइस तीस वर्ष की उम्र तक पहुँचते २ पुरुष बूढ़े दिखाई देने लगते हैं। पन्द्रह-सोलह वर्ष की अवस्था में लड़कों के सिर के बाल सफेद होने लगते हैं। जवानी में ही स्त्रियों और पुरुषों के दांत अपना स्वास्थ्य खो बैठते हैं। इन सभी बातों का कारण क्या है?

यदि भोजन का क्रम ठीक हो, शरीर की आवश्यकतानुसार खाने और पीने की चीज़ें मिलें तथा भोजन में उन पदार्थों का अभाव न हो जिनसे पौष्टिक तत्त्व प्राप्त होते हैं तो समय से पूर्व न कभी कोई बूढ़ा हो सकता है और न कभी कोई निर्बल अथवा रोगी। दांतों की निर्बलता और बालों का सफेद होना अयोग्य भोजन का परिचय देता है। इसलिए भोजन के सम्बन्ध में जो उपेक्षा और अवहेलना की जाती है, उसका स्पष्ट अर्थ यह है कि जान-बूझकर शरीर को रोगी और निर्बल बनाया जा रहा है।

भोजन बनाने का कार्य

भोजन बनाने के ऊपर, भोजन की उपयोगिता बहुत-कुछ निर्भर है। खाने के पदार्थ यदि उपयोगी हैं, किन्तु उनके बनाने का ढंग ग़लत हो तो सम्पूर्ण उपयोगिता व्यर्थ हो जाती है और भोजन से जो लाभ होना चाहिए, वह बहुत कम हो पाता है।

भोजन बनाने का कार्य तो प्रायः सभी कर लेते हैं फिर चाहे वे स्त्री हों अथवा पुरुष। परन्तु भोजन बनानेवाले को किन बातों का ज्ञान होना चाहिए, इसकी सावधानी बहुत कम मिलेगी। इसका कारण यह है कि भोजन के सम्बन्ध में जिस प्रकार की जानकारी होनी चाहिए, उसका ज्ञान साधारण रूप में न तो खानेवालों को होता है और न बनानेवालों को। इसलिए जैसा कुछ रवैया इसके सम्बन्ध में चल रहा है, वह सब लोगों की आँखों के सामने है।

हमारे देश में आम तौर पर गेहूँ खाया जाता है, गेहूँ को पीसकर अथवा पिसाकर उसकी रोटियां बनती हैं। पूड़ी, पराठे और कचौड़ी भी बनाई जाती हैं। गेहूँ के आटे का हलुवा भी बनता है।

भोजन बनाने की असावधानी आटे के साथ ही आरम्भ हो जाती है।

वास्तव में आटा बहुत बारीक न होना चाहिए। अधिक बारीक आटा गरिष्ठ होता है। मोटा पिसा हुआ आटा सरलतापूर्वक हज़म होता है। लेकिन आम तौर पर लोगों को मैंने बारीक आटा पसन्द करते देखा है।

बहुत मोटी बात यह है कि हाथ की चक्की का पिसा हुआ आँटा अधिक लाभदायक होता है। इसका कारण यह है कि बिजली से चलनेवाली आँटा-चक्कियों में जो अनाज पीसे जाते हैं, उनके विटामिन्स नष्ट हो जाते हैं। वास्तव में उनके विटामिन्स ही हमारे काम के हैं। यदि आटे के सभी विटामिन नष्ट हो जाय तो आटे के रूप में केवल राख रह जाती है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि मशीनों के पिसे हुए गेहूँ के आटे की रोटी की अपेक्षा हाथ-चक्की के आटे की रोटियाँ अधिक स्वादिष्ट, रुचिकर और मीठी होती हैं। बिजली-वाली चक्कियों का आटा इन गुणों को खो देता है। इसीलिए उसकी रोटी या पूरी में न तो मिठास होती है और न उसमें स्वाद रह जाता है।

यह एक साधारण बात है और अधिकांश लोग इसे जानते हैं, लेकिन शहरों से लेकर देहातों तक हाथ की चक्कियों का काम समाप्त हो गया है और बिजलीवाली चक्कियां ही आम तौर पर काम कर रही हैं। इसका फल यह होता है कि उस आटे की जो रोटियां खाई जाती हैं, उनसे न तो शरीर को शक्ति मिलती है और न पौष्टिक अंश। फलस्वरूप शरीर दिन-पर-दिन दुर्बल होते जाते हैं और स्वास्थ्य नष्ट होता जाता है।

आटे के सम्बन्ध में ही एक बात और है और वह यह कि उसकी भूसी निकालकर फेंक दी जाती है अथवा जानवरों के काम में आती है। जो ऐसा करते हैं, उन्हें नहीं मालूम कि आटे के अधिकांश पोषक तत्व उसकी भूसी में ही मिलते हैं। इसीलिए जिनको इस बात का ज्ञान होता है, वे उस भूसी को निकाल कर कभी अलग नहीं करते। चलनी से चालने का कार्य इसलिए होना चाहिए, जिससे आटे में कुछ कूड़ा और कर्कट न चला जाय, परन्तु उसकी भूसी निकालने का कार्य अच्छा नहीं है।

इस बात को कभी न भूलना चाहिए कि गेहूँ के आँटे की भूसी में पौष्टिक अंश होता है। इसीलिए प्रायः चोकरदार रोटी बनाने की लोगों को सलाह दी जाती है। चोकर या भूसी निकाल देने से दो प्रकार की खराबियाँ पैदा होती हैं।

एक तो यह कि आँटे के पौष्टिक अंश निकल जाते हैं, जिसके कारण उससे बनी हुई कोई भी चीज नीरस, फीकी और अस्वादिष्ट होती है। दूसरी खराबी यह होती है कि चोकर या भूसी निकल जाने से उस आँटे से जो चीज बनाई जाती है, उसका पाचन कुछ दुस्तर हो जाता है।

इस आँटे के सम्बन्ध में एक बात और है। रोटी, पूड़ी, कचौड़ी, पराठे अथवा और जो कुछ भी बनाया जाता है, उसमें एक बड़ी भूल यह की जाती है कि आग का ध्यान नहीं रखा जाता। आग पर पकाते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि आग बहुत तेज न हो। हलकी आँच पर पकाने से बननेवाली चीज रुचिकर और स्वादिष्ट बनती है। तेज आँच पर पकाने से उसके विटामिन्स जल जाते हैं और बननेवाली चीज का स्वाद मारा जाता है।

धीमी आग पर पकाने से समय कुछ अधिक लगता है लेकिन भोजन के पदार्थों की रक्षा होती है। समय के कम लगने पर भी भोज्य पदार्थों का यदि पौष्टिक अंश ही जलकर नष्ट हो गया तो उसके खाने से क्या लाभ हो सकता है। इसलिए सदा इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि जो खाना आग पर पकाया जाय, उसकी आँच हल्की रखी जाय।

भोजन की दूसरी वस्तुओं के पकाने के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार की सावधानी की आवश्यकता होती है। दाल, चावल और तरकारियाँ—धोने के समय भी इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उनसे मिलनेवाली प्रोटीन और विटामिन्स नष्ट न होने पावें। धोने के समय हलके हाथों से मलकर अथवा धोकर फेंक देना चाहिए। कुछ लोग बहुत देर तक उन चीजों को पानी में भिगो देते हैं और बाद में उस पानी को फेंककर उन चीजों को आग पर चढ़ाते हैं। इसका फल यह होता है कि अधिक समय तक भीगने से उनके विटामिन्स जल में चले जाते हैं और उस जल के फेंक देने से उन वस्तुओं का विटामिन निकल जाता है। इसलिए ऐसा कभी न करना चाहिए।

चावल, दाल और तरकारी को आग पर पकाने के समय कई बातों का ध्यान रखना चाहिए:—

१—आग अधिक तेज न हो।

२—जिस बरतन में वे चीजें बनायी जायँ, उनको सदा ढँककर रखा जाय।

३—आग इतनी न जलाई जाय जिससे बार-बार उबाल आवे ।

४—उनके बनाने में आरंभ में ही इतना पानी छोड़ा जाय जो अधिक न हो और जिसके निकालने की आवश्यकता न पड़े।

५—अधिक पकाने की अपेक्षा इन वस्तुओं का उबला हुआ होना अधिक अच्छा होता है अर्थात् अधिक समय तक आग पर रखने से भी उनके विटामिन्स नष्ट होते हैं।

६—बनाने के बाद आग से उतार लेने पर भी उनके बरतन को ढँककर ही रखना चाहिए। नहीं तो निकलनेवाली भाप के साथ विटामिन्स नामक तत्व उड़ जाते हैं। भोजन बनाने के सम्बन्ध में इन सभी बातों की सावधानी रखने पर ही उनसे पूरा लाभ उठाया जा सकता है ।

आग पर पकाने के पहले

भोजन को आग पर पकाने के पहले अनेक बातें समझ लेनी चाहिए। इसके संबंध में एक महत्त्वपूर्ण बात जानने की यह है कि सभी प्रकार के खाद्य पदार्थ आग पर पकाए नहीं जाते। आज की नवीन खोज में स्पष्ट रूप से यह कहा जा रहा है कि सूर्य की धूप में पके हुए पदार्थ ही मनुष्य के भोजन हो सकते हैं। यह भी बताया जा रहा है कि आग पर पकाने से भोज्य पदार्थों की स्वाभाविकता नष्ट हो जाती है।

भोजन के इस सत्य को सर्वसाधारण के ऊपर अभी लादा नहीं जा सकता। आग पर पकाने की प्रथा यदि गलत है तो एक दिन वह आवेगा, जब मनुष्य-समाज उसे स्वीकार करेगा। मैं स्वयं उस पर विश्वास करती हूँ। लेकिन यहाँ पर उसके सम्बंध में मैं किसी प्रकार की विषमता नहीं पैदा करना चाहती। इसलिए उसके सम्बध में मैं यहाँ पर अधिक न लिखूँगी ।

भोजन को आग पर पकाने के पहले कुछ बातों के समझने की आवश्यकता होती है। यदि उनका ध्यान न रखा गया तो बाद में उसकी उपयोगिता से वंचित रहना पड़ता है। इसलिए जिन बातों का ध्यान रखना चाहिए, उनमें से कुछ इस प्रकार हैं:—

(१) जो वस्तु भोजन के काम में लाई जा रही हो, वह भली भाँति देख

ली जाय। इसलिए कि सड़ी गली वस्तुएँ लाभ पहुँचाने के स्थान पर हानिकारक सिद्ध होती हैं।

(२) बाजार में खरीदने के समय प्रायः लोग सस्तेपन पर अधिक ध्यान देते हैं, फल यह होता है कि सस्ते भाव में मिलने के कारण प्रायः ऐसी चीजें आ जाती हैं, जिनसे स्वास्थ्य नष्ट होता है और रोगों की उत्पत्ति होती है।

(३) खाने की जो वस्तुएँ नौकरों या दूसरों के द्वारा मँगाई जाती हैं, वे प्रायः अच्छी नहीं आतीं। सस्ती चीजें लाकर नौकर कुछ फायदा उठाना चाहते हैं और दूसरों के द्वारा मँगाई हुई चीजें यदि खराब आ जायँ तो आश्चर्य ही क्या है। इसलिए कि ऐसे लोग बहुत कम होते हैं जो दूसरों के कामों में सहृदयता, सहानुभूति और परिश्रम से काम लेते हैं।

(४) पकाने के पहले उन चीजों पर ध्यान देना चाहिए, जिनको पकानेवाला पकाने जा रहा है और एक बार सोच ले कि खानेवालों की आवश्यकता के अनुसार उनमें से कोई वस्तु अहितकर और अनिष्टकर तो नहीं हो सकती।

(५) सभी वस्तुएँ आग पर पकाने की नहीं होतीं। जो पकाई जा सकती हैं, उन्हीं को आग पर पकाना चाहिए, किन्तु जो नहीं पकाई जातीं, उनके पकाने की आवश्यकता नहीं होती। इसके संबंध में स्पष्ट रूप से जान लेना चाहिए कि अधिकांश फल आग पर नहीं पकाए जाते और जिन फलों को लोग आग पर पकाते हैं यदि वे बिना आग पर पकाए खाए जा सकें तो वे अधिक उपयोगी हो सकते हैं। इसी प्रकार खाने की और भी बहुत-सी वस्तुएँ आग पर नहीं पकाई जातीं और उसी अवस्था में वे स्वादिष्ट और हितकर सिद्ध होती हैं।

इस प्रकार कितनी ही बातें ऐसी हैं जिनका ध्यान पहले से ही कर लिया जाय और उसके बाद भोजन की चीजों को आग पर पकाया जाय तो अधिक अच्छा होता है। इसी सिलसिले में एक बात और जान लेने की है। आग पर पकाने के पहले पकाई जानेवाली वस्तुओं पर जब ध्यान दिया जाता है तो सभी आवश्यक बातें सामने आ जाती हैं। उदाहरणार्थ शाक अपने ही पानी में पकाए जाते हैं। उनको ऊपरी पानी की आवश्यकता नहीं होती। यदि बनानेवाला पहले से ही उसके संबंध में ध्यान देता है तो फिर उससे इस प्रकार की भूल

नहीं होती। इसी प्रकार की और भी कितनी ही बातें हैं जिनके कारण यह आवश्यक होता है कि पहले सभी प्रकार की बातें सोच-समझ ली जायँ, उसके बाद उनके बनाने का कार्य आरभ हो।

भोजन करने का समय

भोजन करने का कौन-सा समय होता है, इसके संबध में अनेक प्रकार के विचार सुनने में आते हैं। समाज की अवस्था यह है कि जिसके सामने जिस प्रकार की सुविधाएँ और असुविधाएँ होती हैं, उन्हीं के अनुसार वह खाने-पीने के समय का निर्णय कर लेता है।

निर्धन परिवारों में खाने के सबंध में जो व्यवस्था देखने में आती है, वह सम्पन्न और धनिक परिवारों में नहीं होती। इसी प्रकार अधिक व्यस्त व्यक्ति खाने-पीने का कोई नियम नहीं रखते। किन्तु धनिकों और बड़े घरों में कुछ निश्चित समय खाने-पीने के संबध में समझे जाते हैं।

साधारण तौर पर जो लोग काम-काजी होते हैं, वे अपने समय के अनुसार भोजन करने के समय का निर्णय करते हैं। उदाहरण के तौर पर एक आदमी गवर्नमेंट फैक्टरी में नौकरी करने जाता है। प्रातःकाल सात बजे उसकी हाजिरी होती है। फैक्टरी से दूर रहने के कारण, उसे एक घण्टा अथवा डेढ़ घण्टा पहले ही घर छोड़ देना पड़ता है। और सायंकाल लगभग सात बजे वह अपने मकान पर लौटकर आता है। इसलिए शाम का भोजन लगभग आठ बजे उसे कर लेना पड़ता है और दिन में किया जानेवाला भोजन उसे प्रातःकाल पाँच बजे के लगभग करना पड़ता है।

अब सोचने की बात यह है कि सवेरे पाँच बजे भोजन करने का कोई समय नहीं होता। फिर भी उस आदमी को अपनी विवश अवस्था में करना पड़ता है। इस प्रकार की बात किसी एक ही आदमी की नहीं है। इस प्रकार की परिस्थितियों में पड़े हुए न जाने कितने लोगों को असमय ही भोजन करना पड़ता है।

यह बात हुई एक साधारण आदमी की अथवा उन आदमियों की जिनके पास कार्य की परिस्थिति के अनुसार समय का अभाव होता है। अब उन लोगों की ओर देखा जाय, जिनके जीवन में किसी प्रकार के बंधन नहीं होते। जमींदार और सम्पत्तिशाली चौबीस घंटे लेटे रहकर निकम्मों का जीवन बिताते हैं।

इस प्रकार के लोग दिन में एक-दो बार भोजन नहीं करते, कई बार करते हैं। खाने का उनके पास कुछ अभाव नहीं होता। बनानेवाले उनकी आज्ञा का रास्ता देखा करते हैं। इस अवस्था में जिस समय उनको याद आता है, उसी समय कुछ-न-कुछ भोजन उन्हें खाने को मिल जाता है।

इस प्रकार की तमाम बातों से इस बात का निश्चय नहीं होता कि भोजन करने का समय क्या होता है। साधारण तौर पर भोजन करने के तीन समय माने जाते हैं। सुबह, दोपहर और शाम।

सुबह जो भोजन किया जाता है, उसे जलपान करना कहते हैं। इन तीनों समयों पर भोजन करने की आम तौर पर समाज में एक प्रथा पायी जाती है। कुछ नियम इसी प्रकार का है किन्तु कारण और परिस्थितियों के वश यदि इस नियम का पालन न किया जाय तो वह दूसरी बात है।

मेरी समझ में भोजन करने का कोई निश्चित समय न होना चाहिए। जिस समय भूख लगे, वही समय भोजन का होता है। यद्यपि ऐसा करने से भोजन बनाने की व्यवस्था में बाधा पड़ती है। इसलिए यह आवश्यक मालूम होता है कि भोजन बनाने का समय तो निश्चित होना चाहिए और उसी के हिसाब से भोजन करने का समय भी हो। लेकिन इस बात का ध्यान रहे कि भोजन करनेवाला यदि भूख का अनुभव नहीं करता तो उसे उस समय तक भोजन न करना चाहिए जब तक उसे खुलकर भूख न लगे।

कितनी बार भोजन करना चाहिए ?

यह तो ठीक है कि भोजन नियमित ही करना चाहिए, परन्तु इसके नियम सभी के साथ एक ही रूप में काम नहीं करते। कहने का अभिप्राय यह है कि भोजन के संबंध में बहुत-से नियम देखे हैं, जिनसे सभी की आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो सकतीं।

इस प्रकार के नियमों में बहुत-सी बातें हैं। न तो भोजन का परिमाण सभी के लिए एक हो सकता है और न यही निर्धारित किया जा सकता है कि मनुष्य को कितनी बार भोजन करना चाहिए। इस प्रकार की सभी बातें मनुष्य की अवस्था और उसके कार्य पर निर्भर हैं। स्कूल में पढ़नेवाले विद्यार्थी का भोजन उसी अवस्था के किसी कृषक बालक के समान नहीं हो सकता। दफ्तरों में लिखने-

पढ़नेवाले बाबुओं का भोजन परिमाण में बहुत-कुछ विरोधी होता है, परिश्रम-शील व्यक्तियों के भोजन के परिमाण से। जिस प्रकार पढ़ने-लिखनेवाले आदमियों का भोजन अथवा उसका कोई नियम आपस में सबंध रख सकता है, उसी प्रकार परिश्रम करनेवाले आदमियों के भोजन में भी किसी प्रकार समता हो सकती है।

कार्य और परिश्रम करने से शरीर की शक्तियों का जो ह्रास होता है, उस क्षति को पूरा करने के लिए भोजन करने की आवश्यकता पड़ती है। परिश्रम-हीन व्यक्तियों की अपेक्षा, परिश्रमशील व्यक्ति अधिक भोजन करते हैं, उसका यही कारण है। परिश्रम के द्वारा उनकी शक्तियों का जो क्षय होता है, उसको पूरा करने के लिए यदि उन्हें तुरन्त भोजन न मिले तो उनमें कार्य करने की शक्ति जाग्रत न हो अतएव कुछ देर के बाद उन्हें अपना कार्य करना बन्द करना पड़े। वे उसी अवस्था में अपने कार्य को जारी रख सकते हैं जब वे पेट भर भोजन पा जाते हैं।

जिन्हें शारीरिक श्रम कम करना पड़ता है अथवा बिल्कुल नहीं करना पड़ता, उनको एक बार का किया हुआ भोजन भी हज़म करना कठिन हो जाता है। उन्हें भूख नहीं लगा करती। बिना भूख के यदि वे कुछ खा लेते हैं वो उन्हें अपना पेट भारी मालूम होता है। खट्टी डकारें आने लगती हैं। शरीर की स्फूर्ति मारी जाती है। इन सभी बातों से बचने के लिए इस प्रकार के लोग सुपाच्य भोजन कम मात्रा में करते हैं। इस पर भी उनका भोजन जब तक पच नहीं जाता तबतक वे दुबारा भोजन करने का साहस नहीं करते।

ऊपर की विवेचना से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि मनुष्य जितना ही परिश्रम करता है, उतना ही वह भोजन करता है। और जो लोग परिश्रम नहीं करते वे कम भोजन करते हैं। यहाँ पर परिश्रम से मेरा अभिप्राय शारीरिक परिश्रम से है। मानसिक श्रम दूसरी बात है। मानसिक परिश्रम करनेवालों का श्रम और जीवन दूसरी ही तरह का होता है। इसीलिए उनकी समता शारीरिक परिश्रम करनेवालों के साथ नहीं की जा सकती।

भोजन के समय मन की अवस्था

सम्पूर्ण शरीर पर मन का शासन काम करता है। इसीलिए कहा जाता

है कि मन शरीर का राजा है। मन के भाव जब दूषित होते हैं, तो शरीर का प्रत्येक अंग विकृत और दूषित हो जाता है। यही कारण है कि जब किसी कार्य के अनुकूल मनुष्य के मनोभाव नहीं होते, तो वह कार्य जिस प्रकार सम्पादित होना चाहिए, कभी नहीं हो पाता।

भोजन करने के समय चित्त का प्रसन्न और शान्त होना आवश्यक है। उस समय किसी प्रकार की चिन्ता का भाव मन में न होना चाहिए अन्यथा शरीर के छोटे और बड़े अंगों में दोष और विकार उत्पन्न हो जाते हैं और भोजन करने का कार्य ठीक ठीक नहीं होता।

क्रोध की अवस्था में भी भोजन करना अच्छा नहीं है। बहुत कम लोग ऐसे होंगे जो क्रोध और आवेश के समय खाना खा सकेंगे। साधारणतः क्रोध का प्रभाव मन के ऊपर इतने विकृत रूप में पड़ता है जिससे सम्पूर्ण ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ उस समय अकमण्य हो जाती हैं। बुद्धिमान् मनुष्य भी अपने विवेक को खो देता है। कर्त्तव्य को भूल जाता है। भूख और प्यास उस समय मारी जाती है और जब तक क्रोध का आवेश शान्त नहीं होता उस समय तक कुछ खाने और पीने की इच्छा नहीं होती।

इसी प्रकार मन की अनेक परिस्थितियाँ हैं, जिनमें मनुष्य अपनी वास्तविक स्थिति से बिल्कुल भिन्न हो जाता है। जैसे भयभीत अवस्था में मनुष्य की जो दशा होती है, उसमें भी वह कुछ-का कुछ हो जाता है। इस प्रकार क्रोध, भय, लज्जा, ईर्ष्या आदि में से किसी एक का भी जब मन के भावों पर प्रभाव हो तो भोजन न करना चाहिए। उस समय अपने आप खाने और पीने की इच्छा नहीं होती और यदि इच्छा के विरुद्ध, किसी के कहने-सुनने से भोजन करना पड़ा तो वह अनेक प्रकार के विकार उत्पन्न करके शरीर में क्षोभ और व्यथा के पैदा होने का कारण हो जाता है। इसलिए न तो स्वयं इस प्रकार की परिस्थितियों में भोजन करना चाहिए और न किसी को भोजन करने के लिए विवश ही करना चाहिए। उसका प्रभाव अच्छा नहीं पड़ता।

मन की इन विकृत परिस्थितियों में भोजन करने की इच्छा नहीं रहती, इसका सभी समर्थन करेंगे। यद्यपि कुछ ऐसे उदाहरण भी आते हैं जिनमें इस प्रकार के परिणामों का प्रदर्शन नहीं होता। मैंने स्वयं एक-दो बार ऐसे मनुष्य

गो देखा है जो अपने घर की भयकर से भयंकर आपस की लड़ाई के समय भी खाना खा सकते थे। उनके मनोभावों पर रोष, आवेश और घृणा का कोई प्रभाव काम नहीं करता था, यद्यपि ऐसा होना स्वाभाविक नहीं है, फिर भी संसार में सभी प्रकार के मनुष्य पाए जाते हैं किन्तु इस प्रकार की घटनाएँ साधारण समाज के लिए उदाहरण नहीं बन सकतीं, इसीलिए इनका कोई स्थान नहीं होता।

भोजन करने का लाभ उसी अवस्था में अच्छा होता है, जब मनुष्य की मानसिक वृत्तियाँ शाँत और प्रसन्न होती हैं। किसी के साथ न तो क्रोध होता है और न ईर्ष्या का भाव। भोजन करते समय किसी की कड़ी आलोचना करना भी उचित नहीं होता और यदि उस समय कोई दूसरा ही अपनी आलोचना अपमानपूर्ण करता है तो मन के भाव दूषित हो जाते हैं। और उस अवस्था में जो भोजन किया जाता है, उसके विकृत होने की सभावना अधिक होती है। इसलिए भोजन करने के समय मन के भाव जैसे होने चाहिए, उनका विवेचन कुछ इस प्रकार है :—

(१) मन के भाव शुद्ध होने चाहिए। न अधिक प्रसन्नता हो और न किसी प्रकार का मानसिक क्षोभ।

(२) भय, क्रोध, लज्जा और ईर्ष्या जैसी दूषित भावनाओं के समय भी भोजन करना अच्छा नहीं होता।

(३) किसी के द्वारा अपमानित होने की अवस्था में भी भोजन न करना चाहिए।

(४) अपने निकट किसी दुर्घटना के घटने के समय भी भोजन न करना चाहिए।

(५) यदि किसी से लड़ाई-झगड़ा हो गया हो तो भी उस समय तक खाना न खाना चाहिए, जब तक मन की विकृत भावनाएँ शांत न हो जायँ।

यदि मानसिक भावनाओं का ध्यान रखे बिना भोजन कर लिया जाय अथवा किसी के विवश करने पर भोजन करना पड़े तो मन के दूषित विकारों का प्रभाव उसके ऊपर निश्चित रूप से पड़ता है। इसलिए किसी भी अवाञ्छनीय परिस्थिति के पैदा होने पर उसके परिवर्तन करने का प्रयत्न करना चाहिए। ऐसा

करने में ही किया हुआ भोजन कल्याणकर बनता है। अन्यथा रुचिकर और पौष्टिक पदार्थ भी अपना उलटा प्रभाव उपस्थित करते हैं।

भोजन के विभिन्न रस और उनके कार्य

रुचि-भेद के अनुसार, मनुष्य के सम्पूर्ण भोज्य पदार्थों को छः भागों में बाँटा गया है। इन छः भागों को, छ रसों के नाम से पुकारा जाता है। यही छः प्रकार के रस, षटरस कहलाते हैं। ऐसी कोई भोजन की वस्तु नहीं रह जाती जो इन छः रसों के भीतर न आ जाती हो।

ये रस अपने अलग-अलग गुण और कार्य रखते हैं। मधुर रस, खट्टा रस, नमकीन रस, कडुवा रस, चरपरा रस और कषैला छः प्रकार के रस माने जाते हैं। सक्षेप में समस्त भोजन के पदार्थों की यही छः किस्में हैं। इन किस्मों में—छः रसों में कौन रस क्या काम करता है, इसका जानना सभी श्रेणी के लोगों के लिए आवश्यक है। इसके जानने से मनुष्य बहुत कुछ लाभ उठा सकता है। यदि भोजन के संबध में सावधानी की आवश्यकता है तो वह तभी संभव हो सकती है, जब उनके कार्यों और गुणों का यथावत् ज्ञान हो।

चिकित्सा ग्रन्थों में इन छः प्रकार के रसों पर विस्तृत विवेचनाएँ लिखी गई हैं, लेकिन यहाँ पर उनका विस्तार-पूर्वक उल्लेख करना अनावश्यक है। उन रसों के साथ सर्वसाधारण का जो सबध है, उसी को सामने रखकर निम्नलिखित पक्तियों में उनका विवरण दिया जाता है,

(१) मधुर रस—मधुर रस का अर्थ है मीठा। यह खाने में सभी को प्रिय मालूम होता है। यह रस पुष्टिकारक होता है।

(२) खट्टा रस—पाचन-शक्ति को उत्तेजित करता है। भोजन में रुचि उत्पन्न करता है, रक्त-पित्त और कफ पित्त को पैदा करता है। खाने में यह रस स्निग्ध और अत्यन्त प्रिय होता है।

(३) नमकीन रस—रुचि उत्पन्न करनेवाला और प्रकृति में प्रखर होता है। इससे अग्नि प्रदीप्त होती है, पसीना आता है। आवश्यकता से अधिक जब इसका सेवन किया जाता है तो उससे प्यास बढ़ती है रक्त-विकार पैदा होता है। और शक्ति का क्षय होता है।

(४) कडुवा रस—कीड़ों को नाश करता है। रुचिपूर्ण होता है। इससे

अनेक प्रकार के रोगों का शमन होता है। पित्त और कफ को मिटाता है। यह हल्का होता है और ज्ञान की वृद्धि करता है। इसकी अधिकता से धातु-विकार उत्पन्न होता है और वायु रोग बढ़ता है।

(५) चरपरा रस— रुचिकारक, पाचक और संशोधक होता है इससे अनेक प्रकार के रोग शांत होते हैं। लेकिन अधिक प्रयोग से बल और वीर्य का नाश होता है।

(६) कषैला रस—कफ और पित्त को दूर करता है। ज़ख्म को भरता है। इसकी प्रकृति शीतल और स्वभाव रूखा है। इससे रंग निखरता है। अधिक खाने से दुर्बलता बढ़ती है। पेट फूल जाता है। हृदय निर्बल हो जाता है। और पुरुषत्व को कमजोर बनाता है।

इन छः प्रकार के रसों का शरीर पर जो प्रभाव पड़ता है, उसका उल्लेख ऊपर किया गया है। भोजन में यदि इनका बिल्कुल अभाव होता है तो हानिकारक सिद्ध होते हैं और अधिक मात्रा में खाये जाने पर शरीर में विकार उत्पन्न करते हैं। किससे किस प्रकार की हानि होती है और किस प्रकार का लाभ होता है, इसे भलीभाँति जान और समझकर, उनसे लाभ उठाना मनुष्य की बुद्धिमानी है।

पाचन-कार्य, उसका क्रम और रहस्य

भोजन के संबंध में पाचन-क्रिया का कार्य, बहुत महत्वपूर्ण है। इस क्रिया पर ही भोजन की विशेषता और अविशेषता निर्भर है। सभी प्रकार के गुण-संपन्न और पौष्टिक पदार्थों का भोजन मिलने के बाद भी यदि पाचन-कार्य यथोचित रूप में नहीं होता तो न तो भोजन की विशेषता का कुछ मूल्य रहता है और न उसकी अनुपयोगिता का।

इस प्रकार भोजन करना यदि पहला कार्य है तो दूसरा कार्य उसका पाचन कार्य है। स्वस्थ और नीरोग जीवन पाचन-कार्य पर आश्रित है। भोजन के बाद जिसके शरीर में पाचन-कार्य सुचारु रूप से होता है, उसके स्वस्थ, नीरोग और शक्तिशाली होने में किसी प्रकार का संदेह नहीं रहता, किन्तु यदि पाचन-कार्य में कुछ त्रुटियाँ होती हैं अथवा उसके संबंध में किसी प्रकार की शिकायत रहती

है तो शरीर से रोगों का निवारण करने में ही जीवन समाप्त होता है। स्पष्ट बा
यह है कि पाचन-क्रिया के विधिवत् काम न करने से ही शरीर में रोग उत्पन्
होते हैं, अनेक प्रकार की व्याधियाँ सताती हैं, शारीरिक कष्टों का सामना करन
पड़ता है और स्वास्थ्य तथा शारीरिक सुखों के लिए तरसना पड़ता है।

जो कार्य हमारे शरीर में इतना महत्त्वपूर्ण और आवश्यक है, उसे जानन
और समझना भी हमारा सबका काम है। लेकिन हम लोगों में कितने लोग ऐसे
हैं जो उसका ज्ञान रखते हैं। भोजन सभी करना चाहते हैं और स्वादिष्ट भोजन
करना चाहते हैं, परन्तु भोजन के बाद शरीर में उसका क्या काम होता है, किस
प्रकार होता है और किन परिस्थितियों में वह कार्य बनता और बिगड़ता है
इसको जाननेवाले कोई विरले ही हुआ करते हैं। न जानने का परिणाम जो
कुछ होता है, वही हमारे सामने है।

भोजन और उसके पदार्थों के संबंध में सभी प्रकार की जानकारी प्राप्त करने
के बाद यह भी समझने की आवश्यकता है कि पेट के भीतर किस प्रकार उसका
पाचन कार्य होता है और उसके पौष्टिक अंश कैसे शरीर के काम में आते हैं
इन बातों के जानने का मुख्य अभिप्राय यह है कि जहाँ तक संभव हो सके
पाचन-कार्य में हम सुविधाएँ पहुँचावें और किसी प्रकार की त्रुटि न आने दें।

कहनेवाले कह सकते हैं कि पाचन क्रिया में मनुष्य क्या सुविधाएँ पहुँचा
सकता है। वह कार्य तो प्राकृतिक है। अपने हाथ में कुछ नहीं है। वह तो
होता ही रहता है। यह कहना लोगों का कुछ अर्थ नहीं रखता। एक दो नहीं
न जाने कितनी ऐसी बातें हैं, जिनका हमसे संबंध है और उनका प्रभाव पाचन
क्रिया पर पड़ता है। यदि हम उसकी आवश्यकता और व्यवस्था को देखकर
सावधानी से काम न लें तो हमारे पाचन-कार्य में सहज ही अनेक प्रकार की
त्रुटियाँ उत्पन्न हो सकती हैं और उनके फलस्वरूप पाचन-कार्य नियम के विरुद्ध
कार्य करने के लिए विवश हो सकता है।

उदाहरणार्थ किया हुआ भोजन पच नहीं सका, और पाचन-कार्य करनेवाली
इन्द्रियाँ उसमें व्यस्त हैं तो यह आवश्यक होता है कि एक बार का किया हुआ
भोजन जब तक ठीक-ठीक पच न जाय, उस समय तक दूसरी बार भोजन न
किया जाय। नियम यह है कि भूख लगने पर ही भोजन करना चाहिए और

भूख का लगना उसी समय संभव होता है, जब पिछली बार किए गए भोजन का पाचन-कार्य समाप्त हो जाता है। यदि इस नियम की उपेक्षा की जाय और भूख न लगने पर भी बराबर भोजन किया जाय तो पाचन-कार्यश्र नियमित हो जायगा और तुरत किसी-न-किसी प्रकार के रोग का शरीर पर आक्रमण हो जायगा।

पाचन-कार्य करनेवाले अंग

भोजन के बाद पेट में भोजन के पचाने का जो कार्य होता है। वह पाचन-कार्य कहलाता है और जिन अगों के द्वारा वह कार्य पूरा होता है, उन्हें पाचक अग अथवा पाचक इन्द्रियाँ कहते हैं।

जो भोजन किया जाता है, पेट में पहुँचने पर उससे उपयोगी तत्वों और पौष्टिक अंशों को अलग करके बाकी भाग मल के रूप में पृथक कर देना पाचन-कार्य है। इस कार्य में दाँत, दाढ़ें, लार देनेवाला लालापिण्ड, यकृत, स्वाद-ग्रंथि नामक इन्द्रियाँ और जठराग्नि कार्य करती हैं।

पाचन-कार्य का प्रारभ दाँतों से होता है। दाँत और दाढ़े मुँह में भोज्य-पदार्थों के पीसने का काम करती हैं। जिस समय दाँतों को यह कार्य करना पड़ता है, उस समय लार उसमें मिलकर उसे पचने के योग्य बनाने का काम करती है। इस पुस्तक में पहले ही लार देनेवाली ग्रन्थियों का उल्लेख किया जा चुका है। उनकी संख्या छः होती है। दो कानों के सामने, दो दोनों जबड़ों की ओर और दो जीभ के नीचे होती हैं। इनके सिवा मुख के अन्तर भाग में कितनी ही गोलियाँ होती हैं, वे भी लार उत्पन्न करने का काम करती हैं। दाँतों के काम आरंभ करने पर इन ग्रन्थियों और गोलियों से लार आकर दो प्रकार के काम करती है:

१-मुँह में उपस्थित भोजन के अश में मिलकर उसे गीला बनाती है, जिससे वह दाँतों और दाढ़ों के द्वारा सरलतापूर्वक पीसा जा सके।

२–इस लार में पचाने का एक ऐसा तत्व होता है, जिससे भोजन के पदार्थ पक्वाशय में पहुँचते ही आसानी से गल जाते हैं।

भोजन की वस्तुओं को दाँतों से कुछ देर तक चबाने और पीसने का यही उद्देश्य है। यदि इसमें असावधानी से काम लिया जाता है, अथवा जल्दबाजी की जाती है तो भोजन के पाचन-कार्य में कठिनता उत्पन्न होती है। जो लोग

खाना खाने में बहुत जल्दी करते हैं, वे भोजन के नियमों को भंग करते हैं। जिनकी पाचन-क्रिया ठीक-ठीक काम नहीं करती, उन्हें विशेष रूप से इस ध्यान देना चाहिए।

यह सही है कि जो भोजन किया जाता है, उनमें से अनेक वस्तुएँ सरलता-पूर्वक पचती हैं। परन्तु उसके बाद भी भोज्य पदार्थ को सुपाच्य बनाने का कार्य दाँतों, दाढ़ों, लार देनेवाली ग्रन्थियों और गोलियों से भी होता है। दाँत जितना ही पीसने का काम करेंगे, लार उतनी ही अधिक उसमें मिलकर, उसे पचने के योग्य बना सकेगी।

यह लार हमारे भोजन में बहुत आवश्यक कार्य करती है। इसमें कुछ खारापन होता है। और उसका अन्तर्राहित क्षार अंश भोजन की वस्तु को गलाने का काम करता है। यह लार उस समय भी निकलती रहती है, जब मनुष्य बातें करता है किंतु भोजन के समय उसकी अधिक मात्रा निकलकर भोजन में सम्मिलित होती है।

पाचन-स्थान

मुँह में कौर जाने पर दाँतों के द्वारा उसकी पिसाई होती है और साथ ही, लार आकर पीसने में उसकी सहायता करती है। लार की उपयोगिता पहले लिखी जा चुकी है। इसे दूसरे शब्दों में पाचक रस कहते हैं।

मुँह का काम समाप्त होने पर, कौर गले के मार्ग से नीचे उतर जाता है और उस स्थान पर पहुँचता है, जहाँ उसके पकाने का कार्य आरम्भ होता है, उस स्थान को पक्वाशय या पाकाशय कहते हैं। यहाँ पर लार अर्थात् पाचन-रस का काम बराबर जारी रहता है। पाचन-रस पानी की भाँति पतला, रंग में मटमैला और स्वाद में खट्टा होता है।

पाकाशय में आए हुए भोजन का मंथन-कार्य होता है। इस रस में कीटाणु नाश करने की अद्भुत शक्ति होती है। इस रस में लार और अन्य रस का जो मिश्रण होता है, उन्हीं से कीटाणुओं का नाश होता है। यह तो सभी को मालूम है कि चटनी और अचार की कितनी ही चीजें कुछ दिनों तक और कितने ही महीनों तक खराब नहीं होतीं और न उनमें कीड़े पड़ते हैं।

मुँह से लेकर पाकाशय तक लार अर्थात् पाचक-रस के भोजन में मिलने

का काम होता है, यदि भोजन में इस रस के मिलने में किसी प्रकार की कमी होती है तो भोजन पचने में कठिनाई पैदा करता है, परिणाम यह होता है कि पेट में मन्दाग्नि का विकार उत्पन्न हो जाता है। मन्दाग्नि के रोगियों के पेट प्रायः कीड़े पैदा हो जाते हैं। इसका यह अर्थ है कि पाकाशय में भोजन पहुँचने पर पाचक-रस का अभाव रहता है। यदि इस रस की कमी न होती तो न कीड़े पड़ते और न मन्दाग्नि का रोग उत्पन्न होता। क्योंकि वे लार के द्वार और अम्लाश से नष्ट हो जाते हैं।

पाकाशय में मंथन का कार्य समाप्त होने पर उस भोजन में पित्त का मिश्रण होता है। मनुष्य के दाहिनी ओर पेट के ऊपर एक पिण्ड होता है, इस पिण्ड को यकृत (Liver) कहते हैं। इसी यकृत में पित्त पैदा होता है। उसके नीचे के भाग में थैली की भाँति एक छोटा-सा पिण्ड होता है, उसी में पित्त का संचय होता रहता है। इसे पित्ताशय कहा जाता है। भोजन के पचाने के लिए इस प्रकार अनेक रस उसमें मिलते हैं और उसको पचाने का कार्य करते हैं। पित्त रेचक और कीटाणु-नाशक भी होता है। अंत में सभी के मिलने पर जो रस तैयार होता है वह पक्वाशय रस कहलाता है। इस रस में अनेक प्रकार के द्रव्य होते हैं। और वे सभी पाचन-कार्य में सहायता करते हैं।

पाचन-क्रिया का यथार्थ वर्णन बहुत विस्तार चाहता है। और उसका संबंध चिकित्सा-विज्ञान के साथ है। इसलिए उस विस्तार की न तो यहाँ पर आवश्यकता ही है और न सर्वसाधारण को उससे कुछ लाभ ही हो सकता है। यहाँ पर साधारण जानकारी की आवश्यक बातें दी जा रही हैं।

पाचन-क्रिया के द्वारा भोजन में से पोषक रसों को निकाल कर शेष भाग अलग कर दिया जाता है जो मल कहलाता है, निरुपयोगी होने के कारण उन्हें बाहर फेंकने का काम प्रकृति के नियमानुसार शरीर के भीतर, अपने आप होता रहता है। भोजन के बाद पाचन होने और उससे मल बनने में, छत्तीस घण्टे का समय लगता है। अधिकारियों का यह कहना है।

सुचारु रूप से पाचन-कार्य न होने से अपच होकर मन्दाग्नि पैदा हो जाती है। अपच और मन्दाग्नि प्रायः सभी बीमारियों के उत्पन्न होने का एक मात्र कारण है। स्वस्थ्य और नीरोग जीवन बिताने के लिए अपच और मन्दाग्नि को

चाना बहुत आवश्यक है। जिसका पाचन-कार्य ठीक-ठीक काम करता है, उसे और रोगों से कोई सबंध नहीं रहता। बीमारियाँ तो केवल उन्हीं को होती हैं, जिनको भोजन के पचाने की शक्ति नहीं होती। लेकिन नियमों को भंग करने से अथवा भोजन में मनमानी करने से, पाचन-कार्य में बाधा उत्पन्न होती है। रोगों से बचने के लिए विशेष रूप से इस बात की आवश्यकता है कि अपच और मंदाग्नि की शिकायत पैदा न होने पावे। इसके लिए निम्नलिखित बातों पर सदा ध्यान देना आवश्यक है :—

(१) अपनी पाचन शक्ति को देखकर भोजन करना चाहिए।

(२) भोजन की मात्रा न तो बहुत अधिक हो और न बहुत कम।

(३) गरिष्ठ भोजन अपच पैदा करता है। इसलिए जिसकी पाचन-शक्ति दुर्बल हो, उसे ऐसे भोजनों से बचना चाहिए।

(४) भूख लगने पर ही भोजन करना चाहिए। भोजन का समय आ जाने पर भी यदि भूख न हो तो भोजन न करना चाहिए।

(५) अपच होने पर उपवास कर लेना बहुत आवश्यक है। यदि कोष्ठबद्धता या कब्ज बढ़ गया हो और कई दिनों का हो तो एक या दो दिनों का उपवास करके आराम ले लेना बहुत आवश्यक है।

(६) अपच की अवस्था में यदि उपवास करना पड़े तो जल पीने के सिवा और कोई वस्तु न खानी चाहिए।

(७) भूख न लगने अथवा अपच होने पर किसी के कहने से भी भोजन न करना चाहिए। कभी कभी ऐसा होता है कि अपनी इच्छा तो खाने की नहीं है लेकिन किसी के आग्रह करने पर भोजन कर लिया जाता है, वह बहुत हानिकारक सिद्ध होता है।

पाचन-क्रिया की सहायता

भोजन का ठीक-ठीक परिपाक होने के लिए दो बातों की आवश्यकता है। एक तो यह कि अपच उत्पन्न करनेवाले भोजन के पदार्थ न खाए जायँ और दूसरी बात यह कि भोजन करने के समय खूब चबा-चबाकर भोजन किया जाय। जिनके पास समय का अभाव होता है अथवा जिनके स्वभाव में जल्दबाजी होती

है, ऐसे लोग बहुत जल्दी खाना खाते हैं। कुछ लोगों की जल्दबाजी देखकर कभी कभी आश्चर्य होता है।

भोजन करने में जल्दी करनेवालों को मैंने समझने की कोशिश की है। उनकी इस जल्दबाजी का कोई विशेष कारण नहीं होता। उनकी आदत ही कुछ ऐसी होती है, जिसके कारण वे इतनी जल्दी भोजन कर लेते हैं। देखने वालों को मालूम होता है, जैसे वे आधा पेट भी भोजन न खा सके हों। पर ऐसी बात नहीं होती।

इस प्रकार के लोगों का स्वास्थ्य अच्छा नहीं होता। ऐसे लोग वर्ष में अनेक बार बीमार पड़ते हैं। उनके इस रोगी जीवन का कारण उनके पाचन-कार्य की निर्बलता है जिसको उन्होंने अनियमित बना रखा है।

विवरण-पत्र

खाद्य वस्तुओं में सभी प्रकार के तत्वों का विवरण

खाद्य पदार्थ	जल	पोषकतत्त्व	शर्करा	चर्बी	लवण	विटामिन ए	बी	सी	डी
दूध और उससे बनी वस्तुएँ									
स्त्री	८८.०	२.६७	५ ८७	२.६०	.१६	++	+	+	
गाय	८६.८	४०	४८	३.७	७	+++	++	+	+
भैंस	८१.२	४.४	४६	६०	८	+++	+	+	+
बकरी	८७ ५४	३ ६२	४०	४ २०	.१६	+++	+	+	+
भेड़	८२ २७	७.१०	४ २०	५ ३०	१.०	+++	+	+	+
जमा दूध	२८ ९४	६ ६८	५४ ५३	८.६	१ ६५	+	+	+	
दही	८७ ८४	४.७७	२.८	३.५७	·६२	++	+++	+	
मठा	९२	३.०३	४.८	७.०५		+	++	+	
मक्खन	७.५	१ ५		६० ५	१ ०	+++	+	+	
घी		१ ०		९९ ९	०.१	+++	+	+	
मलाई	६६.०	२७	२८	२७७	१८	+++	++	+	
पनीर	३६ ०	३१ ०		२८.५	४५	++	+	+	
छेना	५८.७२	२१.६८	० २८	१६ ८	१.६८	++	++		
अनाज									
गेहूँ	१४ ०	१४ ६	६७ ९	१ २	१.६	+	++		
गेहूँ आटा	१४ ६५	११ ५	६७ १	२ ९	३ ८५	+	++		
मैदा	१५ ०	१० ०	७१ २	२.	०.८		+		
जौ	११ ३	१२ ७	७१.०	२	३.	+	++		
गेहूँ भूसी	..	...	. . . .	...	.	+	++		...
मकई	१३ ५	१०	६४ ५	६ ७	१ ८	+	++	...	.
ज्वार	७२	१४२	६९ ४	७३	१ ९	+	++	.	...
बाजरा	१२.३	१० ४	७० २	३ ९	२२	+	++	...	..
बासमती चावल	१२ ४	६ ६८	८० १	९	.६८	+	++	..	...
बिहारी चावल	१० ८२	७ ९२	७८ २५	१ २६	१ २	...	. ..	.	...

खाद्य पदार्थ	जल	पोषक	शर्करा	चर्बी	लवण	विटामिन ए	बी	सी	डी
वंघइया चावल	१० ८३	९ १०	७७ १३	१ २३	८६	..	......	...	. .
बालम चावल	१२ ५	७ ५	७८ ४९	४०	७६	...	... ..	...	..
रंगूनी चावल	१० ३२	६.८३	७९.८०	८२	८०	.	......		..
चावल का कना	०	०	०	०	०	+	++		
चना	११.५	२१.७	५९ ०	४२	३ ६	+	++	++	..
चना दाल	९.५८	२३ ६६	६०.०२	४ ३०	२ ४४	.. .	...		..
मटर हरे	७८ १	४	१६.५	०.५	० ९	+	++	++	.
सूखे मटर	१५ ०	२२ ०	५३ ०	२ ०	२ ८	+	++	...	...
हरी मूँग	११ ८	२३ ८	५८ ८	२ ०	९ ०	+	++	—+	...
काली मूँग	१० ८	२२ २	५५ ५	१.४	५ ८	+	++	. ..	...
भुनी मूँग	५ १	२५ ५	५८ १	२ ७	१० २	+	++	...	.
मसूर	११ ८	२५.१	५८ ४	१ ३	३.४	+	++		...
अरहर	१० ८	२७ ६७	५७.२७	३ ३१	५ ५	+	++	...	..
लोबिया	१० १	२२ ७	५५,८	२ २	९ २	+	++	...	---
उरद	१३.१	२५.५	५६.४	१ ७	३ ३	+	++		...
खेसारी	१२ ७४	२८ ०८	५१.३८	२.३८	२ ८	+	++	. .	...
साग सब्जी और तरकारियाँ									
आलू	७४	२	२१	१६	१.	+	++	++	..
उबले आलू	८० १	२.७	१४ ६	८	१.८	...	++	++	+
रतालू	७४ १	.७८	२१ १७	३ ३१	५२	++	+	...	...
गाजर	८८ २	.८७	७ २८	३ ०८	६८	++	++	++	.
सूरन	८० ६	.२ २९	१२ ८	२ ८६	१ ४		......		.
मूली	९५ ७	२१	३ ३८	०६	६८	+	+	+	...
शकरकंद	८१.२९	१ ८२	११ ९५	१ ९०	१ ४६	..	..	..	-
प्याज		१ ३०	१० ८१	११		...	++	++	...
लहसुन		६ ८५	२८ २१	१		+	+	++	

खाद्य पदार्थ	जल	पोषक	शर्करा	चर्बी	लवण	विटामिन ए	बी	सी	डी
शलजम	८७	८४	११८	५४	११९	+	++	+++	...
कच्चा कटहल	६३ ४१	८५२	१६ २८	९४	१ ६५				..
मटर फली	७८ ४४	६ ३५	१२२	५३	८१	++	++	++	..
बैंगन	९२ ६५	८६	३ ४८	१ ४८	१.३८		+	+	.
भिण्डी	९० ४	१ ९६	५ ७२	११	०८	...	.	...	...
कुम्हड़ा	९३ ४०	९०	११ ४१	२.०१	१.३	..	..	..	..
फूल गोभी	९२.	५	२०		७	+	++	+	...
बंद गोभी	९१	१.८	५ ८	०५	७	++	+++	+++	.
पालक			०५		२४	+++	+++	+++	..
लौकी	९५४	०८	३१	०२	०५	...	...	...	...
परवल	९० ६४	०७५	३८६	३६	८४		+	+	..
कच्चा केला	७९	१ ३१	१६८	२७	१७	+	+	++	...
टमाटर	९४ ७३	८	३ ६	४९		++	+++	+++	...
टिण्डे	९० ४	१ ९१	५ ७२	१ ११	८		+	+	.
मेथी	९२	३ ३९	२	१ ६	१	..	...	...	...
कटहल कोए	४६.४६	१३ १४	३१.२	१ ९८	२ २७	.	...	...	...
गाँठ गोभी	८७	० ८४	११.४	५४	११	..	+	+	...

फल और सूखे मेवे

खाद्य पदार्थ	जल	पोषक	शर्करा	चर्बी	लवण	विटामिन ए	बी	सी	डी
कच्चा आम	९० ५९	.५९	३,३८	'	२७	..	...	..	...
पक्का आम	७५.५	१२	१७ ५८	७६	.१२	+	+	++	...
लँगड़ा आम	८१ ३३	१ ६४	१८ १०	८२	८४	.	..		...
सेव	८३ ५	३९	७ ७३		.३१	+	++	+++	...
अमरूद	७४ ५२	५९	२४ ३६		५३	+	++	++	...
केला	७१ ४७	१८	१४ १५	१३	९७	+	+	+	...
" नीबू	८८ २५	० ४४	६ ६२	७७	९	+	++	+++	..

खाद्य पदार्थ	जल	पोषक	शर्करा	चर्बी	लवण	विटामिन ए	बी	सी	डी
वेल	७८७६	६६	१६.१४	७२	१ १६	+	+	++	...
लीची	६०.	३.	६ ८	०.२५	·	··	+	++	...
नासपाती	८३ ०३	३६	८ २६	...	० ३१	...	+	+	...
पपीता	...	० ५७	० ३५		...	+	++	++	...
अमरूद	८० ०४		११.२२	१२	.६६	...	+	+	...
सिंघाड़ा	·	८ ६	७४ ७	...	·	...	...	...	...
गन्ना	··	१ ५	२२ १८	० ५७	:	...	...	...	...
नारियल पानी	६५.५२	१ ४१	२ ३८	··	.६३		++		
नारियल गिरी	१६ ०३	५.६८	५ ४६	५३ १८	१ ३६	+	++	+++	+
अनार रस	६१	.६१	६.५	.४	२.३		+	+	
बेदाना अनार	६२.	.६३	७ ६				+	+	
अनन्नास	८० २६	४६	८ १३	.२	१ ६८	++	++	++	
रसभरी	७७ ६६	१ ०७	६ २८	...	८१	...	...	+++	
मकोय	७४ ५२	६	२४ ३५	·	.५३		+	+	
आलू	८०.३	.६५	४ ४८	...	.६६		+	+	
पक्का कटहल कोया	८० ८२	१ १६	१८ ५८	४३	.६६	+	+	+	+
इमली		१.४	३१.२८	...	...		+	+	
सन्तरा		.८८	६.५	.११	,	+	+	++	
नीबू		५	३ १	४		·	+	+++	...
तरबूज	··	३८	६ ७१	२१	·	...	...	+	
अंजीर	१८.८	४ ३	७४ २	० ५	२.२	...	+		
अखरोट	४ ६	१५ ५	७.५	६२ ६	२	+	++	+	+
ादाम	५.८	२४.२	७ २	५३ ७	२.६	+	++	+	+
ूगफली कच्ची	२४.१३	२६ १३	१३.६५	४३.८४	१.५८	+	+	+	
ूगफली भुनी	८ २	२४	८	४७.३	...				
ानी	··	५ ५१	४६ ६१	.३१				+	

खाद्य पदार्थ	जल	पोषक	शर्करा	चर्बी	लवण	विटामिन			
						ए	बी	सी	डी
बेल	७८ ७६	६६	१६ १४	७२	१ १६	+	+	++	...
लीची	९०.	३.	६ ८	०.२५	·	· ·	+	++	...
नासपाती	८३ ०३	३६	८ २६	··	० ३१	...	+	+	...
पपीता	...	० ५७	० ३५	· ·	...	+	++	++	...
अमरूद	८० ०४		११.२२	१२	.६६	...	+	+	· ·
सिंघाड़ा	·	८ ६	७४ ७	· ·	·	...	...	...	· ·
गन्ना	...	१ ५	२२ १८	० ५७	:	...	...	· ·	...
नारियल पानी	९५ ५२	१ ४१	२ ३८	...	.६३		++		
नारियल गिरी	१९ ०३	५.९८	५ ४६	५३ १८	१ ३९	+	++	+++	+
अनार रस	९१	.६१	६.५	.४	२.३		+	+	
बेदाना अनार	९२.	.९३	७ ६	··			+	+	
अनन्नास	८० २६	४६	८ १३	.२	१ ६८	++	++	++	
रसभरी	७७ ६६	१ ०७	६.२८	...	८१	...	...	+++	
मकोय	७४ ५२	६	२४ ३५		.५३		+	+	
आड़ू	८०.३	.६५	४ ४८	...	.६९		+	+	
पका कटहल कोया	८० ८२	१.१६	१८ ५८	४३	.९६	+	+	+	+
इमली		१.४	३१.२८	··	··		+	+	
सन्तरा		.८८	९.५	.११	,	+	+	++	
नीबू		५	३ १	४		· ·	+	+++	· ·
तरबूज	· ·	३८	६ ७१	२१		...	...	+	
अंजीर	१८.८	४ ३	७४ २	० ५	२.२	...	+		
अखरोट	४ ६	१५ ५	७.५	६२ ६	२	+	++	+	+
बादाम	५.८	२४.२	७.२	५३ ७	२.९	+	++	+	+
मूँगफली कच्ची	२६ १३	२६ १३	१३.६५	४३.८९	१.५८	+	+	+	
मूँगफली भुनी	८ २	२४	८	४७.३	...				
लोबानी	...	५ ५१	४६ ६१	.३१	·			+	